INTERNATIONAL BESTSELLER

How To Stop Worrying and Start Living

का हिंदी अनुवाद

चिंता छोड़ो सुख से जियो

डेल कारनेगी

चिंता छोड़ो सुख से जियो

डेल कारनेगी

प्रभात प्रकाशन
ISO 9001:2015 प्रकाशक

प्रकाशक— **प्रभात प्रकाशन प्रा. लि.**
4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002
E-mail: prabhatbooks@gmail.com
www.prabhatbooks.com
© Prabhat Prakashan

READ POPULAR KINDLE BOOKS
OF
PRABHAT PRAKASHAN
ON
amazonkindle

आमुख

यह पुस्तक क्यों और कैसे लिखी गई?

पैंतीस वर्ष पूर्व मैं न्यूयॉर्क के दु:खी नवयुवकों में से था। मैं मोटर ट्रक बेच कर रोजी कमाता था। मोटर ट्रक किस शक्ति से दौड़ती है इसका भी मुझे ज्ञान नहीं था। यही नहीं, मैं कुछ जानना भी नहीं चाहता था। मुझे अपने काम से नफरत थी। कोकरोचों से भरे अत्यंत सामान्य रूप से सजे कमरे में रहना मुझे पसंद नहीं था। मुझे स्मरण है कि मेरी नेक टाइयाँ दीवारों पर टँगी रहती थीं और जब मैं सवेरे टहलने के लिए नेकटाई लेने जाता तो कोकरोच कमरे में चारों ओर भागते नजर आते। मुझे सस्ते और गंदे होटलों से भोजन करना अच्छा नहीं लगता था। वे भी कोकरोचों से भरे रहते थे।

प्रत्येक रात को मैं अकेला सिरदर्द से चूर घर लौटता। इस सिर दर्द का कारण था- निराशा, चिंता, कटुता और विद्रोह। मुझ में विद्रोह इसलिये था कि कॉलेज के दिनों में जो सुनहले स्वप्न मैंने देखे थे वे दु:स्वप्न बन कर रह गए थे। यह भी कोई जिंदगी थी? क्या यही वह महान उपक्रम था जिसकी मैंने इतनी उत्सुकता से प्रतीक्षा की थी? क्या मेरे जीवन का अभिप्राय यही था कि मैं ऐसी नौकरी करूँ जो मुझे पसंद न हो? कोकरोचों के साथ रहूँ, निकम्मा भोजन करूँ और भविष्य से कोई आशा न रखूँ? मेरी, कॉलेज के दिनों के पुस्तकें लिखने के स्वप्न को साकार करने तथा पढ़ने के लिये अवकाश की कामना थी।

मुझे पता था कि अपनी उस अनचाही नौकरी को छोड़ने से मुझे लाभ ही होगा, हानि नहीं। मेरी विपुल धन संचय की इच्छा नहीं थी, किंतु मैं जीवन को सार्थक बनाना चाहता था। संक्षेप में, मैं उस अवस्था को पहुँच गया था जो महान निर्णय की अवस्था है और जिसका सामना प्रत्येक नवयुवक को जीविकोपार्जन का श्रीगणेश करने के पूर्व करना पड़ता है। इसलिये मैंने अपनी जीवन-दिशा निश्चित कर ली। इस निर्णय ने मेरे भविष्य को पूर्णतया बदल दिया। इसने मेरे गत पैंतीस वर्षों को सुखी बना दिया तथा अपनी काल्पनिक आकांक्षाओं से भी अधिक पुरस्कार प्रदान किया।

मेरा निर्णय यह था, जो काम मुझे पसंद नहीं, उसे मैं नहीं करूँगा। मैंने चार वर्षों तक मिसौरी के वारेंसबर्ग के स्टेट टीचर्स कॉलेज में अध्ययन किया था और शिक्षक बनने की तैयारी की थी इसलिये मैंने निश्चय कर लिया कि मैं रात्रि-शालाओं की प्रौढ़-कक्षाओं में अध्यापन कार्य करूँगा। तब मुझे दिन में अवकाश रहेगा। मैं पुस्तकें पढ़ सकूँगा, भाषण तैयार कर सकूँगा। उपन्यास एवं कहानियाँ लिख सकूँगा। मैं चाहता था कि ''लिखने के लिये जीऊँ और लिखकर जीविकोपार्जन करूँ।

अब प्रश्न यह था कि रात्रि-शाला के प्रौढ़ों को कौन सा विषय पढ़ाऊँ। मैंने अपने कॉलेज के प्रशिक्षण पर विचार किया और मुझे ज्ञात हुआ कि कॉलेज में मैंने जो कुछ पढ़ा उस सबसे अधिक व्यावहारिक लाभ मुझे अपने जीवन और बोलने की कला के अनुभव और प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त हुआ, क्योंकि इससे मेरी भीरुता और अनास्था लुप्त हो गई और लोगों से व्यवहार करने में मुझे विचार और साहस प्राप्त हुआ। मैंने स्पष्ट रूप से समझ लिया कि नेतृत्व उस व्यक्ति को मिलता है जो खड़ा होकर अपने विचार व्यक्त कर सके। मैंने कोलंबिया विश्वविद्यालय तथा न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय की रात्रि में संचालित बोलने की कला कक्षाओं में अध्यापन कार्य हेतु आवेदन-पत्र भेजे, किंतु उन विश्वविद्यालयों को मेरी सहायता की अपेक्षा नहीं थी। वे अपना काम स्वयं ही चला लेना चाहते थे।

उससे मुझे निराशा हुई किंतु आज मैं ईश्वर को धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने मेरे आवेदन को ठुकरा दिया क्योंकि

मैंने उसके बाद वाई.एम.सी.ए. की रात्रि-शालाओं में पढ़ाना आरंभ किया जहाँ मैं अपने परिश्रम की सफलता के प्रत्यक्ष एव शीघ्र प्रमाण प्रस्तुत कर सका। प्रौढ़ विद्यार्थियों को सामाजिक मान की इच्छा थी इसलिये मेरी कक्षाओं में नहीं आते थे, बल्कि वे केवल एक उद्देश्य से आते थे, वह यह कि उनकी समस्याओं का हल उन्हें मिल जाए। वे इस योग्य बनना चाहते थे कि किसी करोबारी सभा मे खड़े होकर, भय से काँपे बिना अपने विचार व्यक्त कर सकें। सेल्समेन इस योग्य बनना चाहते थे कि अपना साहस बटोरने के लिए मकान के तीन चार चक्कर काटे बिना ही किसी कठोर ग्राहक का सामना कर सकें। वे अपने में संतुलन और आत्मविश्वास का विकास चाहते थे। वे व्यापार में उन्नति करना चाहते थे और अपने परिवार के लिये अधिक धन कमाना चाहते थे। वे अपनी ट्यूशन-फी किश्तों में अदा करते थे और रिजल्ट न मिलने पर ट्यूशन-फी देना भी बंद कर देते थे। मुझे भी वेतन नहीं मिलता था। लाभ पर परसेंटेज मिलता था, इसलिए अपना गुजर चलाने के लिये बड़ा व्यावहारिक होना पड़ता था।

मुझे उस समय लगा कि अध्यापन कार्य करने में मुझे बड़ी असुविधा होती है किंतु आज मैं महसूस करता हूँ कि मैं तब एक अमूल्य प्रशिक्षण प्राप्त कर रहा था। मैं अपने विद्यार्थियों को प्रेरणा देता और उनकी समस्याएँ सुलझाने में सहायता करता। मैं प्रत्येक सत्र को उत्तेजक और उत्साहपूर्ण बनाए रखता ताकि विद्यार्थियों का आना जारी रहे।

वह एक उत्साहवर्धक कार्य था। मुझे उसमें रुचि थी। मैं यह देखकर चकित रह जाता था कि व्यापारी लोग कितनी जल्दी आत्मविश्वास का विकास करते हैं और कितनी जल्दी उनमें से कई तरक्की कर अच्छी आय बना लेते हैं। कक्षाओं को मेरी उच्चतम आशाओं से भी अधिक सफलता मिल रही थी। तीन सत्र के अंदर ही वाई.एम.सी.ए. संस्था जो रात्रि के पाँच डालर देने के लिये भी तैयार नहीं थी; मुझे परसेंटेज के हिसाब से तीस डॉलर प्रति रात्रि देने लगी। आरंभ में तो मैं बोलने की कला की शिक्षा देता था किंतु ज्यों-ज्यों वर्ष बीतते गए त्यों-त्यों मैं महसूस करता गया कि प्रौढ़ों को लोक-व्यवहार की शिक्षा और योग्यता की भी आवश्यकता थी। लोक-व्यवहार पर लिखी गई ऐसी कोई भी उपयुक्त पुस्तक मैं नहीं जानता था, इसलिये मैंने स्वयं इस विषय पर एक पुस्तक लिखी। वह पुस्तक आम तरीके से नहीं लिखी गई थी। कक्षाओं में पढ़ने वाले प्रौढ़ विद्यार्थियों के अनुभवों के आधार पर उसकी रचना हुई थी। उस पुस्तक का नाम मैंने 'हाउ टु विन फ्रेंड्स एंड इन्फ्लुएंस पिपुल' अर्थात् 'लोक-व्यवहार' रखा।

चूँकि वह पुस्तक मेरी प्रौढ़ कक्षाओं के लिये पाठ्यपुस्तक के रूप में लिखी गई थी इसलिये मुझे स्वयं में भी आशा नहीं थी कि वह इतनी लोकप्रिय होगी। इसके अतिरिक्त मैं चार अन्य पुस्तकें भी लिख चुका था तो लोकप्रिय नहीं हुई थीं। इस दृष्टि से आज मैं संभवत: उन लेखकों में से हूँ जो अपनी सफलता से हैरान है।

ज्यों-ज्यों वर्ष गुजरते गए मैं महसूस करने लगा कि उन प्रौढ़ विद्यार्थियों की समस्याओं में से सबसे बड़ी समस्या थी 'चिंता'। मेरे विद्यार्थियों में से अधिकांश प्रबंधक, सेल्समेन, इंजीनियर और एकाउंटेंट थे। सभी प्रकार के व्यवसाय और कारोबारें के वे लोग थे और उनसे से अधिकांश की अपनी समस्याएँ थीं। उन कक्षाओं में स्त्रियाँ भी थीं जो या तो व्यापार करती थीं या गृहिणियाँ थीं। उनकी भी अपनी समस्याएँ थीं। इसलिए 'चिंता का समाधान कैसे किया जाए' इस विषय पर लिखित पाठ्यपुस्तक की आवश्यकता महसूस हुई। इस बार फिर मैंने ऐसी पुस्तक की खोज की। मैं न्यूयॉर्क के एक बड़े पुस्तकालय में गया और खोज करने पर यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि 'चिंता' विषय पर लिखी गई केवल बाईस पुस्तकें वहाँ की सूची में थीं। मुझे यह जानकर हैरानी हुई कि कीड़ों-मकोड़ों पर लिखी गई एक सौ नवासी पुस्तकें वहाँ थी। उन पुस्तकों की संख्या चिंता पर लिखी गई पुस्तकों की संख्या से लगभग नौ गुनी अधिक थीं। है न यह मजे की बात? चूँकि चिंता मानवता के सामने सबसे बड़ी समस्या है। क्या आप महसूस नहीं करते कि देश का प्रत्येक उच्च विद्यालय एवं कॉलेज 'चिंता को कैसे रोका जाए' इस

विषय को पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर ले। देश में कोई भी ऐसा कॉलेज नहीं है जिसमें एक वर्ष के लिए भी इस विषय को पढ़ाया जाता हो। मैंने तो कम-से-कम ऐसे किसी कॉलेज का नाम नहीं सुना। इसका परिणाम यह होता है कि हमारे अस्पतालों के आधे से अधिक बीमार स्नायु एवं मनोरोगजन्य व्याधियों से पीड़ित होते हैं।

मैंने न्यूयॉर्क के सार्वजनिक पुस्तकालय में रखी हुई उन बाईस पुस्तकों को पढ़ा और इसके अतिरिक्त 'चिंता' पर लिखी गई जितनी भी पुस्तकें मिल सकीं, मैंने खरीद लीं। किंतु उन पुस्तकों में से एक भी ऐसी नहीं निकली, जिसे मैं अपनी कक्षा के प्रौढ़ विद्यार्थियों के लिए पाठ्यपुस्तक के रूप में प्रयोग में लाता। इसलिए मैंने स्वयं एक ऐसी पुस्तक लिखने का निश्चय किया।

सात वर्ष पूर्व मैंने इस पुस्तक को लिखने की तैयारी की। तो कैसे! समय-समय पर दार्शनिकों ने चिंता के विषय में जो कुछ लिखा है, उसे मैंने पढ़ डाला। कन्फ्युसियस के समय से लेकर चर्चिल के समय तक लिखी गई सभी जीवनियाँ मैंने पढ़ डालीं। मैं सभी तबकों के प्रमुख व्यक्तियों, जैसे जैक डेम्सी, जनरल ओमार ब्रेडले, जनरल मार्क क्लार्क, हेनरी फोर्ड, एलिनोर रूजवेल्ट, डोरोथी डिक्स इत्यादि से मिला; किंतु ये तो केवल शुरुआत थी।

मैंने अन्य कुछ ऐसे प्रयत्न भी किये जो साक्षात्कार और पठन-पाठन से अधिक महत्त्वपूर्ण थे। मैंने पाँच वर्ष तक अपनी प्रौढ़ कक्षाओं की प्रयोगशाला में चिंता पर विजय पाने के लिये काम किया। जहाँ तक मैं जानता हूँ यह प्रयोगशाला संसार में अपने ढंग की पहली एवं एकमात्र प्रयोगशाला थी। हमने, विद्यार्थियों को चिंता रोकने के लिये कुछ नियम दिये और उन नियमों का अपने जीवन में प्रयोग करने के लिये कहा और उनके जो परिणाम निकले उनके विषय में कक्षाओं में विचार-विमर्श किया। अन्य विद्यार्थियों ने भी इस संबंध में भूतकाल में जो पद्धितियाँ अपनायी थीं, उनके बारे में विवरण प्रस्तुत किये।

इस अनुभव के परिणामस्वरूप 'चिंता को कैसे जीता जाए' इस विषय पर मेरे ख्याल से मैंने संसार के अन्य किसी भी व्यक्ति से अधिक बातचीत सुनी; इसके अतिरिक्त 'चिंता को कैसे जीता जाए' इस विषय पर मैंने सैकड़ों भाषण सुनें। ये भाषण डाक द्वारा भेजे गये थे। ये वे भाषण थे जो समूचे कनाडा और अमेरिका के एक सौ सत्तर से भी अधिक शहरों में संचालित हमारी कक्षाओं में दिये गये थे, तथा जिनके लिये पुरस्कार दिये गये थे। इस प्रकार यह पुस्तक किसी बंद कमरे की उपज नहीं है। और न यह कोई चिंता को जीतने के विषय में बौद्धिक प्रवचन ही है, बल्कि मैंने, हजारों प्रौढ़ों ने चिंता को किस प्रकार जीता, इस विषय पर एक संक्षिप्त धारा-प्रवाह विवरण लिखने का प्रयास किया है। यह बात निश्चय है कि यह पुस्तक व्यावहारिक है।

मुझे यह बतलाते हुए खुशी होती है कि इस पुस्तक में किसी भी काल्पनिक अथवा अस्पष्ट अपरिचित क, ख, ग की कहानियाँ नहीं हैं, जिन्हें कोई पहचान न सके। कुछ इक्के-दुक्के किस्सों को छोड़कर इस पुस्तक में व्यक्तियों के नाम और पते दिये गए हैं। यह पुस्तक प्रमाणित विवरण है जो इसकी खासियत है।

फ्रेंच दार्शनिक वैलेरी के अनुसार, ''विज्ञान सफल परिणामों का एक सकलन है।'' उसी प्रकार यह पुस्तक भी हमारे चिंतापूर्ण जीवन से छुटकारा पाने के लिये सफल और प्रमाणित नुस्खों का एक संकलन है। फिर भी मैं आपको एक बात कह देना चहता हूँ और वह यह कि इस पुस्तक में आपको नई बात नहीं मिलेगी, किंतु आपको बहुत सी ऐसी बातें अवश्य मिलेंगी जिनका आम तौर से व्यवहार नहीं हुआ है। वैसे हमें नई बातों की जानकारी की आवश्यकता नहीं रहती, एक पूर्ण जीवन बिताने के लिये हम पहले ही से पर्याप्त बातें जानते हैं। हम सबने 'गोल्डन रूल' और 'द सरमन औन द माउंट' पढ़े हैं। हमारी कठिनाई अशांति न होकर जड़ता है। इस पुस्तक का उद्देश्य यह है कि पुरातन एव मूलभूत सत्य को फिर से लिखा जाए, उसकी व्याख्या की जाए, उसका प्रवाह निश्चित किया जाए तथा उसे वातावरण के अनुकूल बनाया जाए और आपकी जड़ता मिटाकर उन सत्यों के प्रयोगों के लिये

आपको प्रेरित किया जाए।

आपने यह पुस्तक, यह बात पढ़ने के लिये नहीं ली कि यह पुस्तक कैसे लिखी गयी थी। आप इसकी व्यावहारिकता देखना चाहते हैं। ठीक है! पहले इस पुस्तक के चवालीस पेज पढ़ जाइवे यदि उन चवालीस पृष्ठों के पढ़ लेने के बाद भी चिंता को रोकने के लिये और जीवन का आनंद उठाने के लिये नयी शक्ति एवं प्रेरणा न मिले तो आप इसे रद्दी की टोकरी में डाल दीजिये। यह पुस्तक आपके लिये बेकार है।

—डेल कारनेगी

इस पुस्तक से अधिकाधिक लाभ लेने के तरीके

यदि आप इस पुस्तक के अधिक-से-अधिक लाभ उठना चाहते हैं तो एक अपरिहार्य एवं किसी भी नियम अथवा विधि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण शर्त का होना आवश्यक है। जब तक आपके पास वह आवश्यक शर्त नहीं है तब तक अध्ययन करने के ढंग के आपके हजारों नियम भी व्यर्थ हैं। किंतु अगर आप के पास वह प्रधान गुण है, तो आप किसी भी पुस्तक से बिना किसी प्रकार के सुझाव पढ़े कमाल हासिल कर सकते हैं।

वह चमत्कारिक शर्त क्या है? वह है- सीखने की गहन एव प्रेरक उत्कंठा तथा चिंता रोकने और जीवनयापन करने का प्रबल एवं दृढ़ संकल्प।

ऐसी उत्कंठा का विकास आप कैसे कर सकते हैं? आप अपने आप को निरंतर स्मरण दिलाते रहकर कि ये सिद्धांत कितने प्रमुख हैं, यह कर सकते हैं। अपने सामने एक चित्र खींचिये कि उन सिद्धांतों का प्रभुत्व आप को वैभवपूर्ण और अधिक सुखी जीवन बिताने में किस प्रकार सहायता करेगा। मन-ही-मन बार-बार दुहराते रहिये कि ''मेरे मस्तिष्क की शांति, मेरा सुख, मेरा स्वास्थ्य और संभवत: आगे जाकर मेरी आय भी बहुत हद तक इस पुस्तक में बताये गये पुरातन, सहज एवं निरंतन सत्यों के प्रयोग पर निर्भर करती है।''

प्रत्येक अध्याय को पहले जल्दी-जल्दी सरकारी निगाह से पढ़ जाइये। आप को शायद अगला अध्याय पढ़ने का लोभ हो आए, किंतु ऐसा मत कीजिये यदि आप केवल मनोरंजन के लिये पढ़ रहे हों तो बात दूसरी है। किंतु यदि आप चिंता का निवारण कर जीवनयापन करने के लिये पढ़ रहे हैं तो प्रत्येक को सांगोपांग दुहरा लीजिये। आगे चलकर इससे आपके समय की बचत होगी और उसका परिणाम भी निकलेगा।

पढ़ते समय पढ़ी हुई सामग्री पर विचार करने के लिये बार-बार रुकते जाइये मन-ही-मन सोचिये कि प्रत्येक सुझाव का प्रयोग आप कब और कैसे कर सकते हैं। उस प्रकार का पढ़ना जल्दी पढ़ने से कहीं अधिक सहायक होगा।

पढ़ते समय अपने हाथ में पैंसिल, लाल पैंसिल या पेन रखिये और जब कभी आप ऐसा सुझाव पढ़ें और आप को लगे कि उसका उपयोग आप कर सकते हैं, तो उसके पास एक लकीर खींच लीजिये। यदि वह चार तारों वाला संकेत हो तो प्रत्येक वाक्य के नीचे लकीर खींचिये, या उस पर क्रॉस का चि लगा दीजिये। चि लगाने और नीचे लकीर खींचने से पुस्तक अधिक मनोरंजक बन जाती है और जल्दी से उसकी पुनरावृत्ति करने में सरलता हो जाती है।

मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ जो पंद्रह वर्ष से एक बड़ी इंश्योरेंस कंपनी का मैनेजर है। वह हर महीने अपनी कंपनी द्वारा जारी किये गए इंश्योरेंस के सभी इकरारनामे पढ़ता है और वह उन्हें महीनों एवं वर्षों तक पढ़ता रहता है। क्यों? इसलिये कि उसने अनुभव से यह लिखा है कि उन इकरारनामों की शर्तों को ठीक-ठीक याद रखने का यही एक तरीका है।

एक बार मैंने पब्लिक स्पीकिंग पर एक पुस्तक लिखने में लगभग दो वर्ष बिता दिये। फिर भी, अपनी पुस्तक में जो कुछ भी मैंने लिखा था उसे याद रखने के लिये उस पुस्तक को समय-समय पर मुझे पढ़ने रहना पड़ता है। जिस शीघ्रता से हम बातों को भूल जाते हैं, उस पर आश्चर्य होता है।

इसलिये, यदि आप इस पुस्तक से वास्तविक और स्थायी लाभ प्राप्त करना चाहते हैं तो यह मत समझिये कि एक बार इसे सरसरी निगाह से देख जाना पर्याप्त है। इसको भली-भाँति पढ़ लेने के बाद आपको चाहिये कि हर महीने इसे दुबारा पढ़ने में आप कुछ घंटे खर्च करें और प्रतिदिन इसे आप अपनी डेस्क पर अपने सामने रखें। प्राय:

इसे उलटने-पलटने और निरंतर अपने मन पर संस्कार डालते रहें कि इस पुस्तक की सहायता से आप कितनी बड़ी उन्नति कर सकते हैं। याद रखिये कि इन सिद्धांतों का निरंतर प्रयोग तथा दोहराव ही इन्हें आपके स्वभाव का एक अंग बना सकेगा और तभी आप अनजाने की इन पर आचरण करने लगेंगे। इसके सिवा दूसरा कोई उपाय है ही नहीं।

बर्नाड शॉ ने एक बार कहा था, ''यदि आप किसी मनुष्य को कोई बात सिखाना चाहेंगे तो वह कभी नहीं सीखेगा।'' शॉ का यह कथन सही था। सीखना एक सक्रिय प्रक्रिया है। हम काम करके ही सीखते हैं। इसलिए यदि आप उन सिद्धांतों पर पूर्ण प्रभुत्व पाना चाहते हैं, जिनका अध्ययन आप इस पुस्तक में कर रहे हैं, तो उनके संबंध में कुछ कीजिये। जब भी सुयोग मिले इन नियमों का प्रयोग कीजिये। यदि आप ऐसा नहीं करेंगे तो उन्हें जल्दी ही भूल जाएँगे। केवल वही ज्ञान मस्तिष्क में टिकता है, जिसका उपयोग किया गया हो।

संभवत: हर समय आपको इन सुझावों का प्रयोग कठिन ज्ञान पड़े। मैं यह इसलिये कह रहा हूँ कि मैंने यह पुस्तक लिखी है। फिर भी प्राय: इसमें लिखी गयी प्रत्येक बात का प्रयोग करना मुझे कठिन जान पड़ता है। इसलिये जब भी आप यह किताब पढ़े, याद रखिये कि आप केवल जानकारी प्राप्त करने का ही प्रयत्न नहीं कर रहे हैं बल्कि आप नयी आदतों का निर्माण करने का प्रयत्न कर रहे हैं। हाँ, आप नवीन जीवन-मार्ग का निर्माण कर रहे हैं, और उसके लिये यथासमय सतत प्रयोग करते रहने की आवश्यकता रहेगी। इसलिये इन पन्नों को प्राय: देखते रहिये। इसे चिंता पर विजय पाने के लिये एक व्यावहारिक गुटका समझिये और जब आपके सामने कोई कठिन समस्या आ खड़ी हो, तो विचलित न होइये। स्वभाव एवं आवेग में मत बह जाइये। ऐसा करना सामान्यत: गलत होता है। इसके बजाय इन पन्नों को टटोलिये और रेखांकित अनुच्छेदों को पढ़ जाइये। तब इन नवीन रीतियों का उपयोग कीजिये और उनके चमत्कार को देखिये।

जब कभी आपकी पत्नी आपको इस पुस्तक के किसी एक सिद्धांत को भंग करते हुए टोके तो आप उसे तय नकदी दे दीजिये, वह आपको उत्साहित एवं प्रेरित करेगी।

इस पुस्तक के पृष्ठ खोलिये और पढ़िये कि वॉल स्ट्रीट बैंकर, एच. पी. हॉवेल तथा वेन फ्रेंकलिन ने अपनी गलतियों को किस प्रकार सुधारा? आप भी इस पुस्तक में वर्णित सिद्धांतों के प्रयोग की पुष्टि करने के लिये हॉवेल तथा फ्रेंकलिन की पद्धति को काम में क्यों नहीं लाते? यदि आप ऐसा करेंगे तो परिणाम में दो बातें होंगी-

पहली, आप अपने को एक ऐसी शिक्षा-प्रक्रिया में नियोजित करेंगे जो अमूल्य एवं कौतूहलपूर्ण है।

दूसरी, आप देखेंगे कि चिंता रोकने और जीवन यापन करने की आपकी क्षमता कड़वी बेल की तरह फलने-फूलने लगेगी।

आप एक डायरी रखिये जिसमें आपको चाहिये कि इन सिद्धांतों के प्रयोग की सफलताओं को लिख डालें। जो कुछ लिखें, ठीक लिखें। नाम, तिथियाँ तथा परिणामों को भी लिखें। इस प्रकार का लेखा रखने से आपको बड़े उद्योग करने की प्रेरणा मिलेगी और आज से कई वर्ष बाद किसी शाम को जब कभी आप उससे लिखी घटनाओं पर दृष्टि डालेंगे तो यह लेखा आप को अत्यंत मोहक प्रतीत होगा।

पुस्तक को कैसे पढ़ें—

आगे बढ़ने से पहले प्रत्येक परिच्छेद को दुहरा लीजिये।

पढ़ते समय बार-बार रुकिये और मन-ही-मन सोचिये कि प्रत्येक सुझाव का उपयोग आप किस प्रकार कर सकते हैं।

प्रत्येक प्रमुख विचार को रेखांकित कीजिये।

प्रति मास पुस्तक का पुनरावलोकन कीजिये।

जब भी सुयोग मिले, इन सिद्धांतों का उपयोग कीजिये। आपकी रोज की समस्याओं को हल करने के लिये इस पुस्तक को व्यावहारिक-पुस्तिका के रूप में काम में लीजिये।

जब कभी आपका कोई मित्र आपको इन सिद्धांतों को भंग करते हुए टोके, तो आप उसे हर बार पैसे देकर अपने इस अध्ययन को एक रोचक खेल बना दीजिये।

प्रति सप्ताह अपनी प्रगति का ब्यौरा लीजिये तथा मन-ही-मन सोचिए कि आपने क्या भूलें की हैं। भविष्य के लिए आपने क्या सुधार किये हैं तथा क्या शिक्षा ग्रहण की है।

इस पुस्तक के पृष्ठ भाग में एक डायरी रखिये जो यह बताए कि आपने इन सिद्धांतों का प्रयोग कब और कैसे किया है?

❑

वर्तमान में जीएँ

सन् 1871 के वसंत की बात है; एक नवयुवक ने एक पुस्तक पढ़ी। उसके एक वाक्य ने उसके भविष्य को अत्यंत प्रभावित किया। वह युवक मॉन्ट्रियल जनरल हॉस्पिटल में चिकित्सा शास्त्र का विद्यार्थी था। इसे निर्णायक परीक्षा में सफलता प्राप्त करने की बहुत चिंता थी। क्या करे कहाँ जाए। चिकित्सक वृत्ति कैसे स्थापित करे तथा जीविकोपार्जन कैसे करे। ऐसी कई चिंताएँ उसे घेरे रहती थीं।

उस वाक्य ने उसे इतना प्रभावित किया कि वह अपने समय का एक यशस्वी चिकित्सक बन गया। उसने विश्व-विख्यात 'जॉन्स हॉपकिंस स्कूल ऑफ मेडिसिंस' का संगठन किया तथा ऑक्सफोर्ड के चिकित्सा शास्त्र विभाग में रेजियस प्राध्यापक नियुक्त हुआ। ब्रिटिश साम्राज्य के चिकित्सा क्षेत्र के किसी भी व्यक्ति को प्रदत्त यह सर्वोच्च सम्मान था। इग्लैंड के सम्राट् ने उसे 'नाइट' की उपाधि से विभूषित किया था और उसकी मृत्यु के उपरांत एक हजार चार सौ छियासठ पृष्ठों के दो वृहत् ग्रंथों में उसकी जीवन-कथा भी लिखी गयी।

वह युवक था सर विलियम ऑसलर तथा टॉमस कार्लाइल का जो वाक्य उसने 1871 के वसंत में पढ़ा, वह यह था कि, ''दूरस्थ तथा संदिग्ध कार्यों को छोड़, सन्निकट एवं निश्चित कार्यों को हाथ में लेना ही हमारा मुख्य ध्येय होना चाहिये।''

बयालीस वर्ष उपरांत वसंत की स्निग्ध रात्रि में सुमन-सौरभ से सराबोर कॉलेज के अंचल में सर विलियम ऑलसर ने येल विश्वविद्यालय के छात्रों के समक्ष भाषण करते हुए बताया कि यह स्वाभाविक ही है कि मेरे जैसा व्यक्ति, जिसने एक लोकप्रिय पुस्तक लिखी हो तथा जो चार विश्वविद्यालयों में प्राध्यापक रह चुका हो, कुशाग्र बुद्धि एवं प्रतिमा संपन्न समझा जाए किंतु ऐसी बात नहीं है। मेरे अनन्य मित्र जानते हैं कि मेरी बुद्धि कितनी सामान्य है।

फिर उनकी सफलता का रहस्य क्या था? यह था, उनका 'आज की परिधि' में रहना। इस सूत्र का आखिर आशय क्या है? येल में किये गये उनके उस भाषण के कुछ वर्ष पूर्व की बात है, सर विलियम ऑसलर ने एक विशाल पोत पर एटलांटिक पार किया था। पोत पर उन्होंने देखा कि उसके अग्र मंच पर खड़ा कप्तान बटन दबाता और उसकी कलें खड़खड़ा उठतीं और पोत के विभिन्न भाग तत्काल एक-दूसरे से बिलकुल अलग हो जाते। इस यंत्र-क्रिया का उल्लेख करते हुए सर विलियम ऑसलर ने येल छात्रों को बताया कि, 'आपमें से प्रत्येक का शरीर-यंत्र उस पोत के यंत्र से कहीं अधिक विचित्र है तथा उससे भी अधिक लंबी है यात्रा हेतु सन्नद्ध है। अत: मेरा आपसे आग्रह है कि आप अपने इस यंत्र पर नियंत्रण रखना सीखिये जिससे कि आप आज की परिधि में रह सकें और आपकी जीवन यात्रा सुरक्षित हो जाए। अपने मस्तिष्क यंत्र का बटन दबाकर मृत अतीत और अज्ञात भविष्य को लोह कपाटों में जड़ दीजिये। जीवन के प्रत्येक स्तर पर यह प्रयोग कीजिये और आपको ज्ञात होगा कि आज के लिये आप सर्वथा सुरक्षित हैं।

''बीती ताहि बिसारि दे क्योंकि इस बीती की चिंता ने कितनी ही मूढ़ात्माओं को कराल काल की राह पर ढकेल दिया है। विगत और आगत का भार एक साथ वर्तमान में ढोकर चलने वाला प्रचंड पराक्रमी भी लड़खड़ा जाता है। आगत को भी विगत ही की तरह दृढ़ता से भूल जाइये। आपका कल आज है। याद रखें, कल नाम की कोई चीज है ही नहीं। मानव की मुक्ति वर्तमान से है। भविष्य की चिंता करने वाले की शक्ति व्यर्थ में नष्ट होती है। मानसिक क्लेश और स्नायु कष्ट उसके पीछे लग जाते हैं। अत: मेरा आपसे आग्रह है कि आगत और विगत को नजर-अंदाज कर आज की परिधि में रहने के अभ्यस्त होइये।

तो क्या डाक्टर ऑसलर का अभिप्राय यह था कि हम भविष्य के लिये कोई आयोजन ही न करें। नहीं, ऐसी बात नहीं है। इस पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने स्वयं अपने उस भाषण में बताया था कि भविष्य के लिये सम्यक् आयोजन करने का उपयुक्त उपाय तो यही है कि हम अपनी समग्र बुद्धि और अदम्य उत्साह के साथ आज का कार्य उत्तम रीति से करने में जुट जाएँ।

सर विलियम ऑसलर ने येल छात्रों को सलाह दी कि वे अपनी दिनचर्या ईसा की इस प्रार्थना के साथ आरंभ करें, ''हे प्रभु केवल आज का भोजन जुटा दे।''

ध्यान दीजिये, यह प्रार्थना केवल आज के भोजन के लिये ही है इसमें कल की बासी रोटी की शिकायत नहीं है, न इसमें यही कहा गया है कि 'हे प्रभु यदि सूखा पड़ गया तो आगामी पतझड़ में रोटी कहाँ से नसीब होगी या कहीं रोजी जाती रही तो मेरा उदरपोषण कैसे होगा।

इस प्रार्थना में केवल आज की रोटी की ही याचना है इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं। आज की रोटी ही आपकी अपनी है।

वर्षों पहले की बात है, एक निर्धन दार्शनिक था, वह किसी पथरीले प्रांतर मे भटक रहा था। वहाँ के निवासी बड़ी कठिनाई से अपना जीवन निर्वाह करते थे। एक दिन एक पहाड़ी पर वे लोग उसके आस-पास जमा हो गये। दार्शनिक ने उनके समक्ष भाषण दिया। उस भाषण को कदाचित् अब तक सबसे अधिक उद्धृत किया गया है। सदियों से उक्त भाषण के वे शब्द निरंतर गूँजते चले आ रहे हैं। उस दार्शनिक का कथन था, ''कल की चिंता छोड़ दो। कल अपनी सुध आप ही लेगा। आज की कठिनाइयाँ ही आज के लिये क्या कम हैं। आज की परिधि में रहिये।''

कल की चिंता छोड़ दो, ईसा के इन शब्दों को सिद्ध पुरुष की वाणी अथवा पूर्वी रहस्यवाद कहकर कई लोग टाल देते हैं। उनका कहना है, ''कल की चिंता तो करनी ही पड़ेगी, परिवार की सुरक्षा के लिये बीमा भी कराना ही होगा, वृद्धावस्था में लिये बचत भी करनी होगी।''

ठीक है भविष्य के लिये योजनाएँ अवश्य बनाइए, पर पहले प्रभु ईसा के वचनों का तात्पर्य समझने की भी तो कोशिश कीजिये। कठिनाई यह है कि तीन सौ वर्ष पूर्व अनूदित ईसा के शब्दों का आज भी वही अर्थ लगाया जाता है जो सम्राट् जेम्स के शासनकाल में लगाया जाता था। तीन सौ वर्ष पूर्व विचार का अर्थ प्राय: चिंता से लगाया जाता है। यदि ईसा के अभिप्राय को कहीं सही-सही अद्धृत किया गया है तो बाइबल के आधुनिक संस्करण में। जिसमें कहा गया है कि ''कल की चिंता छोड़ दो।''

कल पर विचार अवश्य कीजिये, उस पर मनन कीजिये, योजनाएँ बनाइये, तैयारियाँ कीजिये, किंतु उनके लिये चिंतित मत होइये।

युद्ध काल के हमारे सेनापति, कल के लिये योजनाएँ बनाते थे पर वे उनके लिये चिंतित नहीं होते थे। अमरिकी नौसेना के निर्देशक एडमिरल अर्नेस्ट किंग कहा करते थे कि ''मैंने उपलब्ध उत्तम साधनों से सज्जित अपने वीर सैनिकों को श्रेष्ठ मिशन पर भेजा है और यही मैं कर सकता हूँ।''

''यदि पोत डूब जाए तो मैं उसे ऊपर नहीं ला सकता। यदि उसे डूबना है तो वह डूबेगा ही। मैं उसे रोक नहीं सकता। जो हो चुका, उस पर सिर पीटने से तो यही अच्छा है कि आगे की समस्याओं पर विचार किया जाए। यदि मैं ऐसी उलझनों को अपने पर हावी होने दूँ तो मेरा तो जीना ही मुश्किल हो जाए।''

चाहे युद्ध में हो चाहे शांति में, सही और गलत विचारधारा में मुख्य अंतर यही है कि सही विचारधारा प्रयोजन और परिणाम पर आधारित रहती है और हमें रचनात्मक कार्य-विधि की ओर प्रेरित करती है। इसके विपरीत गलत

विचारधारा प्राय: उद्वेग और स्नायु विघटन का हेतु बनती है।

हाल ही में मैंने न्यूयॉर्क टाइम्स के प्रकाशक आर्थर हेज सल्जबर्गर से भेंट की थी। उन्होंने मुझे बताया कि यूरोप में द्वितीय महायुद्ध के छिड़ने के समय वे अपने भविष्य को लेकर इतने चिंतित हो गए थे कि उनकी नींद तक हराम हो गई थी। प्राय: अर्ध रात्रि के समय उठकर वे केनवास और रंग लिये शीशे के सामने जा बैठते और अपनी तस्वीर बनाने का प्रयास करते। चित्रकारी के संबंध में उनका कोई अनुभव नहीं था किंतु अपने मस्तिष्क से चिंता हटाने के लिये जैस-तैसे कुछ बना ही लेते थे। उन्होंने आगे बताया कि एक चर्च में हुए प्रवचन को सूत्र रूप से ग्रहण करने के उपरांत ही वे चिंतामुक्त हो शांति से जी सके। वह प्रवचन इस प्रकार था-

'प्रगति का एक ही चरण पर्याप्त है।
सहारा दे ज्योर्तिमय,
विचलित न कर,
अधिक की कामना नहीं करता,
प्रगति का एक ही चरण पर्याप्त है।'

जीवन एक बालु घड़ी के समान है। बालु घड़ी के शिखर पर सैकड़ों बालु कण संचित रहते हैं और वे धीरे-धीरे घटिका की सँकरी गर्दन से होकर समान क्रम से निकलते रहते हैं।

बालु कणों के इस क्रम को हम घड़ी को तोड़े-फोड़े बिना नहीं बदल सकते। ऐसा ही क्रम हमारे जीवन में भी है। अपनी दिनचर्या का श्रीगणेश करते समय हमारे सामने सैकड़ों ऐसे काम आते हैं जिन्हें हम तत्काल ही पूरा करना चाहते हैं। यदि हम उन्हें घड़ी की क्रमिकता के अनुरूप दिन भर में एक-एक करके पूरा कर सकें तो निश्चय ही हमारा शारीरिक और मानसिक ढाँचा टूट जाए।

हमारे वर्तमान जीवन की विचित्रता में से एक यह भी है कि अस्पतालों में आधे से अधिक स्थान उन रोगियों के लिये रहते हैं जो स्नायु रोग अथवा मानसिक रोग से पीड़ित रहते हैं; और जो भूल और भविष्य की चिंता में पिस कर रह गये हैं। उन रोगियों में से अधिकाश आज भी सुखद एवं उपयोगी जीवन व्यक्ति करते यदि ये ईसा या सर विलियम ऑसलर के उन शब्दों पर ध्यान देते। जिनमें क्रमश: 'कल की चिंता छोड़ो' और 'आज की परिधि में रहो' की सलाह दी गयी है।

अभी हम भूत और भविष्य के संधि-स्थल पर खड़े हैं। एक ओर विशाल भूत है जो कभी वापस नहीं आएगा और दूसरी ओर भविष्य है जो तेजी से हमारी ओर बढ़ रहा है। वर्तमान की उपेक्षा करके पल मात्र के लिये भी हम उन दोनों युगों में से किसी एक के होकर नहीं जी सकते। ऐसे प्रयास से हमारा शारीरिक एव मानसिक ह्रस हो जाता है। अत: जिस काल में हमारे लिये रहना संभव हो, उसी काल मे रहकर हमें संतोष कर लेना चाहिये। इस विषय में रॉबर्ट लुई स्टीवेंसन ने लिया है कि, ''भारी से भारी बोझ भी 'आज के लिये' तो कोई भी ढो सकता है। चाहे कोई भी हो एक दिन के लिये तो कठिन-से-कठिन परिश्रम कर ही लेता है। सूर्यास्त तक तो कोई भी व्यक्ति मिठास, धैर्य, स्नेह और पवित्रता से रह सकता है। और उसी को जीना कहते हैं। जीवन की हम से यही अपेक्षा है।''

एक दिन के लिये अथवा आज के लिये जीना सीखने के पूर्व, 815 कोर्ट स्ट्रीट सागीनाव मीचीगन की श्रीमती ई.के. शील्ड्स हताश होकर आत्महत्या करने पर उतारू हो गयी थीं। अपनी आपबीती सुनाते हुए श्रीमती शील्ड्स ने बताया कि ''1837 में मेरे पति का देहांत हो गया था, मैं बहुत दु:खी थी। पास में कौड़ी भी न थी। मैंने कैंसाज के रोच फ्लावर कंपनी के मालिक श्री लिओ रोच से नौकरी देने के लिये प्रार्थना की। उनके अधीन मैं पहले भी काम कर चुकी थी इसलिए पहले वाला काम मुझे फिर मिल गया। पहले में देहात और कस्बों के स्कूल बोर्ड्स की

पुस्तकें बेचकर अपनी जीविका कमाती थी। मेरे पास उस समय मोटर थी जिसे मैंने अपने पति की बीमारी के दिनों में बेच दिया था। किंतु इस बार फिर मुझे मोटर खरीदनी पड़ी। महामुश्किल से जो पूँजी मैं जमा कर पाई थी उसे देने के बाद, बची रकम की किश्तें तय करके एक मोटर खरीद ली और पुस्तकें बेचने का काम फिर से शुरू कर दिया।

''मेरा अनुमान था कि इस प्रकार अपने को काम मे लगाकर निराशा से छुटकारा पा जाऊँगी। किंतु अकेले गाड़ी चलाना, अकेले भोजन करना मेरे लिये बोझिल हो उठा और फिर लाभ की दृष्टि से भी जिस क्षेत्र में मैं काम करती थी वह बेकार था। यहाँ तक के मोटर की किस्तों का अल्प भुगतान करना भी मेरे लिये कठिन हो गया।

''1938 के वसंत में, मैं वार्सेलिज के बाह्य प्रांतर मिसौरी में काम करती थी। वहाँ की सड़कें बड़ी ऊबड़-खाबड़ थीं, वहाँ के स्कूल विपन्नावस्था में थे। मुझे अपना एकाकीपन इतना खलने लगा कि मैं हताश होकर आत्महत्या करने के लिये उद्यत हो गयी। जीवन में सफलता की कोई आशा न थी। और न ही कोई मोह था कि जिसके लिये जीती। नित्य सवेरे अपनी दिनचर्या आरंभ करने में बड़ा भय लगता था। किसी-न-किसी बात का डर लगा ही रहता था। मोटरकार की किश्तें अब तक नहीं चुका पायी थी। घर का किराया भी देना था, खाने-पीने के लिये कुछ था ही नहीं। इधर स्वास्थ्य भी गिर रहा था और उधर डाक्टर को देने के लिये दमडी भी पास नहीं थी, ऐसी थी मेरी अवस्था। किंतु उस अवस्था में यदि किसी ने मुझे आत्महत्या के प्रयत्नों से रोका तो इन दो बातों ने - मेरी मृत्यु से मेरी बहन को गहरा धक्का लगेगा, और दूसरे, अपने अंतिम संस्कार के लिए मेरे पास पर्याप्त रकम नहीं थी।

''इसी बीच मैंने एक लेख पढ़ा जिसने मुझे नैराश्य से उबार कर जीने का साहस दिया। उस लेख के, इस प्रेरक वाक्य के प्रति मैं सदैव कृतज्ञ रहूँगी। वाक्य इस प्रकार है - 'समझदार के लिये हर सुबह नई जिंदगी लेकर आती है।' मैंने इस वाक्य को टाइप किया और अपनी गाड़ी के सामने वाले शीशे पर चिपका दिया ताकि गाड़ी चलाते समय वह वाक्य बराबर मेरी आँखों के सामने रहे। मैंने महसूस किया कि एक-एक दिन करके जीना इतना कठिन नहीं। मैंने सीख लिया कि भूत को कैसे बिसराया जाए तथा आगत की चिंता का निराकरण कैसे किया जाए। रोज सवेरे मैं मन-ही-मन कहती -'आज नई जिंदगी का श्रीगणेश है।'

''इस प्रकार, अब मैंने अपने एकाकीपन और निजी अभावों से उत्पन्न भय पर विजय पा ली है। मैं अब सुखी हूँ, बहुत हद तक सफल भी। जीवन के प्रति मुझमें अदम्य उत्साह और अनुराग है। मुझे अब विश्वास हो गया है कि जीवन की विकटतम परिस्थिति भी मुझे आतंकित नहीं कर सकती। मुझे अब भविष्य की बिलकुल चिंता नहीं है। मुझे एक-दो दिन करके जीना सहज मालूम पड़ता है। मैं यह भी जानती हूँ कि समझदार के लिये हर सुबह नयी जिंदगी लेकर आती है।''

मानव प्रकृति की अत्यंत शोचनीय प्रवृत्ति यह है कि हम वस्तुस्थिति से पलायन कर जाते हैं। अपने झराखे के बाहर इठलाते उन विकसित पुष्पों के सौंदर्य की अपेक्षा करके हम अंतरिक्ष के काल्पनिक नंदनवन में खो जाते हैं। आखिर हम ऐसी मूर्खता क्यों करते हैं। इतने दयनीय एवं मूढ़ हम क्यों बन जाते हैं?

स्टीफन लिकोक ने लिखा है कि हमारे जीवन की यह छोटी सी शोभायात्रा भी कितनी विचित्र है। आज का काम कल कर छोड़ दिया जाता है। बालक कहता है कि किशोर होने पर देखा जाएगा, किशोर युवावस्था की प्रतीक्षा करता है और युवा बनने पर कहता है गृहस्थ बनने पर देखेंगे। और तब तक विचार बदल जाता है। सोचता है, गृहस्थ हो गया तो क्या हुआ पहले सांसारिक झंझटों से निपट लूँ, तब देखूँगा। और जब कामकाज से छुट्टी मिल जाती है तब वह अपने अतीत पर दृष्टिपात करता है और उसे लगता है जैसे अतीत पर पाला पड़ गया हो, सबकुछ समाप्त हो गया हो, और तब कहीं जाकर, इतने विलंब के बाद, उसे जीवन के प्रत्येक पल के पूर्ण दोहन में जीवन

की सार्थकता का भान होता है।
डेट्रोयट के स्वर्गीय एडवर्ड इवांस ने यह जानने के पूर्व कि प्रत्येक पल का पूर्ण दोहन ही जीवन की सार्थकता है, चिंता में पड़कर अपने को अधमरा बना लिया था। निर्धनता में पले इस इवांस ने अखबार बेचकर जीविकोपार्जन का श्रीगणेश किया था। फिर पंसारी के मुनीम के रूप में काम किया। उसके उपरांत सात कुटुंबियों के पोषण का दायित्व निभाते हुए वह सहायक लायब्रेरियन का काम करने लगा। वेतन कम था, फिर भी नौकरी छोड़ने में उसे भय लगता था। आठ वर्ष इसी तरह बीत गये तब जाकर कही उसने अपना स्वतंत्र व्यवसाय आरंभ करने का साहस किया। अपने निजी व्यवसाय का श्रीगणेश कर दूसरों से उधार लिये हुए पच्चीस डॉलर की मूल पूँजी पर ही केवल एक वर्ष में उसने बीस हजार डॉलर कमा लिये। किंतु बाद में एक घातक आर्थिक संकट ने उसे दबोच लिया। अपने एक मित्र के लिये उसने भारी रकम अटका दी और वह मित्र बाद में दिवालिया हो गया। संकट का अंत यहीं नहीं हुआ; शीघ्र ही एक और संकट ने उसे धर दबाया। जिस बैंक में उसने अपनी समूची धनराशि जमा कर रखी थी वह भी फेल हो गया, नतीजा यह हुआ कि वह कंगाल हो गया और ऊपर से सोलह हजार का ऋण और आ पड़ा। इस आघात को वह सह नहीं सका। अपनी उस अवस्था का उल्लेख करते हुए उसने बताया कि, ''उन दिनों मेरा खाना-पीना हराम हो गया था। मैं एकदम बीमार पड़ गया। चिंता! चिंता! और चिंता! चिंता ही मेरी बीमारी का मूल कारण थी। एक बार मैं चलते-चलते रास्ते में अचेत होकर गिर पड़ा। एक कदम चलना भी मेरे लिये दूभर हो गया था। मैंने बिस्तर पकड़ लिया। मेरे शरीर में फोड़े निकल आये और धीरे-धीरे वे भीतर-ही-भीतर बढ़ने लगे। पीड़ा इतनी बढ़ी कि बिस्तर पर पड़े-पड़े अपने पर ग्लानि हो आई। अशक्ति बढ़ती गयी। अंत में डॉक्टर ने मेरे जीवन की अवधि कुल दो सप्ताह निश्चित कर दी। इससे मुझे गहरा धक्का लगा। मैंने अपनी वसीयत लिखी और बिस्तर में लेटे-लेटे मृत्यु की प्रतीक्षा करने लगा। सोचा, अब संघर्ष और चिंता से कोई काम नहीं। चिंता को ताक में रख, मैं निश्चिंत होकर सो गया। लगातार दो सप्ताह से मैं सोया नहीं था। किंतु इस बार जीवन तथा उसकी समस्याओं के अंत को इतना निकट देखकर जो सोया तो घोड़े बेच कर सोया। मुझे अशक्त करनेवाली थकान मिटने लगी। मेरी भूख बढ़ी और साथ ही मेरा वजन भी।
''कुछ ही हफ्तों में मैं बैसाखी के सहारे चलने योग्य हो गया और छह सप्ताह बाद तो अपने काम पर भी लग गया। पहले मैं बीस हजार रुपये वार्षिक कमाता था पर अब तीस डॉलर प्रति सप्ताह की नौकरी करके भी मैं प्रसन्न था। मैं जहाजों पर चढ़ाई जाने वाली गाड़ियों के पहियों के पीछे रखे जाने वाले अटकन बेचता था। चिंता का फल मैं भुगत ही चुका था, इसलिये इस बार चिंता को दूर ही रखा। न तो मुझे बीते का पछतावा था और न आगे का भय। मैं अपनी संपूर्ण शक्ति और उत्साह के साथ अटकन बेचने में जुट गया।''

अपनी कार्य-क्षमता के फलस्वरूप एडवर्ड इवांस ने तीव्र प्रगति की और कुछ ही वर्षों में कंपनी का प्रधान बन गया। उसकी इवांस प्रोडक्ट्स नामक कंपनी गत कई वर्षों से न्यूयॉर्क स्टॉक एक्सचेंज की सूची मे स्थान पाती आ रही है। यही नहीं, सन् 1945 में मृत्यु के समय तक एडवर्ड एस. इवांस की गणना अमेरिका के अत्यंत प्रगतिशील व्यवसायिकों में की जाती थी। यदि आप कभी ग्रीनलैंड पर होकर उड़ें तो इवांस विमान स्थल पर उतर सकते हैं। एडवर्ड एस. इवान्स के सम्मान में ही इस विमान स्थल का नामकरण हुआ था।

इवांस के जीवन की उक्त घटना की उल्लेखनीय बात यह है कि यदि उसे चिंता करने की मूर्खता का भान नहीं हुआ होता और आज की परिधि में रहना न आया होता तो उसे अपने जीवन और व्यवसाय में अर्जित सफलताओं से उत्पन्न उल्लास का अनुभव नहीं हुआ होता।
ईसा के पाँच सौ वर्ष पूर्व एक ग्रीक दार्शनिक हेराक्लीट्स ने अपने छात्रों को बताया था कि ''सबकुछ बदलता है,

केवल परिवर्तन का नियम नहीं बदलता।'' अपने इस कथन को स्पष्ट करते हुए उसने कहा कि, ''बहती सरिता के पल-पल परिवर्तित जल में एक बार पैर रखकर, उसी जगह दूसरी बार, फिर उसी जल में पैर नहीं रखा जा सकता, क्योंकि तब तक तो वह बहनेवाला जल बह चुका होता है। सरिता का जल पल-पल परिवर्तित और प्रवाहित होता रहता है। यही नियम मानव जीवन के साथ भी लागू होता है। जीवन निरंतर बदलता रहता है इसलिए आज ही शाश्वत है। फिर निरंतर परिवर्तित, अनिश्चित एवं अनबूझे भविष्य की गुत्थियाँ सुलझाने में आज के सुख को नष्ट क्यों किया जाए?''

प्राचीन रोमन लोगों का कथन था कि, 'आज को हाथ से न जाने दो, आज का पूर्ण उपभोग करो।'

नोवेल टॉमस का दर्शन भी यही है। हाल ही में उनके खेतों पर उनके साथ मैंने एक सप्ताह बिताया था। वहाँ उनके ब्रॉडकास्टिंग स्टूडियो की दीवारों पर जहाँ प्राय: उनकी नजर पड़ती रहती थी, उन्होंने ये शब्द लिख रखे थे। - 'यह आज ईश्वरीय सृष्टि है। हम इसे भोगेंगे और इसमें प्रसन्न रहेंगे।'

❑

यूँ सुलझाएँ अपनी चिंताएँ

चिंताजनक परिस्थितियों से पार पाने के लिए क्या आप शीघ्र कारगर और अचूक नुस्खा जानना चाहेंगे? तथा इस पुस्तक को और आगे पढ़े बिना ही क्या आप उसका प्रयोग करना चाहेंगे? तो लीजिए मैं आपको न्यूयॉर्क अंतर्गत साइरैकस के संसार प्रसिद्ध कैरियर कॉरपोरेशन के प्रधान तथा वातानुकूलित उद्योग के जन्मदाता प्रतिभा संपन्न इंजीनियर श्री विलियम एच. कैरियर द्वारा प्रयुक्त उपाय के बारे में बताऊँगा। यह उपाय चिंता दूर करने वाले अब तक के ज्ञात सभी उपायों मे श्रेष्ठ है। स्वयं श्रीमान कैरियर के न्यूयॉर्क इंजीनियर क्लब में आयोजित सहभोज के समय इस विषय में बताया था।

श्रीमान कैरियर ने बताया कि, ''मैं अपनी युवावस्था में न्यूयॉर्क की बफेलो फोर्ज कंपनी में काम करता था। मुझे मिसूरी के क्रिस्टल सिटी में 'पिट्सबर्ग प्लेट ग्लास कंपनी के प्लांट में गैस शुद्ध करने का कोई यंत्र बनाने का काम सौंपा गया था। यह प्लांट लाखों की लागत का था। गैस की अशुद्धियों को मिटाना ही इस प्रतिष्ठान का उद्देश्य था ताकि इंजिन को हानि पहुँचाए बिना ही उसमें गैस को जलाया जा सके। गैस शुद्ध करने की यह विधि नवीन थी। इसके पूर्व केवल एक बार ही इसका प्रयोग किया गया था, किंतु भिन्न परिस्थितियों में। मिसूरी के क्रिस्टल सिटी में मेरे इस काम में अप्रत्याशित कठिनाइयाँ उठ खड़ी हुईं। किसी हद तक तो यह काम ठीक रहा किंतु पूर्णतया संतोषजनक नहीं।

अपनी इस असफलता से में सन्न रह गया मानो किसी ने सिर पर हथौड़ा दे मारा हो। मेरे पेट में ऐंठन होने लगी। कुछ दिनों तक तो मैं इतना चिंतित रहा कि सो भी न सका।

अंतत विवेक जागा। सोचा कि चिंता से कोई हल नहीं निकलेगा। अत: मैंने चिंता छोड़ अपनी समस्या सुलझाने का उपाय ढूँढ़ निकाल और उसका बडा अद्भुत परिणाम निकला। गत तीस वर्षों से में इसी चिंता-निरोधक नुस्खे का प्रयोग करता आया हूँ। ये नुस्खा सामान्य है और कोई भी इसका उपयोग कर सकता है। इसकी तीन अवस्थाएँ हैं।

पहली अवस्था - इस अवस्था में मैंने अपनी परिस्थिति का निर्भयता और ईमानदारी से विश्लेषण किया और इस निर्णय पर पहुँचा कि असफलता के कारण कौन सा अनिष्ट संभव है। यह तो स्पष्ट ही था कि इस समस्या के कारण न तो मुझे जेल ही होने को थी और न ही कोई मुझे गोली मारने वाला था। यह सच है कि मैं अपदस्थ हो जाता और साथ ही मेरे मालिकों को इस असफलता के कारण मशीनरी हटाने में, उसमें लगाए गये बीस हजार डॉलर का घाटा उठाना पड़ता।

दूसरी अवस्था - अनष्टि क्या हो सकता है, यह जान लेने के पश्चात् मैंने उस अनिष्ट को आवश्यकतानुसार स्वीकार करने का दृष्टिकोण अपनाया। मैंने अपने आप से कहा - 'इस असफलता से मेरी पूर्व अर्जित प्रतिष्ठा को धक्का लगेगा और संभवत: मुझे नौकरी से हाथ धोने पड़े। अगर ऐसा हो भी तो मुझे अन्य जगह भी तो नौकरी मिल सकती है। परिस्थिति जटिलतम भी हो सकती है। जहाँ तक मेरे मालिकों का प्रश्न है, उन्हें यह भलीभाँति ज्ञात है कि हम गैस शुद्ध करने की नवीन पद्धति पर प्रयोग कर रहे हैं और इसलिए उन्हें बीस हजार डॉलर का मूल्य चुकाना भी पड़े तो वे उसे चुका सकते हैं। वे इस धनराशि को अन्वेषण के नाम पर व्यय कर सकते हैं क्योंकि आखिर यह एक प्रयोग ही तो है।

संभावित अनिष्ट को जान लेने के पश्चात् उसे आवश्यकतानुसार स्वीकार करने का दृष्टिकोण अपनाने के फलस्वरूप एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ कि मैंने तुरंत ही हल्कापन तथा एक प्रकार की शांति का

अनुभव किया जो उधर कई दिनों से नहीं कर पाया था।

तीसरी अवस्था - और तब मैंने शांत भाव से अपने समय और शक्ति को मन में स्वीकृत अनष्टि को सुधारने में लगा दिया।

अब मैंने उन उपायों पर विचार करने का प्रयास किया जिनके द्वारा बीस हजार डॉलर की संभावित हानि में कुछ कमी की जा सके।

मैंने कई परीक्षण किये। अंतत: इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यदि हम अतिरिक्त औजारों के लिए पाँच हजार डॉलर और व्यय कर दें तो हमारी समस्या का हल निकल आए। हमने यही किया और इससे फर्म को बीस हजार की हानि के बजाय पंद्रह हजार का लाभ हुआ।

यदि मैं चिंता ही में उलझा रहता तो इतना सब कभी नहीं कर पाता क्योंकि चिंता एकाग्रता का ह्रस कर देती है। जब हम चिंतित रहते हैं तो हमारे विचार सर्वत्र भटकते रहते हैं और हम निर्णय करने की शक्ति से हाथ धो बैठते है। जो भी हो, जब हम अपने आपको अनिष्ट स्वीकार करने के लिए विवश कर लेते हैं, तब हम उन सारी ऊटपटाँग और बेतुकी कल्पनाओं को दूर कर ऐसी स्थिति पैदा कर लेते हैं जिसमें रहकर अपनी समस्याओं पर पूरी तरह अपना ध्यान केंद्रित कर सकें।

उपर्युक्त घटना कई वर्ष पूर्व घटी थी। पर अनिष्ट स्वीकार करने की यह युक्ति इतनी कारगर हुई कि तबसे बराबर मैं इसको क्रियान्वित करता आ रहा हूँ और परिणाम स्वरूप जीवन में सर्वथा चिंता मुक्त हो गया हूँ।''

अब प्रश्न यह है कि विलिस एच. कैरियर का यह सूत्र मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इतना मूल्यवान और व्यावहारिक क्यों है। इसका कारण यह है कि जब हम चिंतावश विवेकहीन होकर उलझनों के घने कुहरे में घबराने लगते हैं तब यह सूत्र एक तीव्र झटके के साथ हमें उस कुहरे से बाहर निकाल लाता है। यह हमारे कदमों को दृढ़ता से धरती पर जमा देता है और हमें स्थिति का भान हो जाता है। यदि हमारे कदमों के नीचे ठोस धरती न हो तो हम किसी सफलता की आशा कर ही कैसे सकते हैं।

व्यावहारिक मनोविज्ञान के जन्मदाता प्रोफेसर विलियम जेम्स का अड़तीस वर्ष हुए देहांत हो गया है किंतु यदि वे आज जीवित होते और 'अनिष्ट को स्वीकार करो' सूत्र के विषय में सुनते तो अवश्य ही इसका हार्दिक स्वागत करते। मेरी इस धारणा का आधार उन्हीं का कथन है। उन्होंने अपने छात्रों से कहा था कि, ''अपनी स्थिति को जैसी है वैसी की स्वेच्छा से स्वीकार कर लो, क्योंकि होनी को स्वीकार करना दुर्भाग्य के किसी भी परिणाम पर विजय पाने का पहला कदम है।''

लिन युटैंग ने अपनी लोकप्रिय पुस्तक 'जीने का महत्त्व' में इन्हीं भावों की अभिव्यक्ति की थी। इस चीनी दार्शनिक का विचार या कि अनिष्ट को स्वीकार करने से मन को सच्ची शांति प्राप्त होती है। मेरा भी यही मानना है। मानस-विज्ञान के अनुसार इसका आशय नवीन शक्ति का संचरण है। एक बार अनिष्ट को स्वीकार कर लेन पर खोने के लिये अधिक कुछ नहीं रह जाता। इसलिये स्पष्ट है कि इससे हमें लाभ-ही-लाभ है। विलिस एच. कैरियर ने बताया कि, ''अनिष्ट को स्वीकार कर लेने के पश्चात् मेरा मन सर्वथा स्वस्थ हो गया और मुझे एक प्रकार की शांति का अनुभव होने लगा, जो गत कई दिनों से नहीं हुआ था। उसके बाद मैं किसी भी विषय पर मनन-चिंतन करने योग्य हो गया था।'' यह बात कितने महत्त्व की है? फिर भी हजारों व्यक्तियों ने अनिष्ट को स्वीकार न कर, उससे सुधार का प्रयास किये बिना, जो कुछ बच रहा उसे भी ठुकरा कर, इस भीषण उथल-पुथल में, अपने को तोड़कर रख दिया। अपने भावी का पुन: निर्माण करने के बजाय, वे अनुभव के साथ कटु और भीषण संघर्ष करने मे जुट गये और अंत में उदासीनता एवं खिन्नता के शिकार बन बैठे। क्या आप यह जानना चाहेंगे कि विलिस एच. कैरियर के

उस चमत्कारिक सूत्र को किसने अपनाया और किसने उसे अपनी समस्याओं पर लागू किया? तो लीजिये एक उदाहरण देखिये।

न्यूयॉर्क में तेल का व्यवसाय करनेवाला एक व्यक्ति मेरी कक्षा में विद्यार्थी था। उस विद्यार्थी ने अपनी कहानी इस प्रकार आरंभ की-

''मैं छला जा रहा था। मुझे विश्वास नहीं हुआ कि ऐसी बातें हम सिनेमा के पर्दे के अतिरिक्त अन्यत्र भी कहीं देख सकते हैं। मैंने उसकी कल्पना तक नहीं की थी। किंतु सचमुच ही मैं छला जा रहा था। यह सब कैसे हुआ जो सुनिये; जिस तेल कंपनी का मैं अधिकारी था, उसके माल पहुँचाने वाले कई ट्रक और ड्राइवर थे। उन दिनों नियम-कायदों का बड़ी दृढ़ता से पालन किया जाता था। और हमारी कंपनी ग्राहकों को जितनी मात्रा में तेल सप्लाई करती थी उसकी राशनिंग को गई थी और हमें नियमित ग्राहकों को तेल की सप्लाई करनी होती थी। हमारे कुछ ड्राइवर हमारे नियमित ग्राहकों को तेल की निश्चित मात्रा से कम तेल देते थे और बचा हुआ तेल उनके अपने ग्राहकों को बेचा करते थे। मैं इस बारे में कुछ नहीं जानता था। इस गैरकानूनी सौदे का सुराग मुझे तब मिला जब एक व्यक्ति सरकारी इंस्पेक्टर के रूप में आया और उसने मुझे से रिश्वत की माँग की। हमारे ड्राइवरों का लिखित प्रमाण उसके पास मौजूद था। उसने मुझे धमकी दी कि मेरे रिश्वत न देने पर वह उन प्रमाणों को जिला एटार्नी के कार्यालय मे पेश कर देगा।

यह तो मैं जनता ही था कि कम-से-कम व्यक्तिगत रूप से इस विषय में चिंतित होने की कोई बात नहीं थी। किंतु मैं इतना अवश्य जानता था कि फर्म के कर्मचारियों के कार्य के प्रति फर्म ही जिम्मेदार है। इसके अतिरिक्त मुझे यह भी ज्ञात था कि यदि यह मामला अदालत तक गया और उसकी चर्चा अखबारों में चली तो इस प्रकार के प्रचार से मेरा व्यवसाय नष्ट हो जाएगा। चौबीस वर्ष पूर्व अपने पिता द्वारा स्थापित इस व्यवसाय पर मुझे बड़ा गर्व था।

इस चिंता के कारण मैं बीमार पड़ गया और तीन दिन और तीन रात तक सो नहीं सका। इसी उलझन में चक्कर काटता रहा कि पाँच हजार डॉलर की रिश्वत उस व्यक्ति को दे दूँ या उसे कह दूँ कि वह जो कुछ करना चाहे करे। इस दुविधा में मैं चक्कर काटता रहा पर किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सका।

तब रविवार की रात्रि को मैंने डेल कारनेगी की 'चिंता छोड़ो' नामक पुस्तक पढ़ी जो पब्लिक स्पीकिंग की कक्षाओं में दी गई थी। पढ़ते-पढ़ते विलिस एच. कैरियर का दृष्टांत सामने आया। जिसमें लिखा था कि 'अनिष्ट का सामना करो।' मैंने सोचा, घूस न देने पर यदि वह धूर्त कुछ लिखित प्रमाण जिला एटर्नी को बता दे तो क्या हो? उत्तर स्पष्ट था-

व्यवसाय की बरबादी, यही एक अनिष्ट था जो हो सकता था। जेल मुझे हो नहीं सकती थी यदि कुछ होता तो यही कि कुप्रचार के कारण मैं बरबाद हो जाता।

तब मैंने मन-ही-मन सोचा, व्यवसाय ही तो नष्ट होगा, और क्या होगा?

मुझे नौकरी खोजनी होगी तो क्या हुआ नौकरी करना कोई बुरी बात तो है नहीं? तेल व्यवसाय संबंधी मेरे अनुभवों के कारण कई कंपनियाँ मुझे खुशी से अपने यहाँ नौकरी दे देंगी, इस विचार से मुझे राहत मिली। तीन दिन और तीन रात तक जिस उलझन के कुहरे से मैं घिरा रहा, वह अब छटने लगा। मेरी उद्विग्नता लुप्त हो गई और आश्चर्य की बात तो यह हुई कि मैं कुछ सोचने-विचारने योग्य हो गया।

'अनिष्ट को सुधारो'- इस तीसरी अवस्था का सामना करने के लिए मेरा मस्तिष्क अब पूर्णतया स्वस्थ हो चुका था। इसलिए जैसे ही मैंने समाधान पर विचार किया, एक सर्वथा नवीन दृष्टिकोण मुझे मिल गया, वह यह था कि यदि मैं अपने एटर्नी को यह सारा किस्सा कह सुनाऊँ तो संभव है कि वह कोई ऐसा रास्ता निकाल सके जो अब

तक मेरे दिमाग में न आया हो। यह कहना मूर्खता होगी कि वह बात पहले मेरे दिमाग में आई ही न थी। आई थी, किंतु चिंताग्रस्त रहने के कारण मैं इस पर विचार नहीं कर पाया था। मैंने उसी समय निश्चय किया कि सवेरे उठने ही पहला काम एटर्नी से मिलने का करूँगा और इस प्रकार चिंता से निश्चित होकर सो गया।

अंत में क्या हुआ? यह कि मेरे वकील ने मुझे जिला एटर्नी से मिलकर सच बात बता देने की सलाह दी। मैंने ठीक वैसा ही किया। जब जिला एटर्नी ने मुझे यह बताया कि यह ठगी का व्यवसाय कई महीनों से चल रहा है जो व्यक्ति सरकारी एजेंट के रूप में मेरे पास आया था, वह एक बदमाश था जिसकी पुलिस को तलाश है, तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। ठगी का व्यवसाय करने वाले इस बदमाश को पाँच हजार डॉलर देने-न-देने की इस दुविधा में तीन रात और तीन दिन तक संतप्त रहने के पश्चात यह सब सुनकर मुझे कितनी राहत मिली यह मैं ही जानता हूँ।

इस अनुभव ने मुझे सदा के लिए एक सबक सिखा दिया, क्योंकि अब जब कभी परेशान कर देने वाली कोई विशेष समस्या सिर पर आ पड़ती है तो मैं विलिस एच. कैरियर के सूत्र का सहारा ले लेता हूँ।

जिन दिनों मिसूरी की क्रिस्टल सिटी में गैस शोधक यंत्र की स्थापना करने के लिए विलिस एच. कैरियर परेशान थे, उन्हीं दिनों मिसूरी अंर्तगत क्रिस्टल सिटी के ब्रोकनवो, नेब्रास्का का एक निवासी अपनी वसीयत लिखने में लगा हुआ था। वह व्यक्ति था अर्ल पी. हेने। वह छोटी आँत के फोड़े से पीड़ित था। एक प्रसिद्ध व्रण विशेषज्ञ तथा अन्य दो डाक्टरों ने भी हेने के रोग को असाध्य घोषित कर दिया था। उन्होंने उन्हें इधर-उधर की चीजें खाने की मनाही कर दी थी। साथ ही यह भी कह दिया था उन्हें किसी प्रकार का क्रोध एवं चिंता न कर शांत और स्थिर चित्त रहना चाहिए। उन्होंने श्री हेने को अपनी वसीयत तैयार कर देने के लिए कह दिया था। इन व्रणों के कारण श्री हेने को पहले ही एक अच्छा, ऊँची आय वाला, पद छोड़ना पड़ा था। अब वे बेकार थे। अब उन्हें घुला-घुलाकर प्राण लेने वाली मृत्यु की प्रतीक्षा मात्र थी।

अंततः उन्होंने एक विरल और अपूर्व निश्चय किया। उन्होंने सोचा ''जब मौत निकट ही है तो समय का पूर्ण दोहन क्यों न किया जाए? मेरी सदा से यह इच्छा रही है कि मरने के पूर्व विश्व पर्यटन कर लूँ। उस इच्छा की पूर्ति का यही समय है।'' यह सोचकर उन्होंने टिकट खरीद लिया।

डॉक्टर सब सन्न रह गये। उन्होंने कहा, ''मि. हेने हम आपको आगाह कर देना चाहते हैं कि यदि आपने यह पर्यटन किया तो आपकी कब्र समुद्र में ही बनेगी।

''नहीं ऐसा नहीं होगा,'' उन्होंने उत्तर दिया। मैंने अपने परिजन को वचन दिया है कि मेरा दफन वहीं होगा, जहाँ मेरे पूर्वज दफनाए गये हैं। मैं एक ताबूत खरीद कर अपने साथ ले लूँगा।'' और उन्होंने एक ताबूत खरीद कर जहाज पर रखवा दिया तथा स्टीमशिप कंपनी के साथ यह व्यवस्था कर ली कि यदि उनकी मृत्यु जहाज पर हो जाए तो स्वदेश लौटने तक शव को जहाज पर सुरक्षित रखा जाए। इस प्रकार वृद्ध उमर खय्याम का उत्साह लिए वे यात्रा के लिए रवाना हो गये। उमर खय्याम ने एक जगह ये भाव व्यक्त किये हैं-

'मिट्टी में मिलने के पहले शेष जीवन का पूर्ण भोग कर लो। क्योंकि तुम्हें मिट्टी में बिना सुरा, संगीत, गायक और मुक्ति के पड़े रहना होगा।' जो भी हो, उन्हें अपनी यात्रा में शराब का अभाव कभी नहीं रहा। उन्होंने बताया, ''मैं तेज-तेज शराब पीता और लंबे-लंबे सिगार फूँकता था। सब प्रकार के व्यंजन मैं खाता था। यहाँ तक कि कुछ ऐसे पदार्थ भी जो मुझे मृत्यु के अधिक निकट ले जाने वाले थे। कई वर्षों के बाद मुझे इस बार इतना आनंद मिला था। हम वर्षा और तूफानों से भी गुजरे। यदि में उनसे भयभीत हो जाता तो अवश्य ही मेरी मृत्यु हो जाती, किंतु इस यात्रा ने मुझे खूब आनंद दिया।

मैं जहाज पर खेलता, गाता, नये-नये मित्र बनाता और आधी रात तक जागता रहता। चीन और भारत पहुँचने पर मैंने महसूस किया कि पूर्व की गरीबी और भुखमरी की यातना के मुकाबले में स्वदेश में अपनी व्यवसाय की कठिनाइयाँ और चिंताएँ नगण्य थीं और अपनी कठिनाइयों और चिंताओं के बावजूद उस तुलना में मुझे अपने जीवन में स्वर्ग-सुख प्राप्त था। मैं अपनी समस्त व्यर्थ चिंताएँ छोड़कर स्वस्थ हो गया। अमेरिका पहुँचने तक मेरा वजन नब्बे पौड बढ़ गया था। मैं सर्वथा भूल चुका था कि मेरे पेट में कभी व्रण (अल्सर) भी हुआ था। इतना सुखी मैं जीवन में कभी नहीं रहा। स्वदेश लौटते ही मैंने ताबूद ठेकेदार को बेच दिया और अपने व्यवसाय में जुट गया। तब से आज तक मैं एक दिन भी बीमार नहीं पड़ा।''

❑

चिंता के प्रभाव को कम करना

कुछ दिन हुए शाम के समय एक पड़ोसी ने मेरा दरवाजा खटखटाया और मेरे परिवार के सब लोगों को चेचक का टीका लगवाने का आग्रह किया। यह व्यक्ति उन कई हजार स्वयंसेवकों में से था जो न्यूयॉर्क के घरों के दरवाजे खटखटाते फिर रहे थे। भयग्रस्त व्यक्ति घंटों टीका लगवाने के लिये पंक्तिबद्ध रहते थे। अस्पतालों में ही नहीं अपितु भट्टीखानों, पुलिस कंपाउंड और बड़े-बड़े औद्योगिक अहातों में टीका केंद्र खोले गये थे। दिन-रात दो हजार से भी अधिक डॉक्टर नर्सें उत्साहपूर्वक लोगों को टीका लगाने में जुटे हुए थे। और आप जानते हैं इस सरगर्मी का मूल कारण क्या था। वह यह कि अस्सी लाख की जनसंख्या वाले न्यूयॉर्क शहर में आठ व्यक्तियों को चेचक निकल आयी थी और उनमें से दो की मृत्यु हो गई थी।

मैं गत सैंतीस वर्षों से न्यूयॉर्क शहर में रह रहा हूँ, किंतु मनोवेगजन्य चिंता रोग से सावधान करने के लिये किसी ने भी अब तक मेरा दरवाजा नहीं खटखटाया। यद्यपि इन वर्षों में जितनी जनहानि चेचक से हुई है, उससे दस हजार गुनी अधिक जनहानि चिंता रोग के कारण हो चुकी है। पर किसी भी स्वयंसेवक ने आकर मुझे सावधान नहीं किया कि दस में से एक अमरीकी को स्नायु-विघटन का शिकार होना पड़ेगा और उनमें से अधिकांश के रोगों का कारण मानसिक होगा। इसलिये आज मैं यह परिच्छेद लिख कर आपको सावधान कर रहा हूँ।

चिकित्सा विज्ञान के महान् नोबल पुरस्कार विजेता डॉक्टर एलेग्जी केरेल के अनुसार, जो व्यवसायी चिंता से लड़ना नहीं जानते, उन्हें अकाल मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है, यही हाल गृहिणियों, बड़े-बड़े डॉक्टरों और मजदूरों का है।

कुछ वर्ष पूर्व सांटा-फे रेलवे के एक चिकित्सा प्रशासक डॉक्टर ओ.एफ. गोबर के साथ टेक्सस और न्यू मेक्सिको का मोटर में पर्यटन कर मैंने अपनी छुट्टियाँ बिताई थीं। उनका पद वस्तुत: कोलराडो और सांटा-फे हॉस्पिटल एसोसिएशन के मुख्य चिकित्सक का था। चिंता के प्रभाव की बात चल पड़ी थी। उन्होंने कहा-

''यदि रोगियों को चिंता और भय से पिंड छुड़ाना आता तो जितने रोगी डाक्टरों के पास आते हैं उनमें से सत्तर प्रतिशत अपनी व्याधियों का उपचार स्वयं कर लेते। मैं उनकी व्याधियों को काल्पनिक नहीं कहता, वे वास्तविक ही होती हैं। यहाँ तक कि कभी-कभी तो उनका कष्ट उनके लिये असह्य भी हो उठता है। ये चिंता से उद्‌भूत व्याधियाँ स्नायुजन्य अजीर्ण, उदरव्रण, हृदय रोग, अनिद्रा, सिरदर्द और लकवा आदि हैं।''

''ये व्याधियाँ वास्तविक है,'' डॉक्टर गोबर ने कहा, ''मैं इनके बारे में इतनी अच्छी तरह से इसलिये जानता हूँ कि मैं स्वयं बारह वर्ष तक उद्रव्रण से पीड़ित रह चुका हूँ।

''भय से चिंता होती है और चिंता आपको उद्विग्न और हताश बना देती है। यह आपके पेट की नसों को प्रभावित करती है। पेट के अंदर के वात पदार्थों को विषम कर देती है। फलस्वरूप उदरव्रण की उत्पत्ति हो जाती है।''

डॉक्टर जॉजेफ एफ. मोण्टेग्यु जोकि 'नर्वस स्टमक ट्रबल' नामक पुस्तक के लेखक हैं, यही कहते हैं कि उदरव्रण का कारण आपके खाद्य नहीं अपितु वह चिंता है, जो आपको खाये जाती है।

मेयो क्लिनिक के डॉक्टर डब्ल्यू.सी. अलवारेज का मत है कि उदरव्रण मनोवेगों के उतार-चढ़ाव के साथ घटते-बढ़ते रहते हैं।

इस कथन का आधार मेयो क्लिनिक के उदर रोग से पीड़ित पंद्रह हजार रोगियों का परीक्षण है। इनमें से अस्सी प्रतिशत रोगियों की व्याधियों का आधार शारीरिक बिल्कुल नहीं था। भय, चिंता, घृणा, स्वार्थपरता और दुनिया की वास्तविकता के अनुकूल अपने को न ढाल सकने की अयोग्यता ही उन व्याधियों की मुख्य कारण थी।

उद्व्रण आपका विनाश कर सकते हैं। 'लाइफ' पत्रिका के अनुसार तो घातक व्याधियों में उदरव्रण का स्थान दसवाँ हो गया है।

हाल ही में मैयो क्लिनिक के डॉक्टर हेरोल्ड सी. हेबेन के साथ मेरा पत्र-व्यवहार हुआ था। अमेरिका के औद्योगिक क्षेत्रों के डॉक्टरों के एसोसिएशन के वार्षिक अधिवेशन में भाषण करते हुए उन्होंने बताया कि 44.3 वर्ष की औसत आयु वाले 176 व्यावसायिक प्रबंधकों की स्थिति का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि उन प्रशासकों में से एक तिहाई से भी कुछ अधिक तनावपूर्ण जीवन संबंधी तीन रोगों में से किसी एक से पीड़ित थे। ये रोग हैं, हृदय-रोग, आंतव्रण, और रक्तचाप। जरा सोचिये, हमारे एक तिहाई व्यावसायिक प्रबंधक पैंतालीस वर्ष की आयु तक पहुँचने के पूर्व ही हृदय-रोग, रक्तचाप अथवा अलसर के कारण अपने शरीर का नाश कर बैठतें हैं। कितनी महँगी पड़ती है उनको अपनी यह सफलता! इतना होने पर भी वे सफलता को खरीद नहीं पाते। हृदय-रोग और उदरव्रण के बदले व्यावसायिक उन्नति प्राप्त करने वाला व्यक्ति भी कभी सफल हो सका है?

अपने स्वास्थ्य को खोकर यदि विश्व का समस्त वैभव भी पाया तो क्या पाया? और यदि विश्व वैभव प्राप्त हो भी जाए, तब भी कोई व्यक्ति न तो भूख से अधिक खा सका है और न एक बार में एक से अधिक बिस्तर पर सो ही सका है। फिर इतना तो एक मजदूर को भी नसीब हो सकता है। कदाचित् एक उच्च प्रबंधक की वनिस्पत वह अधिक गहरी नींद सो लेता है और अपने भोजन का अधिक आनंद ले लेता है। इससे स्पष्ट है कि मैं अलबामा में एक साझेदार किसान बनना पसंद करूँगा ताकि खेतों में बेंजो बजाऊँ और मस्त रहूँ। वनिस्पत इसके कि रेल रोड या सिगरेट कंपनी का प्रबंधक बनूँ और पैंतालीस वर्ष पार करने के पहले ही अपना स्वास्थ्य बरबाद कर लूँ।

सिगरेट के इस प्रसंग में सिगरेट बनाने वाले की कहानी सुनिये- कनाडा के वन प्रांतर में विश्राम करते हुए एक विश्व-विख्यात सिगरेट निर्माता की हाल ही में हृदय गति रुक जाने से मृत्यु हो गई। उसने लाखों डॉलर की संपत्ति जमा की और अंत में 61 वर्ष की अवस्था में स्वर्ग सिधार गया। जीवन में कई वर्षों तक वह व्यावसायिक सफलता प्राप्त करने के लिये जूझता रहा। मेरे विचार से तो लाखों की संपत्ति इकट्ठी करने वाले इस सिगरेट निर्माता की सफलता मेरे पिताजी द्वारा अर्जित सफलता की आधी भी नहीं है। वे मिसूरी में किसान का जीवन बिताते थे। नवासी वर्ष की अवस्था में उनकी मृत्यु हुई और उस समय भी वे निर्धन ही थे।

प्रसिद्ध मेयो बंधुओं ने घोषणा की थी कि एक अस्पताल में आधे से अधिक रोगी स्नायु-रोग से पीड़ित थे। मृत्यु के उपरांत चीर-फाड़ द्वारा जब उनकी शिराओं की सूक्ष्म जाँच की गयी तब पता चला कि उनकी शिराएँ उतनी ही स्वस्थ थीं जितनी स्वस्थ जैक डेम्सी की हैं। अत: इन स्नायु रोगों का हेतु शिराओं का ह्रस न होकर निस्सारता, निष्फलता, व्याकुलता, चिंता, भय, पराजय और नैराश्य आदि के मनोविकार हैं। प्लेटो कहा करता था कि ''चिकित्सक सबसे बडी भूल यह करते है कि वे मस्तिष्क का उपचार न करके केवल शरीर का ही उपचार करने में प्रयत्नशील रहते हैं, जबकि शरीर और मस्तिष्क परस्पर जुड़े हुए हैं और उनका एक-दूसरे से पृथक उपचार नहीं किया जाना चाहिये।

इस महान सत्य का ज्ञान प्राप्त करने में चिकित्सा विज्ञान को तेईस सौ वर्ष लग गये। आज कल हम 'साइको सोमेटिक' नामक एक विशेष प्रकार की चिकित्सा पद्धति का विकास कर रहे हैं। इस नवीन पद्धति के अनुसार रोगी का शारीरिक ही नहीं, मानसिक उपचार भी किया जाता है और यही उपयुक्त समय भी है कि हम इस नवीन दिशा की ओर अग्रसर हों, क्योंकि चेचक, हैजा, पीला बुखार आदि अनेक कीटाणु-जन्य व्याधियों का, जिन्होंने लाखों मनुष्यों को अकाल मृत्यु का ग्रास ग्रास बना दिया है, बहुत कुछ उन्मूलन कर दिया गया है; किंतु चिंता, भय, घृणा निष्फलता और नैराश्य आदि मनोविकारजन्म शारीरिक और मानसिक रोगों का उपचार करने में चिकित्सा

विज्ञान अब तक असमर्थ रहा है। इन मनोविकारों से उत्पन्न व्याधियों से मरने वालों की संख्या अत्यंत शोचनीय गति से बढ़ती जा रही है।

चिंता एकदम स्वस्थ व्यक्ति को भी रोगी बना सकती है। जनरल ग्रांट को इस बात का पता अमरीकी गृह-युद्ध के आखिरी दिनों में इस प्रकार लगा - ग्रांट नौ महीनों से रिकमॉण्ड का घेरा डाले पड़ा था। जनरल ली के थके-माँदे सैनिक मुँह की खा चुके थे। सारी की मारी रेजीमेंटें पलायन कर रही थीं। कुछ लोग अपने खेमों में भयभीत होकर रोते चिल्लाते प्राथनाएँ कर रहे थे। भयानक दु:स्वप्न उन्हें घेरे हुए था। अपने अंत को एकाएक इतना निकट देखकर ली के सैनिकों ने रिकमॉण्ड के कपास और तंबाकू के गोदामों में आग लगा दी। गोला-बारूद में भी आग लगा दी। एक ओर ऊँची लपटें उठ रही थीं और दूसरी ओर रात के अँधेरे में सैनिक भाग रहे थे। इधर शेरीडन की घुड़सेना रेल की पटरियाँ उखाड़ती और रसद की गाड़ियों को लूटती हुई आगे बढ़ रही थी। उधर जनरल ग्रांट कोनफेडरेट्स को सब तरफ से घेरकर उनका तीव्र गति से पीछा कर रहा था।

किंतु असह्य सिरदर्द से त्रस्त ग्रांट अपनी सेना से पिछड़ गया। उसे खेत पर बने एक मकान पर ठहर जाना पड़ा। उस घटना का उल्लेख करते हुए उसने अपनी डायरी में लिखा है कि ''मैं सारी रात अपने पैरों को गरम पानी और सरसों के तेल से धोता रहा, कलाइयों और गर्दन के पिछले भाग पर सरसों के तेल का लेप करता रहा। मुझे आशा थी कि सवेरा होते-होते मैं अवश्य स्वस्थ हो जाऊँगा।''

यद्यपि सवेरा होते ही वह स्वस्थ हो गया किंतु इसका कारण सरसों का लेपन नहीं था। इसका कारण था जनरल ली का वह संदेश जो एक घुड़सवार द्वारा लाया गया था और जिसमें उसने आत्मसमर्पण का संदेश भेजा था।

उसने अपनी डायरी में आगे यह भी लिखा है : ''जिस समय वह सैनिक, आत्मसमर्पण का संदेश लेकर पहुँचा, मेरे सिर में पीड़ा ज्यों-की-त्यों थी, किंतु संदेश पढ़ते ही वह लुप्त हो गई।''

इससे स्पष्ट है कि चिंता, उद्वेग और मनोवेगों ने ही ग्रांट को बीमार कर दिया था, किंतु जैसे ही विजय, विश्वास और सफलता के भाव उसमें उत्पन्न हुए, वह स्वस्थ हो उठा।

उस घटना के सत्तर वर्ष बाद रुजवेल्ट मत्रिमंडल के वित्त विभाग के उप सचिव हैनरी मोरगेन थाओ को भी लगा कि उसके बीमार रहने और चक्कर महसूस करने का कारण चिंता ही है। उसने अपनी डायरी में लिखा है : ''प्रेसिडेंट गेहूँ के दाम बढ़ाना चाहते थे अत: उन्होंने 44 लाख बुशेल गेहूँ एक ही दिन में खरीद लिए। इसकी मुझे बड़ी चिंता हुई। जिस समय खरीद की यह कारवाई हो रही थी, मुझे सचमुच चक्कर आ गये। मैं घर चला गया और भोजन के उपरांत दो घंटे तक सोता रहा।''

यदि मैं यह देखना चाहूँ कि चिंता मनुष्यों की कैसी दशा कर सकती है, तो मुझे किसी पुस्तकालय में या किसी डॉक्टर के पास जाने की आवश्यकता नहीं रहती। जिस कमरे में बैठकर मैं यह पुस्तक लिख रहा हूँ, उसकी खिड़की से एक मकान दिखाई देता है, जिसमें चिंता के कारण स्नायु विघटन की घटना हो चुकी है। उसी के पास एक दूसरे मकान में चिंता के कारण एक अन्य व्यक्ति मधुमेह का शिकार बन चुका है। शेयर बाजार में मंदी आने पर उसके रक्त और मूत्र में मधु की मात्रा बढ़ जाती है।

जब प्रसिद्ध दार्शनिक मोनटाइन अपने नगर बोर्दो का मेयर चुना गया तो उसने नागरिक बंधुओं से स्पष्ट कह दिया था कि मैं आपका यह काम करूँगा पर इसकी परेशानी सिर पर नहीं लूँगा। मैं यह कार्यभार अपने सिर पर लेने को तैयार हूँ किंतु अपने स्वास्थ्य की कीमत पर नहीं।

जिस पड़ोसी के बारे में मैं ऊपर बता चुका हूँ, उसने शेयर बाजार के कारोबार को मधुमेह-रोग के रूप में अपने रक्त में समा लिया और अपने को प्राय: नष्ट कर दिया।

चिंता के कारण आप को गठिया एव आर्थराइटिस जैसे रोग हो सकते हैं और घूमने-फिरने के लिए आप पहियोंवाली गाड़ी का सहारा लेने के लेने के लिये विवश हो सकते हैं। कोग्नेल विश्वविद्यालय के मेडिकल स्कूल के डॉक्टर एल. सेसिल आर्थराइटिस रोग के संसार प्रसिद्ध विशेषज्ञ हैं और उन्होंने आर्थराइटिस के ये चार मुख्य कारण बताये हैं-

1. नौसेना के जहाज का विध्वंस,
2. आर्थिक विनाश और पीड़ा,
3. एकाकीपन और चिंता,
4. पुरानी नाराजगी।

यह तो स्वाभाविक ही है कि केवल ये चार संवेगजन्य परिस्थितियाँ ही आर्थराइटिस की हेतु नहीं बन सकतीं, क्योंकि यह रोग उसके विभिन्न कारणों के अनुसार कई प्रकार का होता है। सामान्यत: ये चार कारण, जो डॉक्टर सेसिल ने बताये हैं, इस रोग को फैलाने में जिम्मेदार होते हैं। उदाहरणार्थ मंदी के दिनों में मेरे एक मित्र को जबरदस्त आर्थिक हानि उठानी पड़ी थी, इतनी कि वह कौड़ी-कौड़ी का मोहताज हो गया। गैस कंपनी ने गैस देना बंद कर दिया और बैंक ने मकान पर अधिकार कर लिया। इन सब चिंताओं के कारण उसको आर्थराइटिस की बीमारी हो गयी। उपचार एवं पथ्य के बावजूद बीमारी ठीक नहीं हो सकी और उसका स्वास्थ्य तभी सुधरा जब उसकी आर्थिक स्थिति मे सुधार हुआ।

चिंता के कारण दाँतों तक का ह्रस हो जाता है। एक बार डॉ. आई.एल. मेकगोनिगल ने अमेरिकन डेंटल एसोसिएशन के समक्ष भाषण करते हुए बताया कि चिंता, भय और चिढ़ से उत्पन्न क्लेशप्रद मनोवेग शरीर में कैलशियम के संतुलन को नष्ट कर दाँतों का ह्रस कर सकते हैं। अपने एक रोगी का जिक्र करते हुए उन्होंने बताया कि उस रोगी की पत्नी अकस्मात् बीमार हो गयी थी। उस बीमारी के पहले रोगी के दाँत पूर्णतया स्वस्थ थे। किंतु बाद में उसकी पत्नी को तीन सप्ताह तक अस्पताल में रहना पड़ा और उस अवधि में चिंता के कारण उसके दाँतों में नौ दरारें पड़ गयीं।

क्या आपने कभी अत्यंत चपल और विषम थायरॉइड ग्रंथि वाले व्यक्ति देखे हैं। मैंने तो देखे हैं। मैंने उन्हें काँपते और थर्राते देखा है। वे उन व्यक्तियों के समान दिखते है जो मृत्यु से भयभीत हों। जानते हैं, ऐसा क्यों होता है इसलिये कि हमारे शरीर का संचालन करने वाली थायरॉइड ग्रंथि अपने स्थान से हट जाती है। इससे हृदय की धड़कन बढ़ जाती है और सारा शरीर भट्टी की तरह जलने लगता है। यदि समय पर ऑपरेशन अथवा उपचार द्वारा रोग पर काबू न पा लिया जाए तो जलन के कारण ही रोगी की मृत्यु हो जाती है।

दक्षिण में रहनेवाले हब्शी और चीनी लोगों को चिंताजन्य हृदय रोग नहीं होता, क्योंकि वे परिस्थितियों को धैर्यपूर्वक स्वीकार करते हैं। हृदय रोग से मरने वाले कृषि-मजदूरों की संख्या से बीस गुनी अधिक संख्या हृदय रोग से मरने वाले डॉक्टरों की है। डॉक्टर लोग तनावपूर्ण जीवन बिताते हैं और उसका जुर्माना वे इस तरह अदा करते हैं। विलियम जेम्स का कथन है कि ''भगवान भले ही पापों को क्षमा कर दें किंतु स्नायु संस्थान हमें किसी भी भूल के लिये क्षमा नहीं करता।''

मैं आपको एक आश्चर्यजनक बात बताता हूँ, जिस पर शायद आप विश्वास नहीं करेंगे। वह बात यह है कि अमेरिका में प्रतिवर्ष आत्महत्या करके मरने वाले लोगों की संख्या, पाँच प्रमुख संक्रामक रोगों से मरने वाले लोगों की संख्या की अपेक्षा कहीं अधिक है।

इस आत्महत्या का मूल कारण क्या है? केवल चिंता।

जब युद्ध के दिनों में क्रूर चीनी शासकों को अपने बंदियों को कष्ट देना होता तो वे उन्हें उनके हाथ-पाँव बाँधकर निरंतर टपकने वाले पानी के घड़े के नीचे बिठा देते। पानी उन पर रात-दिन टपका करता। आखिर, वे पानी की बूँदे हथौड़े की तह उन पर गिरतीं और उन्हें पागल बना देतीं। स्पेन में भी कानूनी जाँच-पड़ताल के समय कष्ट देने का यही ढंग अपनाया जाता था। हिटलर भी नजर-बंदी शिविरों में ऐसी ही यातना युद्ध-बंदियों को देता था। चिंता भी पानी की उन निरंतर गिरने वाली बूँदों के समान है। दिमाग में लगातार घूमनेवाली यह चिंता मनुष्य को पागलपन और मृत्यु की ओर ढकेल देती है।

❑

चिंता को दिमाग में स्थान न दें

मैं उस रात्रि को कभी नहीं भूलूँगा जब मेरीयन जे. डगलस (यह उसका वास्तविक नाम नहीं है, कुछ व्यक्तिगत कारणों से उसने अपना परिचय गुप्त रखने का अनुरोध किया है) कुछ वर्ष पूर्व मेरी कक्षा का विद्यार्थी था। यहाँ मैं उसकी सच्ची कहानी सुना रहा हूँ, जो उसने हमारी प्रौढ कक्षा में कही थी। उसने अपने परिवार पर दो बार पड़ी विपत्ति का हाल बताया था। पहली विपत्ति तब आयी जब उसकी आँखों की पुतली, उसकी पाँच वर्ष की बेटी इस संसार से चल बसी थी। उसे और उसकी पत्नी को लगा कि वे इस विपत्ति को सह नहीं सकेंगे, किंतु उसके दस महीनों बाद ही भगवान से उसे एक दूसरी बच्ची दी और वह भी पाँच दिन उनके बीच रहकर चल बसी।

यह दोहरा वियोग उसके लिये अत्यंत असह्य हो उठा। उसने कहा, ''मैं उसे सह नहीं सका। मेरा सोना, खाना, पीना, सभी हराम हो गया। न कोई आराम कर सकता था, न निश्चिंत होकर जी सकता था। मेरे स्नायु बुरी तरह से झकझोर हो उठे थे और मेरी आस्था टूट चुकी थी।'' आखिर वह डॉक्टरों के पास गया। एक ने नींद लेने की गोलियाँ खाने को कहा तो दूसरे ने यात्रा पर जाने का सुझाव दिया। उसने वे दोनों बातें कर देखी पर कोई लाभ नहीं हुआ। उसने बताया, ''मुझे ऐसा लगता मानो मेरा शरीर शिकंजे के बीच रख दिया गया है और वह अधिकाधिक कसता जा रहा है। यदि आपने भी कभी अनुभव किया हो तो जानते होगे कि शोक का उद्वेग कितना भीषण होता है।

''किंतु प्रभु कृपा से मेरा एक चार वर्षीय बेटा और था। उसने मुझे अपनी समस्या का समाधान सुझाया। एक दिन अपरा में जब मैं खिन्न बैठा था, वह आया और पूछने लगा, 'बापू, मेरे लिये एक नाव बना दोगे?' नाव बनाने की मन:स्थिति मेरी थी नहीं। वस्तुत: मैं कुछ भी कर सकने की स्थिति में नहीं था, फिर भी उस हठी बालक की बात मुझे माननी पड़ी।

''नाव का वह खिलौना बनाने में मुझे तीन घंटे लगे। बना चुकने के बाद मुझे मानसिक शांति और राहत का अनुभव हुआ, जिसका अनुभव मैं कई महीनों से नहीं कर पाया था।

''इस अनुभव ने मुझे उदासीनता से छुटकारा दिलाया तथा मुझे कुछ सोचने-विचारने की प्रेरणा दी। कई महीनों के बाद मैं पहली बार कुछ सोच सका। मुझे लगा कि जिस काम को करने में आयोजना एवं सोच-विचार की आवश्यकता हो उस कार्य को करते समय चिंता नहीं रहती। मेरे इस नाव बनाने के कार्य ने मेरी चिंता को समूल उखाड़ फेंका और मैंने अपने को व्यस्त रखने का निश्चय किया।

''दूसरी रात को अपने को व्यस्त रखने का निश्चय कर मैं घर के प्रत्येक कमरे में गया और उनमें किये जानेवाले कुछ आवश्यक कार्यों की सूची तैयार कर ली। बीसियों जगह मरम्मत की जरूरत थी। बुक केस, सीढ़ियाँ, खिड़कियाँ, खिड़कियों के छज्जे, नोब, ताले तथा टपकते हुए नल आदि कई वस्तुओं की मरम्मत करनी थी। आपको आश्चर्य होगा कि दो सप्ताह के अंदर मैंने इन दो सौ बयासिल पदों की सूची बना ली, जिन पर ध्यान देना आवश्यक था।

''मैंने गत दो वर्षों में उसमें से अधिकांश काम पूरा कर लिया है और अपने जीवन को उत्साहवर्धक कार्य-प्रवृत्तियों से भर दिया है। सप्ताह में दो रात के लिये मैं न्यूयॉर्क की प्रौढ़ शिक्षा संबंधी कक्षाओं में भाग लेता हूँ। अपने कस्बे की कई नागरिक प्रवृत्तियों में भी भाग ले चुका हूँ और आजकल एक स्कूल बोर्ड का चेयरमेन हूँ। और भी बीसियों प्रवृत्तियों में भाग लेता रहा हूँ तथा रेडक्रॉस जैसी संस्थाओं के लिए चंदा जुटाने में सहयोग भी करता हूँ। अब मैं इतना व्यस्त रहता हूँ कि चिंता करने के लिये समय ही नहीं मिलता।''

चिंता करने के लिये समय नहीं! हाँ, जब गत महायुद्ध उग्रता से चल रहा था और चर्चिल को अठारह घंटे काम करना पड़ता था जब उन्होंने भी ये ही शब्द कहे थे। जब उन्हें पूछा गया कि इतनी अधिक जिम्मेदारियों से आपको चिंता नहीं होती। उत्तर में उन्होंने बतलाया कि, ''मेरे पास समय की कहाँ है कि मैं चिंता करूँ।''

चार्ल्स केटरीन का भी यही हाल था जब वे मोटर के लिये सेल्फ स्टार्टर का आविष्कार कर रहे थे। हाल ही में वे रिटायर हुए हैं। इसके पहले वे विश्व विख्यात जनरल मोटर्स के रिसर्च कॉर्पोरेशन के उपाध्यक्ष थे। जिन दिनों वे ये प्रयोग कर रहे थे, इतने गरीब थे कि एक घास-घर को उन्होंने अपनी प्रयोगशाला बना रखा था। प्रयोग संबंधी आवश्यक वस्तुएँ खरीदने के लिये उन्होंने अपनी पत्नी के पंद्रह सौ डालर, जो उसने दूसरों को पियानो सिखा कर कमाये थे, खर्च कर डाले। इसके अतिरिक्त उन्हें अपने जीवनबीमा पर पाँच सौ डालर और उधार लेने पड़े। मैंने उनकी पत्नी से पूछा कि ऐसे दुर्दिनों में भी आपको कभी चिंता नहीं होती थी? ''क्यों नहीं होती थी, जरूर होती थी'' उन्होंने उत्तर दिया। ''मैं इतनी चिंतित रहती थी कि मेरी नींद तक गायब हो गयी थी, किंतु मिस्टर केटरीन को कोई चिंता नहीं थी। वे अपने कार्य में इतने सलग्न रहते थे कि चिंता करने के लिये उनके पास समय ही नहीं रहता था।''

महान् वैज्ञानिक पास्टल ने 'पुस्तकालयों और प्रयोगशालाओं की शांति' की बात कही है, वहाँ शांति क्यों रहती है इसलिये कि पुस्तकालयों एवं प्रयोगशालाओं में सभी लोग सामान्यत: अपने-अपने कामों में इतने अधिक मग्न रहते हैं कि उन्हें अपने बारे में चिंता करने का समय ही नहीं मिलता। कोई भी अन्वेषण करनेवाला व्यक्ति शायद ही कभी स्नायु रोग से पीड़ित रहता हो। मनोविज्ञान का एक प्रमुख नियम यह है कि मानव मस्तिष्क कितना ही प्रखर क्यों न हो, एक ही समय में उसके लिये एक से अधिक विषयों पर सोचना नितांत असंभव हो जाता है। यदि आपको विश्वास न हो तो प्रयोग करके देख लीजिये।

आप इसी समय अपनी पीठ के बल झुक जाइये, आँखें बंद कर लीजिये और स्टेचु ऑफ लिबरटी तथा अपने किसी आगामी कार्यक्रम पर एक साथ विचार कर देखिये। चलिये, कोशिश कीजिये।

आपको पता चला होगा कि आप एक साथ दो विषयों पर विचार नहीं कर सकते। यही बात मनोभावों के साथ भी लागू होती है। हम एक ही बार में दो मिन्न मन:स्थितियों में नहीं रह सकते। किसी रोचक कार्य से उत्पन्न उत्साह एवं सक्रियता तथा चिंता-जन्य निष्क्रियता का अनुभव हम एक साथ कभी नहीं कर सकते। एक मनोभाव, अपने से भिन्न दूसरे मनोभाव को हमेशा उखाड फेंकता है। इस जानकारी के कारण ही मनोचिकित्सक युद्ध के दिनों में कमाल हासिल कर सके। जब युद्ध के भीषण अनुभवों से विचलित, त्रस्त तथा स्नायु रोग से पीड़ित सैनिक लौटकर आते तो डॉक्टर लोग उपचारस्वरूप उन्हें व्यस्त रहने का नुस्खा दिखा देते।

स्नायु व्याघात से पीड़ित उन सैनिकों का प्रत्येक चेतन क्षण विभिन्न प्रवृत्तियों से भर दिया जाता। सामान्यत: ये प्रवृत्तियाँ बाह्य होती थीं - जैसे मछली पकड़ना, शिकार खेलना, गेंद अथवा गोल्फ खेलना, तस्वीरें खींचना, बाग लगाना, नाचना आदि। उन सैनिकों को समय ही नहीं दिया जाता कि वे उन भीषण अनुभवों पर कुछ सोच-विचार कर सकें।

उपर्युक्त चिकित्सा पद्धति को मानस चिकित्सा क्षेत्र में 'ओकुपेशन थेरेपि' कहते हैं। इसमें रोगी को दवा के स्थान पर काम दिया जाता है। पर यह कोई नवीन पद्धति नहीं है। ईसा के पाँच सौ वर्ष पूर्व भी पुराने ग्रीक चिकित्सक इसी चिकित्सा पद्धति का प्रचार करते थे।

वेन फ्रेंकलिन के समय में क्वेकर लोग फिलाडेल्फिया में इसी चिकित्सा पद्धति का प्रयोग करते थे। सन् 1774 में क्वेकर सिनेटोरियम का निरीक्षण करते हुए एक महाशय को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि मनोरोग से पीड़ित व्यक्ति कलई के काम में व्यस्त थे। पहले तो उन्होंने सोचा कि इन गरीब भाग्यहीनों का यहाँ शोषण किया

जा रहा है। पर बाद में क्वेकर लोगों ने उन्हें समझाया कि उनका अब तक का अनुभव यह है कि काम करने से रोगियों के स्वास्थ्य में सचमुच ही सुधार होता है तथा उनके स्नायुओं को राहत मिलती है।

कोई भी मानव शास्त्री क्यों न हो, वह आपको यही बताएगा कि व्यस्तता अस्वस्थ स्नायुओं के लिये अब तक की उपलब्ध सभी औषधियों में सर्वोत्तम है। हेनरी डब्ल्यु. लोंगफेलो को इस बात का ज्ञान अपनी युवा पत्नी के मर जाने पर हुआ। यह दुर्घटना इस प्रकार हुई - एक बार उनकी पत्नी दीपक के पास बैठी सील लगाने के लिये मोम पिघला रही थी, कि एकाएक उसके कपड़ों में आग लग गयी। उसकी चीख सुनते ही लोंगफेलो ने उसे बचाने के लिये उस तक पहुँचने का प्रयास किया, किंतु वे पहुँचे तब तक वह मर चुकी थी। कुछ समय तक इस दुर्घटना से लोंगफेलो इतने संत्रस्त रहे कि उन्मादावस्था के निकट पहुँच गए। किंतु उनके सौभाग्य से उनके तीन बच्चों की देखरेख उन्हें करनी करनी पड़ती थी। अत: दु:ख की स्थिति में भी वे उन बच्चों की माता और पिता दोनों की हैसियत से देखभाल करने लगे। वे उन्हें सैर पर ले जाते, कहानियाँ सुनाते और उनके साथ खेल खेलते। अपने बच्चों के साथ बिताये गये उन क्षणों को 'दी चिल्ड्रंस ऑवर' शीर्षक कविता में उन्होंने अमर कर दिया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने कवि दाँते की कृतियों का भी अनुवाद किया। इन सभी कामों में वे इतने व्यस्त रहे कि अपनी सारी चिंताओं को सर्वथा भूल गये तथा अपने मन की शांति को पुन: प्राप्त कर लिया। जब टेनिसन के अत्यंत घनिष्ठ मित्र ऑर्थर हेलम की मृत्यु हो गयी तो उसने भी कहा ''मुझे कार्य में निमग्न रहना चाहिये, नहीं तो नैराश्य में टूट जाऊँगा।''

हममें से अधिकांश को चक्की चलाने में तथा अपना दैनिक कार्य करते-करते उसमें तल्लीन हो जाने में कोई कठिनाई नहीं होती। किंतु, कार्य के उपरांत अवकाश के क्षण हमारे लिये बड़े भारी हो उठते हैं। उस समय जबकि अवकाश के कारण हमारा मन प्रसन्न रहना चाहिये, हम पर चिंता के बादल छा जाते हैं। हम विचार करने लगते हैं, 'जीवन में हमारी प्रगति भी हो रही है या नहीं या उसी ढर्रे में पड़े हुए हैं।''

जब हम निठल्ले रहते हैं तो हमारे मस्तिष्क में शून्यता आने लगती है। भौतिक विज्ञान का प्रत्येक विद्यार्थी इस बात को जानता है कि प्रकृति शून्यता पसंद नहीं करती। मस्तिष्क की यह शून्यता अथवा रिक्तता जलते हुए बिजली के लट्टू के अंदर की रिक्तता से बहुत कुछ मिलती-जुलती होती है। आप उस लट्टू को तोड़ दीजिये और प्रकृति उस सैद्धांतिक रिक्तता को वायु से भरकर समाप्त कर देगी। इसी तरह प्रकृति भी रिक्त अथवा शून्य मस्तिष्क को भरने के लिये दौड़ पडती है। सामान्यत: वह इस रिक्तता को मनोभावों से भरती है। क्योंकि चिंता, भय, घृणा, ईर्ष्या तथा स्पर्धा के मनोभाव प्राकृत ओज तथा प्राकृत चेतन-शक्ति से संचालित होते हैं। ये मनोभाव इतने प्रबल होते हैं कि वे मस्तिष्क से अन्य सभी शांत एवं सुखद विचारों एवं मनोभावों को बाहर निकाल फेंकते हैं।

टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, कोलंबिया के प्रशिक्षण अध्यापक जेम्स. एल. मसेल इसी बात को बड़े रोचक ढंग से कहते हैं, ''चिंता का स्वभाव है कि वह आप पर उस समय प्रबल रूप से होवी होती है, जब आप अपने दैनिक कार्य से निवृत्त हो खाली बैठे रहते हैं। उस अवस्था में आपकी कल्पना भड़क सकती है। वह अनेक प्रकार की हास्यास्पद संभावनाओं की उद्भावना कर सकती है तथा आपकी प्रत्येक भूल को राई से पर्वत बना सकती है। ऐसे समय में आपका मस्तिष्क उस बिना लोड के चलने वाली मोटर के समान होता है, जो अत्यंत तीव्र गति से भागती है और ऐसे समय में सारी मोटर के टुकड़े-टुकड़े हो जाने तथा उसके पुर्जों के जल उठने का भय रहता है।''

चिंता का उपचार यही है कि अपने को किसी रचनात्मक कार्य में पूर्णतया तल्लीन कर दिया जाए। इस सत्य का अनुभव करने तथा उसे कार्यरूप में परिणत करने के लिये यह आवश्यक नहीं कि आप कॉलेज के प्राध्यापक ही हों। युद्ध के दिनों में मैं शिकागो की एक गृहस्थ महिला ने मिला था। उसने मुझे एक घटना बताई जिसके द्वारा

उसने यह महसूस किया कि ''चिंता का उपचार यही है कि अपने को किसी सक्रिय कार्य में पूर्णतया तल्लीन कर दिया जाए।'' न्यूयॉर्क से मिसूरी में अपने फार्म तक की यात्रा के दौरान एक डायनिंग कार में इस दंपति से मेरी मुलाकात हुई थी। (मुझे खेद है कि मैं उनके नाम नहीं जान सका। यों मैं प्रमाणिकता सिद्ध करनेवाले नाम-पते के बिना कोई भी कहानी अथवा उदाहरण देना पसंद नहीं करता)। उस घटना का वर्णन करते हुए उन्होंने मुझे बताया कि पर्ल हारबर की घटना के बाद उनका इकलौता पुत्र सेना में भर्ती हो गया था। उस पुत्र की चिंता ने उस महिला के स्वास्थ्य को गिरा दिया था। वह बार-बार उसी के बारे मे सोचा करती थी - वह कहाँ होगा सुरक्षित तो होगा? क्या लड़ रहा होगा? क्या घायल हो गया होगा? कहीं वह मारा तो नहीं गया होगा? आदि-आदि। जब मैंने उसे पूछा कि उसने अपनी चिंता पर किस प्रकार काबू पाया तो उसने बताया कि ''मैं व्यस्त रहने लगी।'' उसने अपनी नौकरानी को छुट्टी देकर, घर भर का काम स्वयं करके, उसमें व्यस्त रहने का प्रयत्न किया। किंतु इसमें उसे विशेष सफलता नहीं मिली। उसने कहा, ''मेरी कठिनाई यह थी कि मैं घर भर का काम बिना मस्तिष्क की सहायता लिये मशीन की तरह कर लेती थी। अत: मेरे मस्तिष्क में चिंता ज्यों-की-त्यों बनी रहती। बिस्तर बिछाते या बर्तन धोते मैंने महसूस किया कि मुझे कोई ऐसा काम करना चाहिये जो शारीरिक और मानसिक दृष्टि से मुझे प्रतिक्षण व्यस्त रख सके। इस दृष्टि से मैंने एक बड़े डिपार्टमेंटल स्टोर में सेल्सवुमन की नौकरी कर ली।

इस काम से मुझे अपने उद्देश्य में सफलता मिली, मैं अनेक कामों से घिरी रहने लगी। मेरे चारों ओर ग्राहक वस्तुओं के नाम, दाम, तथा रंग पूछते हुए उमड़ने लगे। मुझे अपने तात्कालिक कार्य के अतिरिक्त किसी अन्य विषय पर सोचने का समय ही नहीं मिलता था। रात को भी थके हुए पैरों को विश्राम देने के अतिरिक्त अन्य कोई बात मुझे नहीं सूझती थी। भोजन करते ही मैं बिस्तर में जा दुबकती और सो जाती। चिंता के लिये मेरे पास न तो समय ही था और न शक्ति ही।''

जिस बात को जॉन कॉपर पॉविज ने 'दी आर्ट ऑफ फॉरगेटिंग द अनप्लेजेंट' (अरुचिकर को भूलने की कला) नामक पुस्तक में बताया या उसे उस महिला ने स्वत: ही अनुभव कर लिया था। जॉन कॉपर पॉविज का कहना है कि सुरक्षा, अगाध आंतरिक शांति तथा सुखद स्तब्धता के भाव मनुष्य की नसों को व्यस्तता की अवस्था में आराम देते हैं।

संसार की अत्यंत प्रसिद्ध महिला अन्वेषक ओसा जॉनसन ने हाल ही में मुझे शोक एवं चिंता से छुटकारा पाने की अपनी कहानी सुनायी थी। आपने शायद वह कहानी पढ़ी भी होगी। कहानी का शीर्षक है, 'आई मेरीड एडवेचर'। सचमुच ही यदि किसी महिला ने उपक्रम को जीवनसाथी बनाया तो इसी ने। जब यह सोलह वर्ष की थी, मार्टीन जोनसन के साथ इसका विवाह हो गया था। मार्टीन जोनसन उसे केन्सास अंतर्गत केन्युट के नागरिक जीवन से दूर बोर्नियों के जंगलों मे ले गये। लगभग पच्चीस वर्षों तक ये केन्सास दंपति संसार का भ्रमण करते रहे। नौ वर्ष पूर्व अमेरिका लौटने पर उन्होंने व्याख्यान-माला का श्रीगणेश किया और स्थान-स्थान पर अपने प्रसिद्ध चलचित्रों का प्रदर्शन करने लगे। इसी दौरान वे डेनवर के तटवर्ती प्रदेशों के दौरे के लिये एक हवाईजहाज से रवाना हुए। विमान यकायक मार्ग की उपत्यकाओं से टकरा गया और मार्टीन जॉनसन इस दुनिया से चल बसे। डॉक्टरों को विश्वास हो गया था कि ओसा अब कभी भी बीमारी से नहीं उठ सकेगी। पर कदाचित् वे इस महिला को अच्छी तरह से नहीं जानते। थे। इस दुर्घटना के तीन महीनों के बाद ही पहियोंवाली कुर्सी में बैठकर उसने बड़ी-बड़ी समाओं में भाषण देना आरंभ कर दिया। एक सत्र में ही उसने सौ सभाओं में भाषण दे डाले। जब मैंने उससे पूछा कि उसने ऐसा क्यों किया? तो उत्तर में उसने बताया कि ''मैंने समय काटने के लिये ही वह किया, ताकि मैं दु:खी और चिंतित न रहूँ।''

ओसा जॉनसन ने उसी सत्य का अनुभव किया जिसके बारे में सौ वर्ष पूर्व टेनिसन अपनी एक कविता में कह चुके थे कि ''मुझे कार्य में व्यस्त रहना चाहिये, वरना मैं नैराश्य में टूट जाऊँगा।''

एडमिरल वीर्ड ने भी इसी सत्य का अनुभव किया था। वे पाँच महीनों तक दक्षिण ध्रुव में फैली हिमानियों में धँसी हुई एक लकड़ी की कुटिया में अकेले रहे थे। ये हिमानियाँ अपने में प्रकृति के कई प्राचीनतम रहस्यों को समाये हुये हैं, और युरोप तथा अमेरिका के सम्मिलित आकार के इस अनजाने महाद्वीप को ढँके हुए हैं। एडमिरल वीर्ड ने अकेले ही वहाँ पाँच माह व्यतीत किये थे। वहाँ की सौ मील की परिधि में किसी जीवित प्राणी का नामोनिशान तक नहीं था। कड़ाके की सर्दी पड़ती थी। बर्फीली हवाएँ सनसनाती हुई उनके कानों के पास से गुजरती और उसनकी साँस अंदर-ही-अंदर भारी होकर जमती सी सुनाई देती। अपनी 'अलोन' (एकाकी) पुस्तक में एडमिरल वीर्ड ने उस हृदयविदारक एव घोर अंधकार में बिताये हुए उन पाँच महीनों में प्राप्त अपने अनुभवों का वर्णन किया है।

वहाँ दिन भी रातों के समान ही अंधकारमय होते थे। अपना मानसिक संतुलन बनाये रखने के लिये उन्हें व्यस्त रहना पड़ता था।

उन्होंने लिखा है, ''रात को सोने के पूर्व सवेरे का कार्यक्रम बनाने का मैंने एक नियम सा बना लिया था। मैंने समय को अलग-अलग कामों में बाँट दिया था। एक घंटे तक भाग निकलने के लिये तैयार की गयी सुरंग पर काम करता, आधा घंटा दरारें भरने में लगता, एक घंटा ड्रम सीधे करने में लगाता, एक घंटा रसद के लिये बनायी गयी सुरंग की दीवारों में पुस्तकें रखने के लिये खंड बनाता तथा दो घंटे आदमी से खींची जाने वाली स्लेज गाड़ी के पुर्जे ठीक करता।

यह समय विभोजन बड़ा कमाल का था। इसके द्वारा मैं अपने आप पर कठोर नियंत्रण रखने में सफल हो सका। बिना इसके या ऐसी ही किसी अन्य व्यवस्था के मेरा दैनिक जीवन निरुद्देश्य हो जाता और उसका परिणाम यह होता कि मेरा जीवन विशृंखलित हो जाता।''

यदि हम चिंचित हैं तो हमें पुरानी चिकित्सा पद्धति के अनुसार औषध-सेवन न कर व्यस्तता का उपचार करना चाहिए। यह बात हॉवर्ड के 'मेडीसिनल क्लिनिक' के भूतपूर्व प्राध्यापक स्वर्गीय डॉक्टर रिचर्ड सी. केबॉट जैसे आधिकारिक व्यक्ति द्वारा कही गयी है। अपनी पुस्तक ''वॉट मैन लिव बाई' में उन्होंने बताया है कि ''एक चिकित्सक के नाते मुझे यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि प्रबल आशंका, असमंजस, भय तथा दुविधा की स्थिति से उत्पन्न व्याधि से पीड़ित व्यक्ति काम मे अलग रह कर निरोग हो जाते हैं। काम करने से रोगी में साहस पैदा होता है। यह स्वावलंबन के समान है और इसे इमरसन ने सदैव के लिए गौरवपूर्ण बना दिया है।''

यदि मैं और आप कार्यव्यस्त न रहकर बैठे-बैठै चिंता ही में घुला करें तो चार्ल्स डार्विन के शब्दों में, हम अपने भीतर ऐसे कीटाणुओं का पोषण करने लगेंगे जो हमें अंदर-ही-अंदर खोखला बना देंगे और हमारी कार्यक्षमता एवं इच्छा-शक्ति को नष्ट कर देंगे।

मैं न्यूयॉर्क के एक ऐसे व्यवसायी को जानता हूँ जिसने व्यस्त रहकर मन में उठने वाली आशंकाओं से संघर्ष किया। वह इतना व्यस्त रहने लगा कि उत्तेजित एवं क्रोधित होने का उसे समय ही नहीं मिलता था। उस व्यापारी का नाम ट्रेंपर लोंगमेन है और 40 वॉल स्ट्रीट में उसका ऑफिस है। वह मेरी प्रौढ़ कक्षाओं का विद्यार्थी था। 'चिंता पर विजय कैसे प्राप्त की जाए' इस विषय पर उसने इतना प्रभावशाली एवं मनोरंजक भाषण किया कि कक्षा समाप्त होते ही मैंने उसे अपने साथ रात का भोजन करने के लिये आमंत्रित किया। होटल में आधी रात से अधिक समय तक बैठे-बैठे हम उसके अनुभवों के बारे में बातचीत करते रहे। उसी दौरान उसने एक घटना का उल्लेख किया ''अठारह वर्ष पूर्व चिंता के कारण मुझे अनिद्रा-रोग हो गया था। मैं क्रुद्ध चिड़चिड़ा और उत्तेजित रहने लगा। मुझे

लगा कि मैं धीरे-धीरे स्नायु-रोग का शिकार बनता जा रहा हूँ।

''मेरी चिंता के कई कारण थे। न्यूयॉर्क अंतर्गत 418 वेस्ट ब्रोडवे की क्राउन फ्रूट एंड एक्सट्रेक्ट कंपनी का मैं खजांची था। हमने गेलन के नाप के टीनों में स्ट्रॉबेरी भरवा कर पाँच लाख डॉलर खर्च कर दिये। गत बीस वर्षों से टीन में भरी ये स्ट्रॉबेरी हम आइसक्रीम बनाने वालों को बचते आये हैं। एकाएक हमारी बिक्री ठप हो गयी, क्योंकि नेशनल डेरी और बोर्डेन जैसे आइसक्रीम बनानेवाले व्यवसायी बड़ी तेजी से अपना उत्पादन बढ़ा रहे थे। स्ट्रॉबेरी के टीन न खरीद कर वे उनके बैरल खरीदने लगे और इस प्रकार समय एवं पूँजी की बचत करने लगे। नतीजा यह हुआ कि हमारे पास पाँच लाख डॉलर के मूल्य की स्ट्रॉबेरी टीनों में भरी रह गई। इसके अलावा आगामी बारह महीनों के लिये दस लाख डॉलर के मूल्य की स्ट्रॉबेरी खरीदने का आगे का सौदा भी हम कर चुके थे। बैंक से पहले ही पैंतीस लाख डॉलर का ऋण लिया जा चुका था। हमारे लिये उस ऋण का भुगतान करना अथवा उसे रीन्यु करवाना असंभव था और इसलिये यदि मुझे चिंता थी तो आश्चर्य ही क्या?

''मैं कैलिफोर्निया अंतर्गत वाटसनविले नामक स्थान पर गया। वहाँ पर हमारा कारखाना था। वहाँ अपने प्रेसिडेंट को बहुत समझाया कि इन बदली हुई परिस्थितियों के फलस्वरूप हमारा कारोबार नष्ट हो जाएगा। किंतु उन्होंने विश्वास नहीं किया और सारा-दोष न्यूयॉर्क के ऑफिस के मत्थे मढ दिया। बेचारा कर्मचारी कई दिनों के लगातार अनुरोध के बाद कहीं उन्हें सहमत कर सका कि अब अधिक स्ट्रॉबेरी टीनों में न भरी जाएँ तथा नये साल को सेनफ्रांसिस्को में नये बाजार भाव पर बेच दिया जाए। ऐसा करने से हमारी समस्याएँ लगभग सुलझ गयीं। इसके साथ ही मेरी चिंता का भी अंत हो जाना चाहिये या किंतु ऐसा हुआ नहीं, क्योंकि चिंता भी एक आदत है जो एकाएक नहीं छूटती, और यही बात मेरे साथ हुई।

''न्यूयार्क से लौटने पर मैं हर बात के लिये परेशान रहने लगा। इटली से हमें चेरी खरीदनी थी, अन्नानास हमें 'हवाई' से खरीदने थे, इन सभी चिंताओं के कारण मैं उत्तेजित एवं क्षुब्ध रहने लगा। नींद गायब हो गयी और जैसा कि पहले ही बता चुका हूँ, मैं स्नायु रोग की ओर बढ़ने लगा।

''उस वैराग्य में भी मैंने जीने की एक युक्ति ढूँढ़ ही निकाली, जिसने मेरे अनिद्रा रोग को ठीक कर दिया और जिससे मेरी चिंता लुप्त हो गयी। मैं व्यस्त रहने लगा और अपनी समस्त शक्ति के साथ समस्याओं के समाधान में जुट गया। पहले मैं दिन में सात घंटे काम करता था किंतु अब पंद्रह-सोलह घंटे तक काम करने लगा। सवेरे आठ बजे ऑफिस जाता और रात से भी अधिक समय तक वहीं काम में फँसा रहता। मैंने अपने घर पर और भी कुछ नया काम और नयी जिम्मेदारियाँ ले ली थीं। आधी रात को जब मैं घर लौटता तो इतना थका होता कि बिस्तर में गिरते ही गहरी नींद सो जाता।

लगभग तीन महीनों तक यही हाल रहा। चिंता की आदत तब तक लगभग छूट चुकी थी और मैं पुन: अपने उसी सामान्य आठ घंटों के काम पर आ गया। यह बात अठारह वर्ष पहले की है। तब से अब तक में कभी अनिद्रा रोग का शिकार नहीं हुआ हूँ।''

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ ने एक बडी ही सारभूत बात कही है कि, ''खाली समय में अपने सुख-दु:ख पर विचार करना ही हमारे दु:खी होने का कारण है, इसलिये ऐसी बातें न सोचिये। यदि करने-धरने को और कुछ न हो तो मक्खियाँ ही मारा कीजिये पर बेकार न बैठिये। ऐसा करने से आप का रक्त संचालन ठीक तरह से होगा। आप के मस्तिष्क की चेतना जाग उठेगी और उसकी लहर शीघ्र ही चिंता को दूर कर देगी। काम कीजिये और व्यस्त रहिये। यह सबसे उत्तम विचार है।

चिंता निवारण का पहला नियम : व्यस्त रहिये, चिंतित व्यक्ति को चाहिये कि वह हर वक्त व्यस्त रहे, नहीं तो

नैराश्य में डूब जाएगा।

❑

अनिष्ट को स्वीकार कीजिए

जब मैं बालक था तब मिसूरी के उत्तर-पश्चिम में एक पुराने तथा सुनसान मकान में रहता था। वह लकड़ी का बना हुआ था। एक दिन मैं मकान के सबसे ऊपर के कमरे में अपने मित्रों के साथ खेल रहा था। जब मैं नीचे उतर रहा था, मैंने अपना पैर खिड़की की चौखट पर रखा और नीचे कूद पड़ा। नीचे कूदते समय मेरे बायें हाथ की तर्जनी में जो अंगूठी थी वह एक कील में उलझ गयी और उँगली कट गयी। मैं डर से चीख पड़ा। मुझे निश्चय हो गया कि अब मैं मर जाऊँगा, किंतु बाद में जब हाथ का घाव भर गया तो एक क्षण के लिये भी मुझे इस बारे में चिंता नहीं हुई। चिंता करने से होता भी क्या। मैंने होनी को स्वीकार कर लिया था।

अब मुझे कभी-कभी महीनों तक ख्याल नहीं आता कि मेरे केवल तीन उँगलियाँ और एक अँगूठा ही है।

कुछ वर्ष पूर्व मैं न्यूयॉर्क नगर के उस स्थान पर जो ऑफिसों का केंद्र है, किसी कार्यालय में एक व्यक्ति से मिला जो फ्रेट एलिवेटर चलाता है। मैंने देखा उसका बायाँ हाथ कलाई के पास से कटा हुआ था। मैंने उससे पूछा, ''तुम्हें इस कटे हुए हाथ की चिंता नहीं होती?'' ''बिल्कुल नहीं।'' उसने कहा, ''मैं इस संबंध में शायद ही कभी सोचता हूँ। मैं अविवाहित हूँ सिर्फ सुई में धागा पिरोते समय मुझे इसका खयाल आता है।'' यह एक बड़ी अजीब बात है कि अनिवार्य परिस्थिति को हम कितनी जल्दी स्वीकार कर लेते हैं और अपने को उसके अनुरूप ढाल कर कितनी जल्दी उनकी चिंता छोड़ देते हैं।

प्राय: मुझे हॉलैंड अंतर्गत एमस्टरडम के पंद्रहवी सदी के गिरजाघर के भग्नावशेष पर खुदे हुए एक लेख का खयाल आता है, फ्लेमिश भाषा के इस लेख में लिखा है कि, ''जो जैसा है वैसा ही रहेगा, उससे भिन्न नहीं हो सकता।''

जैसे-जैसे कालचक्र चलता जाता है, हम बहुत सी ऐसी दु:खद परिस्थितियों का सामना करते रहते हैं जो वैसी ही बनी रहती हैं, बदलती नहीं। हमारे सामने केवल एक ही रास्ता रहता है कि हम उन परिस्थितियों को जैसी हैं वैसी ही स्वीकार कर लें और अपने को उनके अनुकूल ढाल लें, या फिर विद्रोह का रुख अपनाकर अपनी जिंदगी बरबाद कर लें अथवा स्नायुरोग के शिकार बन जाएँ।

इसी विषय में मेरे एक प्रिय दार्शनिक जेम्स की सतवाणी का यह अंश सुनिये, '' जो जैसा है, उसे प्रसन्नता से स्वीकार कीजिये,'' उसने कहा, ''होनी को स्वीकार करना दुर्भाग्य के परिणामों पर विजय पाने के लिये पहला कदम है।'' ओरेगॉन पोर्टलैंड अंतर्गत 2840 एन.ई. 49 एवेन्यु की एलिजाबेथ कॉनले को इस बात का अनुभव बड़ी कठिनाइयाँ सह लेने के बाद हुआ। हाल ही में उन्होंने मुझे एक पत्र लिखा जिसमें बताया है कि, ''जिस दिन हमारी सशस्त्र सेनाएँ उत्तरी अफ्रीका में अपनी विजय की खुशियाँ मना रही थीं, मुझे दूसरे विभाग से सूचना मिली कि मेरा भतीजा, जिसे मैं खूब प्यार करती थी, युद्ध में लापता है, कुछ समय बाद दूसरे तार से यह सूचना मिली कि वह मर गया है।

शोक से मुझे काठ सा मार गया। अब तक मैं सोचती थी कि मेरा जीवन बड़ा सुखी है। मेरे पास मन-भाती नौकरी हैं। मैंने अपने इस भतीजे की उसे आगे बढ़ाने में बहुत सहायता की थी। एक युवक की सभी अच्छाइयाँ उसमें थी। उसे देखकर मैं सोचती कि मेरे प्रयत्न उत्तम रूप से फलीभत हो रहे हैं। किंतु इस खबर ने मेरी दुनिया लूट ली, मुझे अब जीना बेकार लगने लगा। मैं अपने काम और मित्रों की उपेक्षा करने लगी। हर बात से मैं किनारा करती। मैं क्रोधी और विद्रोही बन गयी। मैं सोचती, 'वह क्यों मर गया। वह तरुण जिसको कि जीवन के बहुत दिन गुजारते थे, क्यों मारा गया।' मैं इस घटना को स्वीकार नहीं कर सकी। विषाद से इतनी घिर गयी कि अपना सब काम छोड़कर दु:ख और आँसुओं में अपने जीवन को डुबो लेने का निश्चय कर लिया।

अपना काम छोड़ने की तैयारी में मैं अपने कागजात व्यवस्थित कर रही थी कि उनमें से एक पत्र मेरे हाथ लगा जिसे मैं भूल चुकी थी। यह पत्र उसने कुछ वर्षों पूर्व मेरी माँ की मृत्यु के समय लिखा था। उसमें लिखा था, ''यह सच है कि हम सब, विशेष कर आप, उनके स्नेह से संचित हो गयी हैं किंतु मुझे विश्वास है कि आप सबकुछ यथावत् निभाती रहेंगी और आपको अपने वैयक्तिक दर्शन से प्रेरणा मिलती रहेगी। आपने मुझे जो मोहक सत्य सिखाये हैं, उन्हें मैं कभी नहीं भूलूँगा। आपसे दूर मैं कहीं भी क्यों न रहूँ, सदैव याद रखूँगा कि आपने मुझे - होनी को एक पुरुष की तरह स्वीकार करना और मुस्कराना - सिखाया है।

मैंने उस पत्र को बार-बार पढ़ा और मुझे लगा जैसे वह स्वयं मेरे पास खड़ा बातें कर रहा हो और कह रहा हो कि आप वही क्यों नहीं करतीं जो आपने मुझे सिखाया है। चाहे कुछ भी हो, अपनी जीवन नौका खेती चलिये, अपने दु:खों को मुस्कराहट में छुपा कर काम करती रहिये।

पत्र की प्रेरणा से मैं फिर से अपने काम जुट गयी। मैंने क्रोध और विद्रोह छोड़ दिया। सोचती, जो होना था सो हो गया, मैं उसे बदल नहीं सकती किंतु मैं उसकी बात तो रख सकती हूँ। मैंने अपने दिमाग और अपनी समस्त शक्ति को काम करने में लगा दिया। मैं उन सैनिकों को पत्र लिखने लगी जो किसी के बेटे थे। मैंने जीवन के नवीन आनंद तथा नए मित्रों की खोज में प्रौढ़ व्यक्तियों की रात्रि कक्षाओं में जाना शुरू कर दिया। इससे मुझमें एकाएक अप्रत्याशित परिवर्तन हुआ। मैंने, बीती बातों पर, जो सदा के लिये बीत चुकी थीं, दु:खी होना छोड़ दिया। अब मैं रोज खुश रहती हूँ। मेरा भतीजा भी यही चाहता था। मैंने जीवन से समझौता कर होनी को स्वीकार कर लिया है, अब मैं पहले की वनिस्पत अधिक पूर्ण और सार्थक जीवन व्यतीत कर रही हूँ।''

ओरेगॉन पोर्टलैंड की एलिजाबेथ कॉनले ने वही सीखा जो कभी-न-कभी हम सबको सीखना होगा और वह यह कि हमें होनी को स्वीकार करना चाहिये। जो जैसा है वैसा ही रहेगा इससे मिन्न नहीं हो सकता, यह पाठ ग्रहण करना आसान नहीं। यहाँ तक कि राजगद्दियों पर बैठे राजा भी इसे मुश्किल से याद रख पाते हैं। स्वर्गीय जॉर्ज पंचम ने बकिंघम महल के अपने पुस्तकालय की दीवारों पर ये शब्द लिखवा रखे थे कि, ''हे प्रभु मुझे बुद्धि दे कि मैं असंभव की कामना न करूँ और बिगड़ी बात पर आँसू न बहाऊँ।' शोपनहावेर ने इसी विचार को इस प्रकार रखा है, ''जीवन यात्रा में समर्पण के भाव का प्रमुख महत्त्व है।''

स्पष्ट है कि केवल परिस्थितियाँ ही हमें सुखी अथवा दु:खी नहीं बनातीं, बल्कि वह ढंग भी जिससे हम उन परिस्थितियों का सामना करते हैं, वही ढंग हमारी भावनाओं का निर्माण करता है। ईसा का कथन था कि ''स्वर्ग और नर्क हमारे भीतर ही हैं।''

हम सभ, आवश्यकतानुसार विनाश अथवा विपत्ति को सहकर उस पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। भले ही हमें लगे कि ऐसा नहीं होगा। किंतु हम में एक ऐसी आश्चर्यजनक आंतरिक शक्ति है जो हमें यदि हम उसका प्रयोग करें, तो पार लगा दे। हम यह नहीं जानते कि हम अपने अनुमान से भी अधिक शक्तिशाली हैं।

स्वर्गीय बूथ टर्कींगटन कहा करते थे, ''कोई भी दूसरी कठिनाई मुझ पर क्यों न आए, मैं उसे बर्दाश्त करने के लिये सदा तैयार हूँ, किंतु अंधेपन को मैं कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता।''

तब एक दिन जब वे साठ वर्ष के लगभग थे, उन्हें फर्श पर बिछी दरी के रंग धुँधले दिखायी देने लगे। वे उस दरी के बैलबूटों को स्पष्ट नहीं देख सके। तब वे एक नेत्र विशेषज्ञ के पास पहुँचे तो उसने उन्हें यह दु:खद सत्य सुना दिया कि उनकी नेत्र-ज्योति घटती जा रही है। एक आँख की ज्योति तो जा चुकी थी तथा दूसरी भी ज्योतिहीन होने को ही थी। जिस अभिशाप का उन्हें भय था वही उन पर छा गया।

किंतु टर्कींगटनने इस क्रूरतम अभिशाप को कैसे झेला? क्या उन्हें अपने जीवन के उन अंतिम दिनों पर दु:ख हुआ?

नहीं, इसके विपरीत उन्हें आश्चर्य हुआ कि वे इस विपत्ति को इतनी आसानी से कैसे सह गए। उन्होंने विनोद का सहारा लिया। दृष्टि के सामने तैरते हुए काले धब्बे उन्हें क्षुब्ध कर देते थे क्योंकि वे उनके दृष्टि पथ में अँधेरा फैला देते थे। फिर भी जब कभी कोई बडा सा धब्बा यकायक उनके सामने आ जाता तो वे कह उठते, ''लो, ये दादाजी फिर आ गये न जाने सवेरे-सवेरे कहाँ निकल पड़े?''

ऐसी हस्ती को तकदीर भी कैसे मात दे सकती है। नहीं दे सकती न! जब टर्कींगटनबिलकुल अंधे हो गये तो उन्होंने कहा कि, ''मैंने अंधापन उसी प्रकार स्वीकार किया है जिस प्रकार कोई व्यक्ति किसी अन्य वस्तु को स्वीकार करता है। मैं जानता हूँ कि अपनी पाँचों ज्ञानेंद्रियों की शक्ति को खोकर भी केवल अपने मस्तिष्क के भरोसे जीवित रह सकता हूँ, क्योंकि वास्तव में हम मन की आँखों द्वारा ही देखते हैं और उसी की शक्ति पर जीते हैं। चाहे इस बात को हम भले ही न जानें।''

अपनी खोई हुई ज्योति को पुन: प्राप्त करने की आशा में टार्किंगटन को एक साल में बारह बार ऑपरेशन करवाने पड़े। स्थान विशेष पर इंजेक्शन लगा कर उनका ऑपरेशन किया जाता। किंतु क्या उन्होंने उसके विरुद्ध कभी कोई शिकायत की। नहीं। क्योंकि वे जानते थे कि इसके बिना छुटकारा नहीं। अपनी पीड़ा को कम करने का एक मात्र उपाय यही था कि होनी को सहज रूप से स्वीकार कर लिया जाए। उन्होंने रेलवे अस्पताल में अलग कमरे में रहने से इनकार कर दिया तथा वे उस वार्ड में चले गये वहाँ दूसरे बीमार रहते थे। वे वहाँ उन बीमारों का मन बहलाने का प्रयत्न करते। उन्हें बार-बार ऑपरेशन के लिए जाना पड़ता यद्यपि वे अच्छी तरह जानते थे कि आखिर उनकी आँखों का क्या होने वाला है। वे हमेशा सोचते कि यह ऑपरेशन भी कितने कमाल की चीज है! वे कहते कि, ''मनुष्य की आँख जैसे कोमल अंग का ऑपरेशन करके विज्ञान ने कितना कमाल हासिल कर लिया है।''

कोई साधारण आदमी होता तो अपने अंधेपन तथा बारह ऑपरेशन की पीड़ा को झेलते-झेलते, स्नायु रोग का शिकार हो जाता, पर टार्किंटन अपने इस अनुभव को इतना मूल्यवान समझते थे कि वे किसी भी अन्य सुखद अनुभव के साथ उसका विनिमय करने के लिए तैयार नहीं थे। उस अनुभव ने उन्हें होनी को स्वीकार करना सिखाया था। उस अनुभव से उन्होंने सीखा कि जीवन में कोई ऐसी पीड़ा नहीं जो हमारी बर्दाश्त से परे हो। जॉन मिल्टन का अनुभव यह है कि ''अंधापन स्वयं में इतना दु:खद नहीं है, दु:खद है अंधेपन को सह न सकना।''

न्यू इंग्लैंड की प्रसिद्ध फेमिनिस्ट (स्त्रियों के अधिकारों के लिये लड़नेवाले दल की सदस्या) मारगेट फुलर ने अपना धार्मिक विश्वास बताते हुए कहा कि, ''मैं विश्व को जैसा है उसी रूप में स्वीकार करती हूँ।''

जब क्षुब्ध, वृद्ध कार्लाइल ने यह बात इंग्लैंड में सुनी तो उसने कहा कि, ''उसने अच्छा ही किया और हमारे लिये भी उत्तम यही होगा कि हम भी वही करें और होनी को स्वीकार कर लें।''

यदि हम उस पर बड़बड़ाएँ उसका विरोध करें, अथवा उस पर दु:ख व्यक्त करें तो भी जो होना है सो तो होगा ही। उसे हम बदल नहीं सकते। हमें अपने ही को बदलना होगा। मैं इसलिये यह कहता हूँ, कि वह मेरा अपना अनुभव है।

एक बार मैंने वस्तुस्थिति को स्वीकार करने से इनकार कर दिया। उसे टालता रहा, उस पर बड़बड़ता रहा। उसके खिलाफ विद्रोह किया। नींद न आने से मेरी रातें हराम हो गयीं। सभी अवांछित समस्याएँ मुझ पर लद गयीं और अंत में एक वर्ष के इस आत्मक्लेश के पश्चात् मुझे उसी स्थिति को स्वीकार करना पड़ा, जिसे मैं पहले ही से जानता था कि बदल नहीं सकूँगा।

मुझे चाहिये था कि मैं कई वर्ष पूर्व कहे गये वॉल्ट वाइट मेन के इस कथन से शिक्षा ग्रहण करता कि-

''अंधकार, तूफान, भूल, दुर्घटना, मखौल और विरोध का उसी प्रकार सामना करो जिस प्रकार पशु और पक्षी करते

हैं।''

मैंने बारह वर्ष पशुओं के साथ बिताए हैं किंतु मैंने कभी नहीं देखा कि सूखा, हिमपात अथवा शीत के कारण किसी जरसी गाय को ज्वर हो आया हो, न मैंने कभी यही देखा कि बैल का किसी दूसरी गाय पर विशेष झुकाव देखकर गाय को ज्वर हो आया हो। अंधकार, तूफान, भूख आदि को पशु बड़े धैर्य के साथ सह लेते हैं। यही कारण है कि उन्हें स्नायुरोग नहीं होता; उनके पेट में व्रण नहीं उभरते और न ये कभी पागल ही होते हैं।

मैं यह नहीं कहता कि विपत्तियों के सामने आप घुटने टेक दें; बिल्कुल नहीं, क्योंकि यह कोरा नियतिवाद है। मैं तो कहूँगा कि जहाँ तक किसी परिस्थिति विशेष को हम बना सकें, बना लेना चाहिये। हमें संघर्ष करना चाहिये। किंतु यदि सामान्य ज्ञान से प्रकट हो कि अमुक परिस्थिति के विरुद्‌ध हम व्यर्थ ही संघर्ष कर रहे हैं, हम उस परिस्थिति को बदल नहीं सकते हैं तो विवेक इसी में है कि बिना आगा-पीछा किये, जो नहीं है, उसकी कामना छोड़ दें।

हर व्याधि के लिये जगत में-
है उपचार, उसे तुम ढूँढ़ो,
यदि नहीं कोई मिल पाए
तो तुम उसकी चिंता छोड़ो।

जिन दिनों में यह पुस्तक लिख रहा था, अमेरिका के कई प्रमुख व्यापारियों से मिलने का अवसर मुझे मिला। उसने यह जानकर कि वे होनी को स्वीकार कर सर्वथा चिंतामुक्त जीवनयापन करते हैं, मैं अत्यंत प्रभावित हुआ। यदि वे ऐसा नहीं करने तो निश्चय ही दैनिक प्रवृत्तियों के दबाव के कारण टूटकर रह जाते। निम्नांकित कुछ उदाहरण, मेरा अभिप्राय स्पष्ट कर देंगे-

अमेरिका में स्थान-स्थान पर फैले हुए पेनी स्टोर्स के संस्थापक जे.सी. पेनी ने एक बार मुझे बताया कि, ''अपनी सारी संपत्ति नष्ट हो जाने पर भी मैं कभी चिंता नहीं करूँगा, क्योंकि मैं जानता हूँ कि ऐसा करने से कोई लाभ नहीं होता। यथासंभव मैं उचित काम ही करता हूँ और उसके परिणाम को ईश्वर पर छोड़ देता हूँ।''

इसी से बहुत कुछ मिलती-जुलती बात एक बार हेनरी फोर्ड ने कही थी। उन्होंने कहा कि, ''जब मैं अमुक घटनाओं का प्रबंध नहीं कर पाता तो उन्हें उन्हीं पर छोड़ देता हूँ।''

मैंने क्राइसलर कॉर्पोरेशन के प्रधान के.टी. केलर से भी प्रश्न किया था कि आप अपने को चिंता मुक्त किस प्रकार रख पाते है? उत्तर में उन्होंने बताया कि ''पहले मैं अपने सामने आई हुई कठिन परिस्थिति को सुलझाने का यत्न करता हूँ, किंतु जब देखता हूँ कि मैं कुछ नहीं कर सकता तो उसे राम भरोसे छोड़ देता हूँ, उसे भूल जाता हूँ। भविष्य की चिंता मैं कभी नहीं करता, क्योंकि कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो कह सकते कि अमुक बात भविष्य में निश्चित रूप से होने वाली है। भविष्य को प्रभावित करने वाली अनेक शक्तियाँ हैं, उन शक्तियों का संचालन कौन करता है, कोई नहीं जानता। न कोई उन शक्तियों को समझ ही सका है; अत: स्पष्ट है कि उनके विषय में चिंता करना व्यर्थ है। के.टी. केलर कोई दार्शनिक नहीं हैं, वे तो एक कुशल व्यापारी हैं। फिर भी उनके विचार 'एपिकटेटस' के उन विचारों से बहुत ही मेल खाते हैं, जिन्हें उन्होंने 1900 वर्ष पूर्व रोम में व्यक्त किया था। रोमवासियों को उन्होंने बताया कि सुखी रहने का एकमात्र उपाय यही है कि हम अपनी सामर्थ्य के बाहर की बातों के लिये चिंतित होना छोड़ दें।

सारा बर्नहार्ड एक तेजस्विनी महिला थी जिसे होनी को स्वीकार करना आता था। लगभग अद्‌र्ध शताब्दी तक उसने चार महाद्‌वीपों की जनता पर अपनी कला के माध्यम से शासन किया। वह अपने समय की अत्यंत लोकप्रिय

अभिनेत्री थी। इकहत्तर वर्ष की अवस्था में वह निर्धन हो गयी। उसका संपूर्ण वैभव विलीन हो गया और जैसे कि यह सब काफी नहीं था, पेरिस के डॉक्टर प्रो. पोजी ने उसे अपनी एक टाँग कटवा डालने की सलाह दी। टाँग कटवाना इसलिये जरूरी हो गया था कि एक बार जब वह एटलांटिक की यात्रा कर रही थी, समुद्र में भयंकर तूफान उठा और वह जहाज की डेक पर फिसल पड़ी। टाँग में गहरी चोट लगी। उसे फ्लेबाइटिस हो गया और टाँग छोटी हो गयी। असह्य पीड़ा को देखते हुए डॉक्टर के लिये टाँग काटना जरूरी हो गया था। किंतु टाँग काटने की बात सारा को कहने में डॉक्टर को बहुत डर लगता था, क्योंकि वह क्रुद्ध प्रकृति की थी। डॉक्टर को पूरा विश्वास था कि वह दुर्भाग्यपूर्ण सुझाव उसमें उग्र उन्माद ला देगा। किंतु उसका अनुमान गलत था, सारा ने निमिष मात्र के लिये डॉक्टर की और देखा और पलकें झुकाकर धीरे से कहा, ''यदि टाँग काटनी ही पड़े तो काट डालो, दुर्भाग्य जो ठहरा।''

उसे ऑपरेशन के लिये ले जाते समय उसका बेटा रो पड़ा किंतु उसने मुसकराते हुए उससे विदा ली और कहा, ''देखो, चले मत जाना, ऑपरेशन होते ही मैं लौट रही हूँ।''

ऑपरेशन के लिये जाते समय जब उसने अपने द्वारा अभिनीत नाटक के एक दृश्य के संवाद को दोहराया तो किसी ने पूछा, ''क्या आप अपने को प्रोत्साहित करने के लिये यह संवाद दोहरा रही हैं?'' ''नहीं।'' उसने उत्तर दिया, ''मैं तो डाक्टरों तथा नर्सों को प्रोत्साहित करना चाहती हूँ, क्योंकि ऑपरेशन में उन्हें कठिन परिश्रम करना पड़ेगा!''

ऑपरेशन के बाद जब सारा स्वस्थ हो गयी तो वह विश्व भ्रमण करने के लिये निकली और सात वर्षों तक अपनी कला से दर्शकों को मंत्र मुग्ध करती रही।

'रीडर्स डाइजेस्ट' नामक पत्रिका के एक लेख में एलसी मेक्कॉर्मीक ने लिखा है कि, ''जब हम होनी से लड़ना बंद कर देते हैं तो हम में एक विचित्र शक्ति का स्रोत खुल जाता है जो हमारे जीवन को सुखी बनाने में हमारी सहायता करता है।''

कोई भी प्राणी ऐसा नहीं है जिसमें होनी के विरुद्ध संघर्ष करने की यथेष्ट शक्ति एवं भावना हो। और यदि संघर्ष कर भी लिया तो नवजीवन के निर्माण के लिये उसमें पर्याप्त शक्ति बच नहीं पाती। आपको दो बातों में से एक चुननी होगी, या तो आप जीवन में होनी के तूफान के आगे झुक जाएँ या फिर उसका सामना कर टूट जाएँ।

मैंने अपने मिसूरी फार्म पर ऐसी ही एक घटना देखी है। फार्म पर मैंने बीसियों पेड़ लगाये थे। शुरू-शुरू में तो वे आश्चर्यजनक गति से बढ़ने लगे किंतु बाद में हिमपात के कारण उनकी प्रत्येक टहनी हिम की परतों से बोझिल हो उठी। वे पेड़ विनम्रता से झुकने के बजाय गर्व से ऐंठे रहे और टूट कर रह गये। उन्होंने उत्तरीय भाग के पेड़ों की झुकने की बुद्धिमानी नहीं सीखी थी। कनाडा के सदाबहार वृक्षों के झुरमुटों में मैंने मीलों तक यात्रा की है, मैंने हिम के भार से गिरा हुआ इनका एक भी पत्ता या तिनका नहीं देखा। ये सदाबहार वृक्ष अपनी डालों को झुकाना जानते हैं तथा होनी के साथ निर्वाह कर सकते हैं।

कसरत सिखानेवाले अपने शिष्यों को सदा यही सीख देते हैं कि ''घास की तरह झुक जाओ, देवदार की तरह ऐंठे हुए मत रहो।''

क्या आप जानते हैं कि मोटर के टायर इतनी घिसाई के बावजूद सड़क पर कैसे दौड़ते और घिसते रहते हैं? सुनिये - टायर निर्माताओं ने पहले कठोर टायर बनाने का निश्चय किया जो सड़क के धक्कों को सह सकें किंतु वे टुकड़े होकर रह गये, तब उन्होंने ऐसे टायर बनाये जो सड़क के धक्कों को लचककर झेल लें। वे टायर चल निकले। यदि हम भी जीवन के पथरीले मार्ग के हिचकोलों को और धक्कों को झेलना सीख लें तो दीर्घायु होकर

सुखपूर्वक जी सकते हैं।

यदि हम जीवन के धक्कों को झेलने के बदले उन्हें रोकने लगें तो क्या हो? यदि हम घास की तरह झुक जाने के बजाय देवदार की तरह ऐंठे ही रहें तो क्या हो? उत्तर स्पष्ट है - हम अपने में कई अंतर्द्वंद्वों की सृष्टि कर बैठेंगे। हम चिंचित थकित, तनावग्रस्त एवं उन्मादी हो जाएँगे। यदि हम एक कदम ओर आगे बढ़ें और वास्तविकता के कठोर संसार को छोड़कर स्वनिर्मित संसार से पलायन करने लगें तो पागल हो जाएँ।

युद्ध के दिनों में लाखों सैनिकों में से कुछ ने तो होनी को स्वीकार कर लिया था और कुछ उसके दबाव में पिस कर रह गये। उदाहरणार्थ न्यूयॉर्क, ग्लेंडेल के विलियम एच. कोसेलियस की कहानी लीजिये। यह पुरस्कृत कहानी न्यूयॉर्क में संचालित प्रौढ़ शिक्षा की कक्षा में कही गई थी-

''कोस्टलगार्ड में भरती होने के कुछ ही दिनों बाद एटलांटिक महासागर के इस पार मुझे बहुत ही खतरनाक स्थान पर तैनात किया गया। मैं गोला-बारूद की निगरानी करता था। जरा सोचिये एक बिस्कुट बेचनेवाला और वह गोला-बारूद की निगरानी करे। हजारों टन गोला-बारूद के ढेर के पास खड़े रहने का विचार एक आतिशबाजी बेचनेवाले व्यक्ति तक को ठंडा कर सकता है। मुझे केवल दो दिन तक अपने काम की जानकारी दी गयी और उस जानकारी से मेरा भय और भी बढ़ गया। अपनी उस पहली ड्यूटी को मैं कभी नहीं भूलूँगा।

एक दिन बहुत ठंड थी और कुहरा छाया हुआ था, मुझे बुलाया गया और न्यूजर्सी अंतर्गत बेयॉन के केवेन पॉइंट के खुले पोतघाट पर तैनात किया गया। मैं जहाज पर पाँच नंबर के स्थान पर भेजा गया। जहाज के उस भाग पर, तट पर काम करने वाले पाँच आदमियों के साथ मुझे काम करना पड़ता था। वे लोग माल ढोने में बड़े मजबूत थे। किंतु गोला-बारूद ढोने के बारे में उनका कोई अनुभव नहीं था। एक-एक टन टी.एन.टी. के बोझ लाद रहे थे। इतना गोला-बारूद इस पुराने जहाज को ध्वंस करने के लिये पर्याप्त था। यह बोझ जंजीरों के सहारे उतारा जाता था। मैं सोचता, मान लो जंजीर खिसक जाए या टूट जाए तो इस कल्पना मात्र से मैं काँपने लगता और मेरा गला गला सूख जाता, घुटने ढीले पड़ जाते और दिल जोर से धड़कने लग जाता। किंतु मैं वहाँ से भाग नहीं सकता था। भागने का अर्थ होता, नौकरी को छोड़ भागना। इससे मेरी इज्जत में बट्टा लगता और ऐसे व्यवहार के कारण मुझे गोली मार दी जाती। मैं भाग नहीं सका और मुझे वहीं पर डटे रहने के लिये बाध्य होना पड़ा। मजदूर लोग बड़ी निश्चिंतता से भार ढोते रहते और मैं उनके इस काम को देखता रहता; सोचता, कहीं एक मिनट में ही जहाज ध्वस्त न हो जाए, एक घंटे तक या उससे भी अधिक समय तक भय से सुन्न हो जाने के बाद मैंने सामान्य विवेक का सहारा लिया। मन-ही-मन काफी तर्क-वितर्क किया और सोचा, मान लो विस्फोट से मैं नष्ट हो गया, तो क्या हुआ। क्या फर्क पडता है। उल्टा यह तो मरने का आसान तरीका है। कैंसर से मरने से तो इस तरह मरना कहीं ज्यादा अच्छा है। मैंने अपने आप से कहा ''मूर्ख न बनो, तुम कभी मरोगे ही नहीं। ऐसी बात भी नहीं। या तो यह काम करो या गोली के शिकार बनो। जो भी तुम्हें पसंद हो, करो।''

इस प्रकार मैं घंटों अपने से मन-ही-मन तर्क-वितर्क करता रहा। तब कहीं बाद में होनी को स्वीकार कर अपने भय तथा चिंता से मुक्ति पायी।

मैं यह पाठ कभी नहीं भूलूँगा। अब जब कभी मैं किसी ऐसी बात को लेकर चिंतित हो जाता हूँ, जिसे मैं बदल नहीं सकता तो उपेक्षा से कह उठता हूँ- जाने भी दो, भूल जाओ। मेरा अनुभव है कि मेरे जैसे बिस्कुट बेचने वाले के लिये भी यह नियम बड़ा कारगर रहता है।''

वाह रे बिस्कुटवाले क्या खूब!

ईसा के फाँसी के करुण दृश्य को छोड़कर यदि कोई अन्य करुण दृश्य है तो वह है सुकरात के विषपान का।

आज से दस हजार शताब्दियों बाद भी प्लेटो द्‌वारा वर्णित साहित्य के इस भावनापूर्ण रोचक तथा अमर वृत्तांत को पाठक कभी नहीं भूलेंगे। एथेंस के कुछ ईर्ष्यालु तथा स्पर्धालु व्यक्तियों ने इस नंगे पैर चलनेवाले सुकरात पर अभियोग लगाया और उस पर मुकदमा चलाया। सुकरात ने वैसा ही किया। उसने अपूर्व धैर्य एवं समर्पण के साथ मृत्यु का सामना किया और तत्पश्चात् दिव्य-ज्योति को प्राप्त हुआ।

''होनी को सरल भाव से स्वीकार कर लो।'' यद्यपि ये शब्द ईसा से तीन सौ निन्यानवे वर्ष पूर्व कहे गये थे तथापि इस चिंतित और बूढ़े संसार के लिये आज ये पहले से अधिक आवश्यक है।

गत आठ वर्षों से मैं सामान्यतया उन सभी पुस्तकों तथा लेखों को पढ़ रहा हूँ जिनमें चिंता निवारण संबंधी थोड़ीसी भी बात कही गयी है। अपने इस अध्ययन के दौरान में मैंने चिंता संबंधी अत्यंत महत्त्वपूर्ण कविता की पंक्तियाँ पढ़ीं, जिन्हें हमें बाथरूम में लगे शीशे पर चिपका देनी चाहिये, ताकि जब भी हम अपना मुँह धोएँ, उन्हें पढ़ें और अपनी चिंता का निवारण करें। इस कविता के रचयिता ईसाई धर्म के प्राध्यापक डॉक्टर रेनोल्ड नेबर हैं-

हे प्रभु मुझे बुद्‌धि दे कि मैं जिन बातों को,
बदल न सकूँ उन्हें स्वीकार कर लूँ।
मुझे साहस दे कि हो सके तो स्थिति को बदल लूँ।
मुझे बुद्‌धि दे कि मैं भला-बुरा पहचान सकूँ।

चिंता आपको मिटा दे उसके पूर्व चिंता को मिटाने के लिये चौथा नियम यह है- होनी को स्वीकार कीजिये।

❑

विचारों की प्रभावशीलता

कुछ वर्ष पूर्व मुझे रेडियो कार्यक्रम में यह प्रश्न पूछा गया था कि आपने अब तक सबसे महत्त्वपूर्ण पाठ कौन सा सीखा है?

उत्तर सरल था। अब तक जो महत्त्वपूर्ण बात मैंने सीखी, वह है, 'हमारे विचारों के महत्त्व का ज्ञान।' यदि मुझे मालूम हो कि मैं क्या सोचता हूँ तो मैं, आप क्या हैं, कैसे हैं, यह भी जान सकता हूँ। हमारे विचार ही हमारे व्यक्तित्व को बनाते हैं। हमारी मानसिक अवस्था ही हमारे भाग्य का निर्णय करती है। इमरसन ने कहा है कि ''मनुष्य का व्यक्तित्व उसके दिन भर के विचारों से आँका जाता है। वह अपने विचारों से भिन्न हो ही नहीं सकता।''

मेरी तो यह धारणा अब दृढ़ हो गई है कि हमारे सामने यदि कोई सबसे बड़ी या यह कहें कि एक मात्र समस्या है तो वह है- सम्यक् विचारों का संकलन। यदि इतना कर सकते हैं तो हम अपनी सभी समस्याएँ हल कर सकते हैं। रोमन साम्राज्य पर शासन करनेवाले महान दार्शनिक मारकुस आरेलियस ने ठीक ही कहा है, ''हमारा जीवन वैसा ही होता है जैसा विचार उसे बनाते हैं।'' ये शब्द हमारे जीवन की दिशा बदल सकते हैं। क्योंकि यदि हम सुखद विचार रखते हैं तो सुखी होंगे। दु:खद विचार रखते हैं तो दुखी होंगे। भयावह विचार रखते हैं तो भयभीत रहेंगे। अस्वस्थ विचार रखते हैं तो अस्वस्थ रहेंग, और यदि असफलता के संबंध ही में सोचते रहें तो निश्चय ही असफल रहेंगे। यदि हम आत्मग्लनि में ही पड़े रहें तो सब लोग हमसे दूर भागेंगे और हमारी अवगणना करेंगे। नॉर्मन विनसेंट पील का कथन है कि, ''आप अपने को जैसा समझते हैं, वैसे नहीं हैं। आप वैसे हैं जैसे आपके विचार है।''

मैं आपको यह नहीं कह रहा हूँ कि अपनी सभी समस्याओं के प्रति एक सा ही रुख अपनाइए - नहीं। दुर्भाग्यवश हमारा जीवन इतना सरल नहीं है। मैं तो यह कह रहा हूँ कि हम जीवन के प्रति एक विधेयात्मक रुख अपनाएँ न कि नकारात्मक। दूसरे शब्दों में हमें अपनी समस्याओं के प्रति सजग तो रहना है किंतु उनकी चिंता नहीं करनी है। सजगता और चिंता में क्या अंतर है?

एक दृष्टांत लीजिए - न्यूयॉर्क के भीड़ भरे यातायात के बीच से गुजरते हुए जो काम मैं कर रहा हूँ, उसके प्रति सजग तो रहता हूँ किंतु मुझे उसकी चिंता नहीं रहती। सजगता का अर्थ है, समस्याओं का ज्ञान तथा उन्हें शांति से सुलझाने का प्रयास। चिंता का अर्थ होता है आकुल-व्याकुल अवस्था में चक्कर काटना।

एक व्यक्ति अपनी गंभीर समस्याओं को जानते हुए भी कोट में फूल लगाए तनकर चल सकता है। मैंने देखा है कि लोवेल टॉमस यही करते थे। प्रथम महायुद्ध के दिनों में 'एलन वी. कॉरेंस' नामक प्रसिद्ध फिल्म तैयार करते समय लोवेल टॉमस के साथ मुझे काम करने का अवसर मिला था। उन्होंने अपने साथियों के साथ करीब पाँच छह मोर्चों पर युद्ध के चित्र खींचे थे जोकि सर्वोत्तम थे। उनमें टी.ई. लॉरेंस तथा उसकी सजीली अरेबियन सेना का चित्रमय विवरण था और एलन बी. की होलीलैंड विजय का चित्र-विवरण भी उसी में था। उनके सचित्र विवरण 'विथ एलन बी. इन पेलेस्टाइन' तथा 'लॉरेंस इन अरेबिया' ने लंदन तथा संसार के अन्य भागों में तहलका मचा दिया था। लंदन का ऑपेरा समारोह छह सप्लाह के लिए स्थगित कर देना पड़ा था ताकि वह कोयेंट गार्डन रॉयल ऑपेरा हाउस में अपने चित्र प्रदर्शित कर सकें तथा उस महान साहसिक कथानक को जारी रख सकें। लंदन की उस सनसनीखेज सफलता के पश्चात् उन्होंने कई देशों की विजेता के रूप में यात्रा की। इसके बाद दो वर्ष भारत तथा अफगानिस्तान के लोकजीवन पर चित्र बनाने में बिताये। दुर्भाग्यवश एक अभूतपूर्व घटना हो गई। लंदन में वे 'दिवालिया' हो गए। मैं उस समय उनके साथ ही था। मुझे आज भी याद है कि हम सस्ते होटल में भोजन किया

करते थे। यदि हम प्रसिद्ध स्कॉट कलाकार जेम्स मेकवे से कुछ उधार न लेते तो वह सस्ता भोजन भी नसीब न होता। कहने का तात्पर्य यह है कि यद्यपि लॉवेल टॉमस भारी कर्ज में दबे हुए थे और एकदम निराश थे तथापि उन्होंने उसकी कभी चिंता नहीं की। हाँ, वे सतर्क जरूर रहते थे। ये जानते थे कि यदि उन्होंने असफलताओं को अपने पर हावी होने दिया तो कर्जदारों तथा अन्य लोगों की निगाहों से वे गिर जाएँगे। अत: वे हर सुबह बाहर निकलने के पूर्व एक फूल खरीदते और उसे अपने कोट में लगा लेते फिर ऑक्सफोर्ड स्ट्रीड से बड़े मजे से गुजरते। वे सदा रचनात्मक और साहसपूर्ण बातें सोचते रहते थे। और असफलता को अपने पर कभी हावी नहीं होने देते। उनके लिए हार भी एक खेल था। यदि आप भी जीवन में उन्नति के शिखर पर पहुँचना चाहें तो इस लाभदायक शिक्षा को ग्रहण कीजिए, क्योंकि हमारी मानसिक अवस्था का शारीरिक शक्तियों पर विलक्षण प्रभाव पड़ता है।

प्रसिद्ध ब्रिटिश मनोवैज्ञानिक जे.ए. हेडफील्ड ने अपनी रोचक पुस्तक - 'दी साइकोलोजी ऑफ पावर' में एक प्रभावशाली दृष्टांत दिया है। वे लिखते हैं कि, ''मैंने तीन व्यक्तियों को, उनकी शक्ति पर मानसिक निर्देश का प्रभाव जानने के लिए तैयार किया और परीक्षण किये। शक्तिपरीक्षण यंत्र को कसकर पकड़कर किया जानेवाला था। उन्होंने उनको अपनी संपूर्ण शक्ति से यंत्र को दबाने को कहा। तीन विभिन्न अवस्थाओं में यह परीक्षण किया गया।

पहले अपनी सामान्य चेतनावस्था में उनकी शक्ति 101 पौंड थी।

तब उनको हिप्नोटाइज किया गया। उस अवस्था में कमजोरी के कारण उनकी शक्ति केवल 29 पौंड रह गई जो उनकी सामान्य शक्ति से एक तिहाई भी नहीं थी। उनमें एक तो नामी पहलवान था। जब हिप्नोसिस की अवस्था में उसे कहा गया कि, ''क्या तुम्हें कमजोरी लगती है'' तो, उसने उत्तर दिया, ''मुझे अपने हाथ बच्चों के हाथों की तरह छोटे लगते हैं।''

तब, कैप्टन हेडफील्ड ने उन आदमियों का तीसरी बार परीक्षण किया। इस बार हिप्नोसिस अवस्था में उन्हें निर्देश दिया गया कि वे बहुत ताकतवर हैं। इस बार जब उन्होंने उस यंत्र को दबाया तो उनकी औसत शक्ति 142 पौंड आँकी गई। जब उनके मस्तिष्क में शक्तिसंबंधी क्रियात्मक विचार भरे गए तो उन्होंने अपनी वास्तविक शारीरिक शक्ति को प्राय: पाँच गुना बढ़ा दिया।

इतनी विलक्षण शक्ति है हमारे मानस में। इस विषय में मैं अमेरीकी इतिहास की एक विलक्षण कथा दृष्टांतस्वरूप उद्धृत करूँगा। इस कथा को लेकर मैं एक पुस्तक लिख सकता हूँ। किंतु संक्षेप में वह इस प्रकार है-

गृहयुद्ध के कुछ ही दिनों के बाद अक्तूबर की हिमानी रात में एक स्त्री ने, जो गृह-विहीन, आवारा तथा घुमक्कड़ थी, मेसाच्युसेट्स के अवकाश प्राप्त समुद्री केप्टन की पत्नी, मदर वेबस्टर का द्वार खटखटाया।

द्वार खोलने पर मदर वेबस्टर ने एक छोटे, दुबले पतले, लगभग सौ पाउंड वजन के प्राणी को, जो अस्थिपंजर मात्र था, अपने सामने खड़ा पाया। उसने अपने को श्रीमती ग्लोवर बताया और कहा कि उसको एक ऐसे घर की तलाश है, जहाँ बैठकर एक ऐसी समस्या का समाधान पा सके, जिसमें वह रात-दिन डूबी रहती है। श्रीमती वेबस्टर ने कहा, ''तुम यही क्यों नहीं ठहर जाती। इतने बड़े मकान में मैं अकेली ही तो रहती हूँ।'' श्रीमती ग्लोवर वहाँ रहने लगी। वह मदर वेबस्टर के साथ अनिश्चित काल तक रहती यदि वेबस्टर का दामाद न्यूयॉर्क से छुट्टियों में घर आने पर उसे आवारा कह कर वहाँ से निकाल न देता। उसने कहा, ''मेरे घर में आवारा लोगों के लिए कोई स्थान नहीं।'' बाहर भीषण वर्षा हो रही थी। कुछ क्षणों तक वह काँपती हुई खड़ी रही, फिर अन्य किसी आश्रय की तलाश में चल पड़ी।

इस कहानी की विलक्षण बात यह है कि जिस स्त्री को आवारा कह कर दामाद बिल एलिस ने घर से निकाल दिया था, उसी स्त्री ने आगे चल कर संसार के विचारों को प्रभावित किया। आज वह अपने लाखों अनुयायियों में

मैरी बेकर एडी के नाम से प्रसिद्ध है। इसी महिला ने 'साइंस मॉनिटर' नामक पत्रिका की स्थापना की थी। अब तक एडी ने अपने जीवन में रोग, शोक और विपत्ति के सिवा अन्य बातों का अनुभव बहुत कम किया था। उसका पहला पति विवाह के कुछ ही काल उपरांत संसार से चल बसा था। उसके दूसरे पति ने उसे छोड़ दिया और किसी अन्य विवाहित स्त्री को भगा ले गया। बाद में एक सामान्य घर में उसकी मृत्यु हो गई। उसके केवल एक बेटा था, जिसे उसने चार वर्ष की अवस्था में दैन्य, अस्वस्थता तथा ईर्ष्या के कारण त्याग दिया। बाद में उस लड़के का कोई पता नहीं चला। इस घटना के बाद इकतीस वर्षों तक वह जीवित नहीं किंतु अपने उस बेटे से नहीं मिल सकी।

अपनी रुग्णावस्था के कारण श्रीमती एडी वर्षों तक मानसिक स्वास्थ्य के विज्ञान पर प्रयोग तथा चिंतन करती रही। उसके जीवन का अत्यंत नाटकीय परिवर्तन मेसाचुसेट्स के लीन में हुआ। जाड़े में एक दिन वह चलते-चलते बर्फ से ढकी पटरी पर फिसलकर गिर पड़ी और बेहोश हो गई। उसकी रीढ़ की हड्डी पर इतनी गहरी चोट आई कि जोड़ना कठिन था। डाक्टरों को तो भय था कि वह मर जाएगी और यदि किसी करतब से वह जीवित भी रही तो चलने-फिरने के योग्य तो नहीं ही रहेगी।

अपनी मृत्यु शय्या पर पड़े-पड़े मैरी बेकर एडी ने ईश्वरीय प्रेरणा से बाइबिल खोलकर संत मेथ्युज के ये शब्द पढ़े - ''लो देखो। वे शय्या पर लिटाकर एक रोगी को उनके पास लाए और उन्होंने उस रोगी से कहा, 'वत्स, स्वस्थ हो जा। ईश्वर तेरे पाप क्षमा कर देगा।' उठ, अपना बिस्तर समेट और घर की राह ले।'' रोगी उठा और घर की राह ली।

''ईसू के उन शब्दों ने'' उसने कहा, ''मुझमें इतनी शक्ति, इतनी श्रद्धा तथा इतनी ताजगी पैदा की कि मैं तुरंत शय्या से उठ बैठी और चलने लगी।''

श्रीमती एडी ने कहा, ''वह अनुभव मेरे लिए न्यूटन का 'गिरता सेब' साबित हुआ, तथा उस खोज से मैंने सीख लिया कि अपने को तथा दूसरों को कैसे स्वस्थ बनाया जाए। मैं एक युक्तियुक्त निश्चय पर पहुँची कि मस्तिष्क ही सभी रोगों का हेतु है तथा हर तरह का प्रभाव एक मानसिक प्रक्रिया है।''

इस प्रकार मेरी एडी एक नवीन 'क्रिश्चियन साइंस' की संस्थापिका तथा उच्च धर्म सेविका बन गई। अब तक केवल यही एक ऐसा धार्मिक संप्रदाय है जिसकी स्थापना किसी महिला ने की है और जो विश्वव्यापी है।

संभवत: आप यह सोचने लगें कि यह कारनेगी तो क्रिश्चियन साइंस में हमें दीक्षित करना चाहता है किंतु आपका विचार गलत है। मैं इस मत का अनुयायी नहीं हूँ, किंतु ज्यें-ज्यों अवस्था बढ़ती जाती है, विचारों की अपार शक्ति में मेरी श्रद्धा बढ़ती जाती है। अपने पैंतीस वर्ष के प्रौढ़ शिक्षण के आधार पर मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि मनुष्य अपने विचार-परिवर्तन द्वारा चिंता, भय तथा विभिन्न प्रकार के रोगों का निवारण कर, अपने जीवन को बदल सकता हैं। मैंने हजारों बार ऐसे विलक्षण परिवर्तन देखे हैं, और इतने अधिक देखे हैं कि इन पर कोई आश्चर्य नहीं होता।

एक उदाहरण लीजिए ऐसे ही एक परिवर्तन का, मिनेसोटा सेंट पॉल का फ्रेंक जे. व्हेले मेरा शिष्य रह चुका है। उसी के परिवर्तन की यह कहानी है। वह स्नायु रोग से पीड़ित था। यह स्नायु रोग उसे चिंता के कारण हुआ था। फ्रेंक व्हेले ने मुझे बताया कि ''मुझे हर बात की चिंता रहती थी। मैं बहुत दुबला-पतला था। इसकी भी मुझे चिंता थी। मुझे चिंता रहती कि मेरे बाल झड़ रहे हैं। मुझे भय रहता कि मैं विवाह के लिए पर्याप्त रकम जमा नहीं कर पाऊँगा तथा जिस लडकी से मैं विवाह करना चाहता हूँ, वह हाथ से निकल जाएगी। मुझे लगता कि मैं अच्छा जीवन नहीं बिता पा रहा हूँ। साथ ही दूसरे लोगों पर अपने प्रभाव की चिंता भी मुझे लगी रहती थी। मुझे उदर-व्रण का भय था। मैं अधिक काम भी नहीं कर सकता था। आखिर मुझे अपनी नौकरी भी छोड़नी पड़ी। मन में तनाव इतना बढ़ गया

था कि मैं बहुत दुखी रहने लगा। मुझ पर बोझ इतना बढ़ गया था कि कहीं-न-कहीं तो टूटना ही था, और हुआ भी यही। यदि आप कभी स्नायु रोग से पीड़ित नहीं रहे हैं तो भगवान से प्रार्थना कीजिए कि आपको यह रोग कभी न हो, क्योंकि कोई भी शारीरिक पीड़ा मानसिक यंत्रणा से अधिक कष्टकर नहीं होती।

मेरा स्नायु रोग इतना असाध्य हो गया था कि मैं अपने परिजन से बात भी नहीं कर सकता था। अपने विचारों पर से मेरा नियंत्रण हट चुका था। मैं पूर्णतया भयग्रस्त हो चुका था। मामूली शोरगुल से भी मैं उत्तेजित हो जाया करता था। हरेक से मुँह छिपाता और बिना किसी स्पष्ट कारण के रोने-धोने लगता।

मेरा प्रत्येक दिन विषाद में बीतता था। मुझे लगता कि सभी लोगों ने मेरी उपेक्षा कर दी है, यहाँ तक की भगवान ने भी। नदी में कूदकर आत्महत्या कर लेने की मेरी इच्छा होती थी।

किंतु आत्महत्या न करके मैंने फ्लोरिडा की यात्रा करने का निश्चय किया। इस आशय से कि वातावरण के परिवर्तन के शायद कुछ सहायता मिले। जैसे ही मैं गाड़ी में बैठने लगा, मेरे पिता ने मुझे एक पत्र दिया और कहा कि मैं इसे फ्लोरिडा पहुँचने पर ही खोलूँ। मैं फ्लोरिडा ऐसे मौसम में पहुँचा जब यात्रियों का वहाँ खासा जमघट रहता है। मुझे वहाँ किसी होटल में स्थान नहीं मिला। अत: मैंने एक गैराज में सोने की जगह किराए पर ले ली। मियामी के प्रांतर में मैंने एक मालवाहक पोत पर नौकरी पाने की कोशिश की, किंतु भाग्य ने साथ नहीं दिया। हार कर खाड़ी पर ही समय काटने का निश्चय किया। फ्लोरिडा में मैं घर से भी अधिक दुखी हो गया। इसलिए मैंने यह देखने के लिए कि पिताजी ने क्या लिखा है, वह लिफाफा खोला। उस पत्र में लिखा था - 'पुत्र, तुम घर से 1400 मील दूर हो, तथापि अपनी यहाँ की तथा वहाँ की अवस्था में कोई अंतर नहीं पाते हो। है न? मैं जानता था कि तुम्हें वहाँ भी शांति नहीं मिलेगी, क्योंकि तुम अपने साथ वहाँ भी वही वस्तु ले गए जो तुम्हारे क्लेश का कारण है; और वह है, तुम्हारी विचारधारा। तुम्हारे शरीर अथवा मस्तिष्क में कहीं कुछ भी नहीं बिगड़ा है; न परिस्थितियों ने ही तुम्हें दूध की मक्खी बना रखा है। परिस्थिति विषयक तुम्हारी विचारधारा ही तुम्हारे क्लेश का मूल कारण है। मनुष्य अपने मन में जैसा सोचता है वैसा ही होता है। पुत्र, जब तुम्हे यह ज्ञान हो जाए तो तुम घर लौट आना। तुम अपने आप अच्छे हो जाओगे।''

पिता के पत्र से मैं बहुत रुष्ट हुआ। मुझे सहानुभूति की आशा थी, शिक्षा की नहीं। मैं इतना उग्र हो उठा कि तत्काल घर न जाने का निश्चय कर लिया। उस रात मियामी के एक उपमार्ग से गुजरते हुए मैं एक चर्च में जा पहुँचा, जहाँ प्रार्थना हो रही थी। आगे बढ़ने का कोई उपाय न देख मैं एक ओर खड़ा हो गया और प्रवचन सुनने लगा - ''जो अपनी भावना पर विजय पा लेता है, वह देश जीतनेवाले व्यक्ति से भी अधिक सबल है।'' भगवान के उस पवित्र मंदिर में बैठकर, उन्हीं विचारों को सुनकर, जिन्हें मेरे पिता ने पत्र में लिखा था, मेरे मस्तिष्क का सारा विकार घुल गया। मैं जीवन मे पहली बार स्पष्ट और विवेकपूर्ण ढंग से सोचने लगा। मुझे अपनी मूर्खता का भान हो आया। अपने को फिर से वास्तविक रंग में देखकर मैं ठगा सा रह गया। मैं सारे संसार और उसके प्रत्येक प्राणी को बदलना चाहता था, जबकि आवश्यकता इस बात की थी कि मैं अपने ही विचार तथा दृष्टिकोण को बदलता।

दूसरे ही दिन मैं घर के लिए रवाना हो गया। एक सप्ताह बाद मैं फिर से अपनी नौकरी पर जाने लगा। चार माह पश्चात मैंने उसी लड़की से विवाह कर लिया जिसको खो देने का मुझे भय था। अब हमारा पाँच बच्चों का अपना सुखी परिवार है। ईश्वर की कृपा है कि मैं आर्थिक और मानसिक दृष्टि से सुखी हूँ। जिन दिनों में स्नायु रोग का शिकार हुआ था, मैं एक छोटे विभाग में आठ कामगारों पर रात के समय फोरमैन का काम करता था। किंतु अब मैं कार्टन (कागज) बनानेवाले कारखाने में चार सौ पचास व्यक्तियों पर सुपरिंटेंडेंट हूँ। जीवन अब काफी भरा-भरा और सौहार्दपूर्ण लगता है। उसके वास्तविक मूल्यों को अब मैं समझता हूँ, ऐसा मेरा विश्वास है। जब कभी अशांत

क्षण जीवन में भरने लगते हैं, जैसा कि हरेक के जीवन में होता है, मैं अपने विचार और दृष्टिकोण बदल देता हूँ और सबकुछ ठीक हो जाता है।

मैं ईमानदारी से कह सकता हूँ कि स्नायुरोग का अनुभव करके मैं बहुत ही प्रसन्न हूँ क्योंकि इसके बिना अपने शरीर तथा मस्तिष्क पर होनेवाले विचारशक्ति के प्रभाव का ज्ञान मुझे न होता। अब मैं अपने विचारों से अपने अनुकूल लाभ उठा सकता हूँ। अब मैं महसूस करता हूँ कि पिताजी ने सही कहा था कि मेरे क्लेश का कारण बाह्य परिस्थितियाँ न होकर मेरे वे विचार थे जो मैं उनके संबंध में रखता था। जैसे ही मुझे इस सत्य का ज्ञान हुआ, मैं स्वस्थ हो गया।'' तो यह था फ्रेंक व्हेले का अपना अनुभव।

मेरा तो अटल विश्वास है कि जीवन की सुख-शांति पूर्णतया हमारी मानसिक अवस्था पर निर्भर है। हम कहाँ हैं? हमारे पास क्या है? तथा हम कौन हैं? इन बातों का उससे कोई संबंध नहीं। बाह्य परिस्थिति का प्रभाव जीवन की सुख-शांति पर नहीं के बराबर होता है। उदारहणार्थ - वृद्ध जॉन ब्राडन का ही मामला लीजिए। उसने हार्पर्स फेरी में अमेरीकी सरकार के शस्त्रागार पर अधिकार कर दासों को विद्रोह के लिए उकसाया था। इस अभियोग में उसे फाँसी की सजा दी गई थी। वह सिर पर कफन बाँधे फाँसी के तख्ते की ओर बढ़ चला। जो जेलर उसके साथ जा रहा था, वह दुखी था और घबरा रहा था, किंतु वृद्ध जॉन ब्राडन शांत और विकाररहित हो वर्जीनिया की ब्लुरीज पर्वतमालाओं की ओर निहार रहा था। उसने भावावेश में कहा, ''कितना सुंदर है यह देश। मुझे इसके वास्तविक सौंदर्य को देखने का सौभाग्य इससे पहले कभी प्राप्त नहीं हुआ।''

या फिर रॉबर्ट फाल्कन स्कॉट तथा उसके साथियों का उदाहरण लीजिए। दक्षिण ध्रुव तक पहुँचनेवाले वे पहले अंग्रेज थे। उनकी वापसी यात्रा, मनुष्य द्वारा की गयी अब तक की सभी यात्राओं से खतरनाक थी। उनकी रसद सामग्री बीत चुकी थी। इऔधन भी खत्म हो चुका था। ग्यारह दिन और ग्यारह रातों तक इस पृथ्वी से गिर्द गरजते हुए भीषण बर्फीले तूफान के कारण वे एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सके थे। हवा इतनी क्रुद्ध और तीखी थी कि वहाँ की बर्फ में दरारें पड़ गई थीं। स्कॉट तथा उसके साथियों को मालूम था कि वे मौत के मुँह में हैं। ऐसी संकटकालीन स्थिति के लिए वे अपने साथ अफीम भी लाए थे। थोड़ी अधिक मात्रा में लेते ही वे सब चिर निद्रा में सो जाते; किंतु उन्होंने ऐसा नहीं किया, बल्कि हँसते-गाते, खुशियाँ मनाते हुए मृत्यु को अपनाया। यह हम इसलिए जानते हैं कि आठ माह पश्चात् जो दल उन्हें ढूँढ़ने निकला, उसे उनके पास अंतिम विदाई का पत्र मिला, जिसमें यह सारा विवरण लिखा हुआ था।

सचमुच ही यदि हम शांति और साहस के रचनात्मक विचारों का पोषण करें तो हम सिर पर कफन बाँधे फाँसी के फंदे की ओर बढ़ते हुए भी प्राकृतिक सौंदर्य का आनंद उठा सकते हैं तथा भूख और शीत के कारण दम तोड़ते हुए भी अपने शिविरों को गीतों, कहकहों तथा वाद्यों की ध्वनि से गुंजयमान कर सकते हैं।

मिल्टन ने तीन सौ वर्ष पूर्व अपनी अंधावस्था में ऐसे ही सत्य की प्रतीति की थी। उसका कहना है कि - ''मस्तिष्क भी अपनी जगह एक ही है, यह अपने में ही स्वर्ग को नर्क और नर्क को स्वर्ग बना सकता है।

मिल्टन के कथन के प्रत्यक्ष प्रतीक हैं नेपोलियन तथा हेलन केलर। नेपोलियन को गौरव, शक्ति तथा ऐश्वर्य जैसी वे सभी वस्तुएँ प्राप्त थीं जिनकी सामान्यतया कोई भी व्यक्ति कामना करता है। फिर भी उसने सेंट हेलेना में कहा कि, ''मैंने अपने जीवन के छह दिन भी कभी सुखपूर्वक नहीं बिताए। इसके ठीक विपरीत अंधी, बहरी तथा गूँगी हेलन केलर का कहना है कि, ''मेरे लिए जीवन अत्यंत मोहन वस्तु है। यदि मेरे जीवन की अर्ध शताब्दी ने मुझे कुछ सिखाया है तो वह यह कि आप स्वयं ही अपने लिए शांति प्राप्त कर सकते हैं।''

मैं इमरसन के उन शब्दों को ही दुहरा रहा हूँ जिन्हें उसने 'सेल्फ-रिलाएंस' नामक निबंध के अंत में लिखा है

''राजनीतिक विजय, किसी रोगी का स्वस्थ हो जाना, टेक्स में वृद्धि, बिछड़े मित्र का मिलना आदि कई अन्य बाह्य घटनाएँ आपकी भावनाओं को उभारती हैं और आप सोचने लगते हैं कि आपके अच्छे दिन निकट हैं, किंतु ऐसा विश्वास कोरी भ्रांति है। बाह्य घटनाएँ आपको शांति नहीं दे सकतीं। वे केवल आपके अपने प्रयत्न से ही मिल सकती है। प्रसिद्ध दार्शनिक एपिक्टेट्स ने चेतावनी देते हुए कहा है कि 'हमें अपने शारीरिक कोड़ों और गिल्टियों से छुटकारा पाने की इतनी अधिक चिंता न कर अपने गलत विचारों से पिंड छुड़ाने की परवाह करनी चाहिए।'

यद्यपि एपिक्टेट्स ने यह बात उन्नीस शताब्दियों पूर्व कही थी तथापि आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान आज भी इस बात का अनुमोदन करता है। डॉ. जी. रोबिन्संस ने बताया कि जॉन्स होपकिन्स अस्पताल में भर्ती किये गये प्रति पाँच रोगियों में से चार मनोवेगजन्य तनाव अथवा दबाव के कारण बीमार हुए थे। इंद्रीय संबंधी कष्टों के मूल में भी मनोवेगजन्य तनाव अथवा दबाव ही रहते हैं। अंततः उसने घोषित किया कि इन सब कष्टों के मूल में जीवन तथा उसकी समस्याओं के प्रति हमारा दृष्टिकोण है।

कैलिफोर्निया की एक महिला को मैं जानता हूँ, पर नाम नहीं बताऊँगा। यदि उनको यह रहस्य मालूम होता तो चौबीस घंटों में ही वे अपनी विपत्तियों से छुटकारा पा जातीं। वे विधवा हैं और वृद्ध भी। वे प्रसन्न भाव का अभिनय नहीं करतीं। उनसे पूछा जाए कि आप कैसी है? तो वे कहेंगी - ''ठीक हूँ।'' किंतु उनके चेहरे के भाव तथा उनकी वाणी की वेदना स्पष्ट रूप से बताती है, जैसे वे कह रही हैं - काश तुम मेरी विपदाओं को जानते। ऐसा लगता है कि वे आपको प्रसन्न देखकर आपकी भर्त्सना कर रही हों। सैकड़ों स्त्रियाँ ऐसी हैं जो उनसे भी अधिक बुरी दशा में हैं। कम-से-कम, उनके लिए तो उनके पति जीवन निर्वाह के लिए काफी पूँजी भी पीछे छोड़ गए हैं। इसके अतिरिक्त उनकी संतान भी विवाहित थी जो उन्हें रहने की सुविधा देती थी। फिर भी उनके चेहरे पर किंचित ही मुस्कराहट दिखाई देती है। उनकी शिकायत है कि उनके तीनों दामाद कंजूस और स्वार्थी हैं। यद्यपि वे उनके घरों में महीनों मेहमान बनकर रहती हैं तथापि उनको शिकायत है कि लड़कियाँ उन्हें कोई उपकार नहीं देतीं। बुढ़ापे के लिए अपनी पूँजी को बड़ी सावधानी से बचा-बचाकर वे स्वयं अपने तथा अपने अभागे परिवार के लिए अभिशाप बन गई हैं, कितने दुःख की बात है। यदि वे चाहतीं तो एक दुःखी एवं अप्रसन्न वृद्ध महिला न रहकर परिवार की एक माननीय एवं स्नेभाजन सदस्या बनकर रह सकती थीं। और इसके लिए उन्हें प्रसन्नता का अभिनय मात्र करने की आवश्यकता थी। उन्हें चाहिए था कि वे अपना स्नेह दूसरों पर लुटाने का अभिनय करतीं किंतु ऐसा न कर उन्होंने अपने आपको दुःखी एवं रुष्ट बना दिया।

इंडियाना अंतर्गत, टेलसिटी के एच.जे. एग्लर्ट को मैं जानता हूँ। वे प्रसन्न भाव का अभिनय करके ही आज तक जीवित हैं। आज से दस वर्ष पूर्व एग्लर्ट लाल बुखार से बीमार थे। जब उससे छुटकारा पाया तो गुर्दे की बीमारी नेफ्राइटिस के शिकार बन गये। उन्होंने मुझे बताया कि सभी तरह के डॉक्टरों को उन्होंने आजमा लिया था, यहाँ तक कि देशी डॉक्टरों को भी - किंतु कोई लाभ नहीं हुआ।

कुछ समय बाद और व्याधियों ने उन्हें घेर लिया। उनका रक्तचाप बढ़ गया। वे डॉक्टर के पास गये उस समय उनका रक्तचाप दो सौ चौदह था। डॉक्टर ने कहा कि यह घातक है इसलिए अच्छा हो कि जो कुछ तुम्हें करना हो शीघ्र कर लो।

उसने कहा, ''मैं घर गया और मालूम किया कि बीमे की कोई किश्त बाकी तो नहीं है और तब अपने भगवान से भूलों की क्षमा याचना की तथा अवसादपूर्ण चिंतन में डूब गया।

''मैंने सबको दुखी बना दिया। मेरी पत्नी व परिवार के अन्य सदस्य भी दुखी हो गये, और मैं स्वयं भी विषाद से भर गया। एक हफ्ते तक आत्मग्लानि में तड़पने के बाद मैंने मन-ही-मन कहा, ''तुम मूर्खता का काम कर रहे हो।

हो सकता है मौत के आने में एक वर्ष लग जाए। इसलिए जितने दिन जीना है प्रसन्नता से ही क्यों नहीं लिया जाए?''

मैंने चिंता छोड़ दी, मुस्कराने लगा और इस प्रकार व्यवहार करने लगा मानो कोई बात ही न हुई हो। यह मैं मानता हूँ कि आरंभ में मुझे कुछ प्रयास करना पड़ा। किंतु मैंने अपने को प्रसन्न रहने के लिए बाध्य किया और इस प्रकार अपने परिजन को सुखी बनाकर, स्वयं भी राहत का अनुभव करने लगा।

मेरी अभिनय वास्तविकता में बदल गया। धीरे-धीरे सुधार भी होता गया। मैं स्वस्थ और प्रसन्न हो, रहने लगा, मेरा रक्तचाप सामान्य हो गया और मैं अब भी जी रहा हूँ। यह तो निश्चित है कि यदि मैं निरंतर असफलता के घातक विचारों में ही उलझा रहता तो डॉक्टरों की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध होती। मैंने अपने मानसिक रवैये को बदलकर शरीर को स्वस्थ बनाने का उपाय किया।

इसलिए मैं आपसे भी प्रश्न करता हूँ, ''यदि केवल प्रसन्नता का अभिन्य तथा स्वस्थ एवं साहसपूर्ण क्रियात्मक विचार, व्यक्ति के जीवन की रक्षा कर सकते हैं, तो फिर व्यर्थ ही क्यों छोटे-मोटे दु:खों को सहन किया जाए। हम क्यों अपने लोगों को अप्रसन्न एव दु:खी बनाएँ जबकि प्रसन्नता का अभिनय मात्र करके हम प्रसन्नता प्राप्त कर सकते हैं?

कई वर्ष पूर्व मैंने एक पुस्तक पढ़ी थी। जिसने मुझ पर अगाध एवं अटल प्रभाव डाला। इस पुस्तक का नाम था 'एर ए मैन थिंकेथ'। इसके लेखक थे जेम्स लेन एलन। उन्होंने लिखा है कि ''व्यक्ति एवं वस्तुओं का स्वरूप हमारे बदलते हुए विचारों के अनुसार बदलता रहता है। यदि व्यक्ति अपने विचारों में आमूल परिवर्तन कर दे तो जीवन की भौतिक परिस्थितियों पर होनेवाले उस परिवर्तन के प्रभाव को देखकर वह चकित रह जाए। मनुष्य को किसी भी वस्तु की प्राप्ति अपनी योग्यता के अनुसार होती है, इच्छा के अनुसार नहीं। हमारे उद्देश्यों को साकार बनानेवाली दिव्य शक्ति हमारे अपने अंदर ही है। इस शक्ति को हम आत्मा कहते हैं। मनुष्य को सीधे रूप में जो कुछ प्राप्त होता है, वह उसके विचारों का ही परिणाम है। विचारों की उच्चता से ही प्रगति, विजय एवं सफलता संभव है। उनको नीचा रख कर मनुष्य कमजोर, तुच्छ एवं दु:खी बना रहता है।

पुरानी बाइबिल के अनुसार, ईश्वर ने मनुष्य को इस विश्व पर शासन करने का अधिकार दिया। यह स्वयं में एक जबरदस्त नियामत थी। पर मुझे तो ईश्वर के राज्य संबंधी परम विकारों की कामना नहीं है। मैं तो अपने आप पर ही अपना अधिकार चाहता हूँ। मैं अपने विचारों, अपने भय, अपने मस्तिष्क, तथा अपनी भावनाओं पर अधिकार चाहता हूँ। मैं अपने व्यवहार और उसके द्वारा अन्य प्रतिक्रियाओं पर नियंत्रण कर अपूर्व अधिकार शक्ति प्राप्त कर सकता हूँ।

विलियम जेम्स का कथन हमें स्मरण रखना चाहिए कि दु:खी व्यक्ति मन में भय की भावना की जगह संघर्ष की भावना को अपनाकर, दु:ख को सुख में बदल सकता है। इसलिए आइये, हम अपने सुख के लिए संघर्ष करें।

आइये, हम सुखद रचनात्मक विचारों की पीठिका पर अपना दैनिक कार्यक्रम बनाकर, उसकी सहायता से अपने सुख के लिए संघर्ष करे। हमारा हर दैनिक कार्य आज के संकल्प की पूर्ति के लिए होना चाहिए। संकल्प पूर्ति का यह कार्यक्रम इतना प्रेरक है कि मैंने इसकी सैकड़ों प्रतियाँ लोगों में बाँट दी है। आज से छत्तीस वर्ष पूर्व स्वर्गीय सिविल एफ. पेट्रीज ने इसे लिखा था, 'यदि हम इस कार्यक्रम का अनुसरण करें तो हमारी अधिकांश चिताएँ दूर हो जाएँ तथा हमारा जीवन असीम आनंद से भर उठे।'

आज का संकल्प

1. आज मैं प्रसन्न रहूँगा। अब्राहम लिंकन ने ठीक ही कहा है, ''अधिकांश लोग अपनी मनोदशा के अनुसार ही

प्रसन्न रहते हैं। सुख अपने में ही रहता है, कहीं बाहर नहीं।

2. आज मैं वर्तमान के अनुकूल ढलने का प्रयास करूँगा। दूसरों को अपनी इच्छानुसार ढालने का प्रयास नहीं करूँगा। अपने परिजन, अपने व्यवसाय तथा अपने भाग्य को यथावत् स्वीकार कर, अपने को उनके अनुरूप ढालूँगा।

3. आज मैं अपने शरीर को हिफाजत से रखूँगा। मैं व्यायाम करूँगा, शरीर की देखभाल करूँगा, इसका पोषण करूँगा, इसका निरादर नहीं करूँगा, इसका दुरुपयोग नहीं करूँगा, ताकि यह स्वस्थ बना रहकर मेरी उन्नति में सहायक हो सके।

4. आज मैं अपने मन को सबल बनाने का प्रयत्न करूँगा, मैं उपयोगी बातें सीखूँगा, मैं अपने विचारों को भटकने नहीं दूँगा, मैं ऐसी सामग्री पढ़ूँगा जिसमें प्रयत्न, चिंतन तथा एकाग्रता की आवश्यकता हो।

5. मैं अपने मन को तीन दिशाओं में नियोजित करूँगा, मैं किसी का भला करूँगा, विलियम जेम्स के सुझाव के अनुसार अभ्यासस्वरूप कम-से-कम दो काम ऐसे अवश्य करूँगा जिन्हें करने का मन न हो।

6. आज मैं अपना स्वभाव अच्छा रखूँगा, सुंदर दीखने का प्रयत्न करूँगा और अच्छे लगनेवाले वस्त्र पहनूँगा। धीरे बोलूँगा और विनम्र बना रहूँगा, दूसरों की प्रशंसा करने में उदार रहूँगा। किसी की आलोचना नहीं करूँगा, किसी में दोष नहीं निकालूँगा, किसी को नियमित करने अथवा सुधारने का प्रयत्न नहीं करूँगा।

7. आज मैं वर्तमान समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न करूँगा तथा जीवन की सभी समस्याओं को एक साथ हाथ में नहीं लूँगा। यदि मुझे जीवन भर कोई काम करने हैं, तो चाहे वे मुझे मूर्छित करनेवाले ही क्यों न हों, उन्हें बराबर बारह घंटे तक करता रहूँगा।

8. आज के लिए मैं अपना कार्यक्रम बनाऊँगा। हर घंटे में जो कुछ मैं करना चाहूँगा, उसे लिख लूँगा। चाहे मैं उसका पूरी तरह से पालन न भी कर सकूँ पर उसे बनाऊँगा जरूर, क्योंकि इससे जल्दबाजी और अनिर्णय की अवस्था दूर हो जाएगी।

9. आज आधा घंटा मैं अपने आराम के लिए रखूँगा। इस आधे घंटे मे मैं परमात्मा के बारे मे सोचूँगा ताकि अपने जीवन के विषय में अधिक अंतर्दृष्टि प्राप्त कर सकूँ।

10. आज मैं निर्भय रहूँगा, मैं सुख और सौंदर्य प्राप्त करने, प्यार करने तथा यह विश्वास करने में, कि जिन्हें मैं प्यार करता हूँ वे भी मुझे प्यार करते हैं, पीछे नहीं रहूँगा।

यदि हम मन में सुख-शांति का विकास करना चाहें तो हमें इस नियम का पालन करना चाहिए - आनंदपूर्ण ढंग से सोचिए तथा आचरण कीजिए। आप आनंद का अनुभव करेंगे।

❑

जैसे को तैसा नहीं

कई वर्षों पहले की बात है, एक रात मैं यलोस्टोन पार्क से गुजर रहा था। दूसरे यात्रियों के साथ में देवदार तथा अन्य वृक्षों के झुरमुट के सामनेवाले ब्लिचर्स पर बैठा था। एकाएक जिस पशु को देखने के लिए हम प्रतीक्षा कर रहे थे, वही जंगल का आतंक, भूरे रंग का एक रीछ रोशनी में आकर रसोईघर से लाये कुड़े-करकट को खाने लगा। मेजर मार्टीडेन जो जंगल-अधिकारी थे, उत्तेजना व आतुरता के साथ यात्रियों को रीछ के विषय में जानकारी देने लगे। उन्होंने कहा कि भूरा रीछ भैंसे तथा काढ़ियाक जाति के रीछ को छोड़ पश्चिमी संसार के अन्य किसी भी पशु को मात दे सकता है। फिर भी उस रात मैंने देखा कि उस भूरे रीछ ने एक अन्य पशु को भी उस जंगल से बाहर आने दिया तथा रोशन में अपने साथ कूड़ा-करकट खाने दिया। यह पशु अमेरिका का एक जहरीला जानवर 'स्कंक' था। रीछ यह भली-भाँति जानता था कि वह स्कंक को अपने शक्तिशाली पंजे के एक झपाटे में नष्ट नहीं कर सकता। अनुभव ने उसे सिखा दिया कि ऐसा करने से कोई लाभ नहीं, इसलिए उसने उसे नहीं मारा।

मेरा भी ऐसा ही अनुभव रहा है। बचपन में में अपने फार्म पर काम करता था। मैंने एक स्कंक को झाड़ियों में फाँस किया था। और आज प्रौढ़ होने के बाद भी मैंने इस न्यूयॉर्क की पगडंडी पर कुछ दो पैरवाले मानव-स्कंक देखे हैं। अपने कटु अनुभवों से मैं यह जानता हूँ कि मानव स्कंक और जंगली-स्कंक दोनों में से किसी एक को भी छेड़ना श्रेयस्कर नहीं होता।

जब हम अपने शत्रुओं से घृणा करते हैं तो उन्हें हम अपनी भूख, नींद, रक्तचाप, स्वास्थ्य तथा सुख पर हावी होने देते हैं? हमारे शत्रुओं को यदि यह ज्ञात हो जाए कि उनसे हम दु:खी और तंग हो रहे हैं तो वे प्रसन्नता से नाच उठें। हमारी घृणा उन्हें चोट नहीं पहुँचाती बल्कि वह हमारे जीवन को नर्क बना देती है।

हाल ही मैं मेरे एक मित्र को हृदय रोग का घातक दौरा पड़ा। उसके डॉक्टर ने उसे बिस्तर पर लेटे रहने की सलाह दी और सावधान किया कि किसी भी परिस्थिति में क्रोध न करे। डॉक्टर जानते हैं कि यदि आपका हृदय कमजोर है तो थोडा सा क्रोध भी आपके प्राण ले सकता है।

क्रोध के कारण ही कुछ वर्ष पूर्व वाशिंगटन के एक कैफे मालिक की मृत्यु हो गई थी। पुलिस विभाग के प्रमुख जेरी स्वाटोंट ने एक पत्र में लिखा कि ''कुछ वर्ष हुए वाशिंगटन के एक कैफे मालिक ने क्रोध में आकर अपने प्राण दे दिए। उसे क्रोध इसलिए आया कि उसके रसोइये ने उसकी केतली में से कॉफी पीने की जिद की। कैफे का मालिक इतना क्रोधी था कि उसने पिस्तौल लेकर उस रसोइये का पीछा किया और उसी आवेश में हृदय-गति रुक जाने से वह मर गया। मरने पर भी वह अपने पिस्तौल को बराबर हाथ में दबाए हुए था।

घृणा के कारण हम स्वाद लेकर भोजन भी नहीं कर पाते। बाइबिल में इसी भाव को इस तरह समझाया गया है कि प्यार से खिलाये गए कंदमूल घृणा से खिलावे गये पकवान से अधिक स्वादिष्ट लगते हैं।

यदि हमारे शत्रुओं को पता लग जाए कि उनके प्रति हमारी घृणा हमें नष्ट कर कर रही है, थका रही है; हमारी आकृति को विकृत कर रही है, हृदयरोग बढ़ा रही है तथा हमारी आयु को कम कर रही है, तो उनकी बाछें खिल जाएँ।

यदि हम अपने शत्रु से प्यार न भी कर सकें तो कम-से-कम अपने आप से तो करें। हमें अपने को इतना प्यार करना चाहिए कि हमारे शत्रु हमारे सुख, स्वास्थ्य तथा आकृति पर काबू न पा सकें।

शेक्सपियर का कहना है कि शत्रु को झोंकने के लिए भाड़ को इतना तेज न करो कि तुम स्वयं जल जाओ। शत्रुओं को बारंबार क्षमा कर देने की बात कहकर ईसा ने हमें ठोस व्यावहारिक शिक्षा भी दी है।

हो सकता है कि हम ऐसे संत पुरुष न हो कि अपने शत्रुओं को क्षमा कर दें, पर अपने सुख एवं स्वास्थ्य के हित में हमें चाहिए कि हम उन्हें क्षमा कर दें और भुला दें। ऐसा करना बड़ी बुद्धिमानी है। कन्फ्यूशियस का मत है कि किसी के द्वारा लूटा जाना अथवा किसी के अन्याय का शिकार होना, स्वयं में इतना कष्टकर नहीं होता जितना कि उसे बराबर मन-ही-मन घोटते रहना। एक बार मैंने जनरल आइजनहॉवर के पुत्र जॉन से पूछा, ''क्या वे कभी अपनी रुष्टता को बराबर बनाए रखते हैं? उत्तर में उन्होंने बनाया कि ''पिताजी जिन व्यक्तियों से रुष्ट होते हैं, उनके बारे में सोच कर एक क्षण भी नष्ट नहीं करते।

न्यूयॉर्क के भूतपर्व मेयर विलियम जे. गैनर की भी यही नीति थी। समाचार पत्रों ने उनकी कटु आलोचना की। एक सनकी ने तो गोली चलाकर उनका प्राय: अंत ही कर दिया होता किंतु अस्पताल में मृत्यु के संघर्ष करते हुए भी उन्होंने कहा, ''रात आती है और मैं हर घटना को भूलकर प्रत्येक व्यक्ति को क्षमा कर देता हूँ।'' क्या ऐसा करना घोर आदर्शवादिता नहीं है? क्या यह अत्यधिक सौम्य एवं मधुर आचरण नहीं? यदि आप ऐसा मानते हैं तो जर्मनी के महान दार्शनिक और 'स्टडीज-इन-पेसिमिज्म' के लेखक शोपेनहॉवर के मत पर ध्यान दीजिए। शोपेनहॉवर जीवन को एक व्यर्थ और दु:खद उपक्रम मानते थे। विषाद उनके चारों ओर चूता रहता था। फिर भी अपनी नैराश्य की गहराइयों में से वे एक बार चिल्ला उठे, ''जहाँ तक संभव हो किसी से दुश्मनी न रखो।''

एक बार मैंने बनार्ड बरूच से, जो छह राष्ट्रपतियों - विल्सन, हॉर्डिंग, कूलिज, हूवर, रूजवेल्ट और ट्रूमेन - के सलाहकार थे; पूछा ''क्या आप अपने शत्रुओं के आक्षेपों से कभी दु:खी होते हैं?''

उत्तर में उन्होंने कहा, 'कोई व्यक्ति मुझे न तो दुखी कर सकता है और न नीचा दिखा सकता है। मैं उसे ऐसा कभी नहीं करने दूँगा।

यदि हम चाहें तो कोई भी हो, हमें दु:खी नहीं कर सकता और न नीचा ही दिखा सकता है।

लाठियाँ तथा पत्थर मेरी पीठ को तो तोड़ सकते हैं, पर शब्द मुझे चोट नहीं पहुँचा सकते।''

युगों से मानव ने प्रभु के समान ही अपने शत्रुओं के प्रति भी शत्रुता न रखनेवाले संतों की प्रतिमाओं के सामने श्रद्धा के दीपक जलाए हैं। मैंने प्राय: कनाडा के जैस्पर नेशनल पार्क में खड़े होकर 'एडिथ केवेल' नामक पाश्चात्य विश्व की अत्यंत मनोरम पर्वतमालाओं को देखा है। 12 अक्टूबर, 1915 को एक संत की तरह जर्मन फायरिंग स्क्वाड की शिकार बननेवाली ब्रिटिश नर्स 'एडिथ केवेल' के सम्मान में इन पर्वतमालाओं का नामकरण हुआ है। उसका दोष केवल यही था कि उसने चोरी-छिपे फ्रांसीसी तथा अंग्रेजी सैनिकों को अपने बैल्जियन निवास में शरण दी। उन्हें खिलाया-पिलाया और हॉलैंड बच निकलने में उनकी सहायता की। जैसे ही अंग्रेज पादरी ने सैनिक कारागृह की एक अँधेरी कोठरी में उसे मरने को तैयार करने के लिए प्रवेश किया, एडिथ केवेल ने कहा ''मेरे विचार से देश-प्रेम के अलावा मेरे लिए यह भी आवश्यक है कि मैं किसी के प्रति घृणा तथा कटुता की भावना न रखूँ।'' उक्त शब्द आज भी काँसे तथा पत्थर में खुदे हुए हैं। उस घटना के चार वर्ष बाद उसकी अस्थियों का इंग्लैंड में स्थानांतरण किया गया और वेस्टमिंस्टर एबे में उसकी याद में प्रार्थनाएँ की गईं। आज भी उसकी एक प्रस्तर प्रतिमा लंदन की नेशनल पोर्ट्रेट गैलरी में खड़ी है। यह इंग्लैंड की अमर हस्तियों की प्रतिमाओं में से एक है।

इस महान आत्मा ने कहा था कि देश प्रेम के अलावा मेरे लिए यह भी आवश्यक है कि मैं किसी के प्रति घृणा एवं कटुता की भावना न रखूँ।

अमेरिकी इतिहास में लिंकन को छोड़कर शायद कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं हुआ, जिससे लोगों ने इतनी घृणा, इतना विरोध तथा इतना छल किया हो; किंतु फिर भी हर्नडन द्वारा लिखित जीवनी के अनुसार, लिंकन ने कभी दूसरों को भी अपने प्रति व्यक्त की गई भावनाओं ने नहीं आँका। उनका मानना था कि किसी अन्य व्यक्ति की तरह

ही, उनका शत्रु भी किसी काम को उतनी ही अच्छी तरह से कर सकता है। लिंकन की निंदा करने वाला तथा व्यक्तिगत स्तर पर उनके साथ दुर्व्यवहार करने वाला व्यक्ति भी यदि किसी ओहदे के लिए योग्य होता तो उस व्यक्ति को वह ओहदा देने में वे उतनी ही तत्परता दिखाते जितनी कि अपने मित्र के लिए। उन्होंने किसी भी व्यक्ति को ओहदे से इसलिए नहीं हटाया कि उससे उनकी शत्रुआ थी। या वे उसे नापसंद करते थे।

मेक्लेलन, सेवर्ड तथा स्टैंटन उन व्यक्तियों में से थे जो खुले आम लिंकन की आलोचना करते थे, उनका अपमान करते थे। फिर भी लिंकन ने उनको ऊँचे पद दिए। लिंकन के कानूनी सलाहकार हर्नडर्न के अनुसार लिंकन का विश्वास था कि किसी भी व्यक्ति की, किसी काम के करने न करने के कारण, प्रशंसा अथवा निंदा नहीं की जानी चाहिए क्योंकि हम सभी घटनाचक्र और परिस्थितियों की उपज हैं और वातावरण, संस्कार, शिक्षा एवं स्वभाव के कायल हैं।

लिंकन का विचार शायद ठीक था। यदि हमको विरासत में अपने शत्रु के समान ही शारीरिक, बौद्धिक एवं भावात्मक विशेषताएँ मिली हों तथा जीवन का हमारे प्रति भी वही रवैया रहा हो जो हमारे शत्रु के साथ था, तो हम भी ठीक वही करेंगे जो उसने किया। हम उससे भिन्न शायद कुछ नहीं कर सकते। क्लेरेंस डेरो कहा करते थे कि सबकुछ जानने का अर्थ है सबकुछ समझ लेना। और एक बार सबकुछ समझ लेने के बाद निर्णय अथवा निंदा की गुजाइश नहीं रहती। इसलिए हमें चाहिए कि हम अपने शत्रु से घृणा न कर उस पर दया करें और ईश्वर को धन्यवाद दें कि उसने हमें उसके जैसा नहीं बनाया। अपने शत्रु की निंदा करने तथा उसके प्रति विरोध और प्रतिशोध की भावना रखने के बजाय हमें चाहिए कि हम उसके प्रति क्षमा, सौमनस्य, सहानुभूति और सहयोग की भावना रखें और उसके कल्याण के लिए प्रार्थना करें।

मेरे परिवार के सदस्य प्रत्येक रात प्रार्थना व बाइबिल आदि का नियमित रूप से पाठ करते थे। आज भी मैं अपने पिता को मिसूरी के फॉर्म पर एकांत में प्रभु ईसा के शब्दों को दुहराते हुए सुनता हूँ, ''अपने शत्रु पर प्रेमभाव रखो, जो तुम्हे शाप दे उसे वरदान दो, जो तुमसे घृणा करे उसका भला करो, जो ईर्ष्यावश तुमसे अनुचित लाभ उठाए तथा पीड़ा पहुँचाए उसके भले के लिए प्रार्थना करो।' जब तक मनुष्य अपने आदर्शों का स्मरण करता रहेगा, तब तक ये शब्द निरंतर उसके कानों में गूँजते रहेंगे।

मेरे पिता ने ईसा के इन शब्दों का अनुसरण करने का प्रयास किया था। इन शब्दों ने उन्हें वह वांछित आंतरिक शांति प्रदान की जिसके लिए प्राय: राजा-महाराजा भी तरसते हैं।

मन में सुख शांति का विकास करने के लिए इस दूसरे नियम पर ध्यान दीजिए, जैसे के साथ तैसा मत कीजिए, क्योंकि इससे शत्रु के बजाय आपको अधिक हानि उठानी पड़ेगी। जनरल आइजनहॉवर का अनुकरण कीजिए। जो व्यक्ति आपको पसंद नहीं उसके विषय में सोच-विचार कर एक पल भी नष्ट मत कीजिए।

❑

वरदान के लिए धन्यवाद

हेराल्ड एबोट को मैं वर्षों से जानता हूँ मिसूरी अंतर्गत वेब शहर के दक्षिण मैडिसन एवेन्यू में वे रहते हैं। वे मेरी संस्था में परिसंवाद की व्यवस्था करते थे। एक बार हम दोनों केन्सास शहर में मिले। उन्होंने मुझे मिसूरी में अपने बेल्टन के फार्म तक गाड़ी में पहुँचा दिया। जब हम गाड़ी में जा रहे थे, मैंने उनसे पूछा कि आप चिंतामुक्त कैसे रहते हैं? उत्तर में उन्होंने मुझे एक प्रेरक कथा सुनाई जिसे मैं कभी नहीं भूलूँगा। उन्होंने बताया-

पहले मैं बड़ा दु:खी रहा करता था, किंतु 1934 के वसंत के दिनों की बात है। एक दिन सवेरे मैं वेब शहर की डोगर्टी स्ट्रीट से गुजर रहा था। वहाँ मैंने जो दृश्य देखा, उससे मेरी सारी चिंताएँ मिट गईं। कुछ ही पलों में यह सारी घटना घट गई। किंतु उन पलों में मैंने जितना सीखा, उतना दस वर्षों में भी नहीं सीख सका। गत दो वर्षों से मैं वेब शहर मैं किराने की दुकान चला रहा हूँ। इसके पूर्व मेरी सारी बचत खर्च हो गई थी और ऊपर से कर्ज भी हो गया था। उस कर्ज को चुकाने में मुझे सात वर्ष लगे। गत शनिवार को मुझे अपनी किराने की दुकान भी बंद कर देनी पड़ी और व्यापारियों तथा माइनर्स बैंक से रुपया उधार लेने के लिए भटकना पड़ा ताकि मैं वह रुपया लेकर केन्सास नगर में रोजगार की खोज में जा सकूँ। मैं हारे हुए आदमी की तरह भटक रहा था। मेरी निष्ठा और संघर्ष-शक्ति विलीन हो चुकी थी। एकाएक मैंने रास्ते में एक अपंग व्यक्ति को देखा। वह पहियोंवाले लकड़ी के एक तख्ते पर बैठा था और हाथों में लकड़ी के टुकड़े लिए हुए उनके सहारे सड़क पर सरकता चला जा रहा था। मैं उसे उस समय मिला जब वह सड़क के मोड़ पर कुछ ऊँचा उठकर दूसरी ओर के फुटपाथ पर चढ़ने का प्रयत्न कर रहा था। जैसे ही उसने लकड़ी के तख्ते सहित अपने को उठाया उसकी निगाह मुझ पर पड़ी। मुस्कराते हुए उसने मेरा अभिवादन किया और बड़े उत्साह से कहा, कितना सुहावना समय है। है न? मैंने उसे देखा और महसूस किया कि उसके मुकाबले मैं कितना समृद्ध हूँ। मेरे पास टाँगें हैं और मैं चल सकता हूँ। मैं आत्मग्लानि में डूब गया। सोचा, यदि यह व्यक्ति बना टाँगों के प्रसन्न एवं निष्ठावान हो सकता है तो मैं टाँगोंवाला होकर भी ऐसा क्यों न बनूँ। मेरा उत्साह दुगुना हो गया। मुझ में आत्मविश्वास जगने लगा। पहले मैंने व्यापारियों अथवा बैंक से सौ डॉलर ही लेने का विचार किया था किंतु अब मैंने दो सौ डालर लेने का साहस किया। मैंने उन्हें यह कहने का निश्चय किया था कि मैं केन्सास शहर जाकर नौकरी के लिए प्रयत्न करना चाहता हूँ। किंतु अब मैंने विश्वास के साथ कहा कि केन्सास शहर में मैं नौकरी करने जा रहा हूँ। मुझे कर्ज भी मिल गया और नौकरी भी।

अब मैंने बाथरूम के शीशे पर कुछ लिख रखा है जिसे मैं प्रतिदिन दाढ़ी बनाते समय पढ़ता हूँ। शीशे पर लिखे हुए वे शब्द इस प्रकार हैं-

'मैं दु:खी था इसलिए कि मेरे पहनने को जूते नहीं थे, पर गली में एक ऐसा आदमी था जिसके टाँगे ही नहीं थीं।'

हमारे जीवन में नब्बे प्रतिशत बात सही होती है। केवल दस प्रतिशत ही गलत होती है। यदि हमें सुखी रहना है तो उन नब्बे प्रतिशत बातों पर ही ध्यान देकर उन दस प्रतिशत गलत बातों को भुला देना चाहिए और यदि इसके विपरीत चिंतित और दु:खी होना है या उदर व्रण का शिकार बनना है तो उन दस प्रतिशत गलत बातों पर ध्यान देकर नब्बे प्रतिशत सही बातों को छोड़ देना चाहिए।

क्रोमवेल के समय के बहुत से गिरजाघरों में आज भी लिखा हुआ है कि, 'सोचो और धन्यवाद दो'' ये शब्द हमारे दिलों में भी खुदे रहने चाहिए। जिन बातों के लिए आप कृतज्ञ हैं, उन्हीं के बारे में सोचिए तथा अपने द्वारा उपलब्ध ऐश्वर्य तथा वरदान के लिए भगवान को धन्यवाद दीजिए।

गुलिवर्स ट्रेवल नामक पुस्तक के लेखक जोनाथन स्वीफ्ट अंग्रेजी साहित्य के अत्यंत निराशावादी लेखक थे। उन्हें

इस संसार में पैदा होने का दु:ख था। दु:ख की इस भावना के कारण अपने जन्मदिन पर वे मातम मनाते और भूखे रहते। अपने नैराश्य के बावजूद यह घोर निराशावादी साहित्यकार सुखद और उल्लासपूर्ण भावनाओं को स्वास्थ्य प्रदायनी शक्तियाँ मानता था तथा उनकी सराहना करता था। व पथ्य, मौन और प्रसन्नता को संसार का सबसे कुशल डॉक्टर समझता था।

अपने अंदर के अपूर्व एवं असीम वैभव पर ध्यान देकर हम डॉक्टर 'उल्लास' की सेवायें हर घड़ी प्राप्त कर सकते हैं। क्या आप रुपयों के बदले अपनी नियामतों का सौदा करेगें? क्या आप रुपयों के बदले अपनी आँखें खोने को तैयार हो जाएँगे? क्या आप अपने परिवार, अपने बच्चों और अपने हाथों का सौदा करेंगे? अपने उपर्युक्त समस्त वैभव पर विचार कीजिए और आप महसूस करेंगे कि उन सभी नियामतों का आप संसार के किसी भी वैभव से सौदा नहीं कर सकते।

पर क्या सचमुच ही हम अपनी नियामतों की सराहना करते हैं? नहीं। शोपेनहॉवर का कथन है कि ''हम सदैव अपने अभाव के संबंध में ही सोचा करते हैं। अपनी नियामतों के बारे में बहुत कम सोचते हैं।''

यह हमारा दुर्भाग्य है। संसार की लड़ाइयों और बीमारियों ने जितना दु:ख नहीं फैलाया उतना हमारी इस भावना ने फैलाया है। इस भावना के कारण ही जॉन पालमर जैसा सदा प्रसन्न रहनेवाला व्यक्ति भी असंतुष्ट, वृद्ध एवं दु:खी बन गया और उसकी सारी गृहस्थी नष्ट हो गई। मैं यह उन्हीं के शब्दों में कह रहा हूँ।

श्री पालमर न्यूजर्सी अंतर्गत टेटेरसन में रहते हैं। अपनी परिस्थितियों का विवरण देते हुए उन्होंने बताया कि ''सैनिक सेवा से निवृत्त होने के कुछ ही दिनों बाद मैंने अपने लिए कारोबार शुरू किया और रात-दिन परिश्रम किया। काम सुचारु रूप से चल रहा था कि कठिनाइयाँ आरंभ हुईं। मुझे मशीनरी के पूर्जे तथा अन्य सामग्री उपलब्ध नहीं होती थी। कारोबार छूटने का भय मुझे बराबर लगा रहता था। मैं इतना चिंतित रहता था कि जल्दी ही बूढ़ा हो गया और दु:खी रहने लगा। अपनी इस दशा का पता मुझे उस समय नहीं चला। किंतु बाद में मैंने महसूस किया कि मेरी सुखी गृहस्थी नष्ट होने वाली है।

तब एक दिन मेरे पास करनेवाले एक दिव्याँग सिपाही ने मुझे कहा, ''जॉन, तुम्हें अपने आप पर शर्म आनी चाहिए। तुम तो ऐसी बात कर रहे हो जैसे कि संसार में तुम्हीं एक दु:खी आदमी हो। यदि तुम्हें कुछ समय के लिए कारोबार बंद भी करना पड़े तो क्या हुआ। जब परिस्थितियाँ सामान्य हो जाएँ, उसे फिर चालू कर देना। तुममें बहुत सी ऐसी बातें हैं जिनके लिए तुम्हें अपने आपको खुशकिस्मत समझना चाहिए। फिर भी तुम सदैव बड़बड़ाते रहते हो। काश मैं तुम्हारी परिस्थिति में होता। तुम मुझे क्यों नहीं देखते। मेरे एक हाथ है, मेरा आधा चेहरा गोली लगने के कारण विकृत हो गया है फिर भी मैं कभी शिकायत नहीं करता। यदि तुमने बड़बड़ाना नहीं छोड़ा तो तुम्हारा यह कारोबार, तुम्हारा स्वास्थ्य, तुम्हारी गृहस्थी और तुम्हारे मित्र सब कोई तुमको छोड़ देंगे।

उसकी इस बात ने मेरा दिमाग ठीक कर दिया। उसने मुझे अपनी स्थिति का ज्ञान कराया। मैंने उसी समय निश्चय कर लिया कि मैं पूर्ववत् प्रसन्नचित्त रहने का प्रयत्न करूँगा और यही किया।''

लूसिल ब्लेक नाम की मेरी एक महिला मित्र अपने अभाव में सदा चिंतित रहती थी। अपने पास जो कुछ है उसी से प्रसन्न रहना सीखने के पूर्व वह दु:ख के कगार पर खड़ी काँपती रहती थी।

बहुत वर्ष पूर्व कोलंबिया विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ जर्नलिज्म में मैं लूसिल के साथ लघुकथा लिखना सीख रहा था। उसके नौ वर्ष बाद उसे गहरा धक्का लगा। उन दिनों वह एरीजोना अंतर्गत टेक्सोन में रहती थी। उसने अपनी कहानी सुनाते हुए कहा-

''मैं अनेक प्रवृत्तियों के जाल में फँसी हुई थी। ऐरीजोना विश्वविद्यालय में वाद्य और संगीत सीखती थी, नगर में

चिकित्सा संबंधी व्याख्यानमाला का प्रबंध करती थी, अपने निवास स्थान में संगीत समीक्षा की शिक्षा देती थी तथा समारोह नृत्य एवं घुड़सवारी में भाग लेती थी। एक दिन सवेरे मुझे मालूम हुआ कि मैं हृदयरोग की शिकार बन गई हूँ। मुझे काठ मार गया। डॉक्टर ने कहा, 'तुम्हें पूरे एक वर्ष तक बिस्तर में पड़े-पड़े आराम करना होगा।' उसने मुझे धीरज नहीं बँधाया कि मैं फिर से स्वस्थ और सशक्त बन जाऊँगी। उसने उत्साहित नहीं किया।

मैंने सोचा, एक वर्ष तक बिस्तर में पड़े-पड़े मैं बेकार हो जाऊँगी, शायद मर भी जाऊँ। इन विचारों ने मुझे भयभीत कर दिया। मुझे यह रोग क्यों हुआ। मुझे ऐसी सजा क्यों मिली। मैंने ऐसा क्या किया था? मैं रोती-झींकती रही। दु:खी और विद्रोही बन गई। पर डॉक्टर के आदेश के अनुसार बिस्तर में ही सोती रहती। मेरे एक पड़ोसी कलाकार श्री रेडोल्फ ने एक दिन मुझे कहा कि 'तुम एक वर्ष तक बिस्तर में पड़े रहना बड़ा दु:खदायी समझती हो किंतु ऐसी बात नहीं है। तुम्हें इस अरसे में सोचने-विचारने का समय मिलेगा और अपने आपको पहचान सकोगी। आने-वाले कुछ ही महीनों में तुम अपने जीवन में अब तक की गई आध्यात्मिक प्रगति से कहीं अधिक प्रगति कर पाओगी।' मैंने धीरज के साथ नवीन मूल्यों का विकास करने का प्रयत्न किया। मैं प्रेरणायक पुस्तकें पढ़ने लगी। एक दिन रेडियो से प्रसारित किया गया कि जो आपकी आत्मा में है वही बाहर प्रकट होता है। पहले भी मैंने इस प्रकार के शब्द सुने थे, किंतु इस बार ये शब्द मेरे मन में घर कर गये। मैंने निश्चय किया कि मैं वही बात सोचूँगी जिससे जीने की प्रेरणा मिल सके। और ऐसे विचार स्वास्थ्य, प्रसन्नता और सुख के विचार ही हो सकते थे। प्रत्येक सवेरे जागने के बाद मैं अपने आप को उन नियामतों के बारे में सोचने के लिए बाध्य करती जिनके कारण मैं अपने आप को खुशकिस्मत समझती थी। मैं सोचती, मेरी एक सलौनी बच्ची है। मैं देख सकती हूँ, सुन सकती हूँ। रेडियो पर मधुर संगीत का आनंद ले सकती हूँ। मेरे पास अध्ययन के लिए समय है, अच्छा भोजन मुझे मिलता है, अच्छे मित्रों की संगति मुझे प्राप्त है, आदि-आदि। इस प्रकार मैं बहुत प्रसन्न रहने लगी। मेरे पास कई मित्र मिलने आने लगे इसलिए डॉक्टर ने केबिन के बाहर सूचना की एक तख्ती लटका दी, जिसके अनुसार एक निश्चित समय पर केवल एक ही व्यक्ति मुझसे मिल सकता था।

उस बात को आज नौ वर्ष बीत गये हैं और अब मैं सुखद और व्यस्त जीवन व्यतीत करती हूँ। एक वर्ष तक बिस्तर में पड़े रहने के कारण मैं ईश्वर का आभार मानती हूँ। ऐरीजोना में एक वर्ष का मेरा वह समय अत्यंत बहुमूल्य एवं सुखद रहा था। उन दिनों प्रत्येक सवेरे मैं अपनी नियामतों का स्मरण करती थी। आज भी उस आदत को मैंने ज्यों-की-त्यों बना रखा है। यह आदत मेरी अमूल्य निधि बन गई है। मुझे खेद है कि मृत्यु के भय से भयभीत होने के पूर्व मैंने यथार्थ में जीना नहीं सीखा था।''

लूसिल ब्लेक ने वही बात सीखी, जो डॉक्टर सेमुअल जॉन्स ने दो सौ वर्ष पूर्व सीखी थी। उनके अनुसार, ''प्रत्येक घटना के उज्ज्वल पक्ष को देखने की आदत का मूल्य हजार डॉलर वार्षिक से भी अधिक है।

ध्यान रखिये ये शब्द किसी पेशेवर आशावादी के नहीं थे बल्कि उस व्यक्ति के थे, जिसने जीवन के बीस वर्ष दु:ख, भूख और गरीबी में काटे थे और अंत में अपने युग और पीढ़ी का प्रसिद्ध लेखक एवं लोकप्रिय प्रवक्ता बन गया था।

लॉगन पियर्सल स्मिथ ने एक बहुत ही तत्त्व की बात कही है, ''जीवन का मुख्य ध्येय मनोवांछित वस्तु की प्राप्ति एवं उसका उपयोग होना चाहिए। जो व्यक्ति बुद्धिमान हैं वे ही उपलब्ध वस्तुओं का आनंद उठा सकते हैं। यदि आप यह जानना चाहें कि रसोईघर में बर्तन धोकर की रोमांचकारी अनुभव प्राप्त किया जा सकता है तो बार्गहिल्ड डहल द्वारा लिखित पुस्तक 'आई वॉन्टेड टू सी' पढ़िए। उसमे अपूर्व साहस का वर्णन है।

इस पुस्तक की महिला लेखिका लगभग अर्ध शताब्दी तक अंधी रही। उसने लिखा है कि ''मेरे एक ही आँख थी

और वह भी ऊपर से इतनी ढकी रहती थी कि मुझे आँख की बाई तरफ से एक छोटे से सुराख में से देखना पड़ता था। पुस्तक को मुझे अपनी आँख के बहुत निकट रखना पड़ता था और आँख की बाई ओर अधिक जोर देना पड़ता था।''

किंतु उसे दया का पात्र बनना स्वीकार नहीं था। वह नहीं चाहती थी कि लोग उसे अपने से हीन समझें। बचपन में वह अपने मित्रों के साथ 'हॉपस्कोच' खेल खेलना चाहती थी किंतु वह जमीन पर बनाये गये निशानों को नहीं देख पाती थी, इसलिए जब सब बच्चे घर चले जाते, वह जमीन पर सरक-सरककर अपनी आँख को उन निशानों के बहुत समीप ले जाती और उन्हें पास से देखती। जमीन पर किये गये उन सारे निशानों को उसने समझ लिया और इस प्रकार दौड़ने के इस खेल में वह बहुत कुशल बन गई। घर पर बड़े अक्षरों की किताब पढ़ते हुए भी वह उसे इतनी समीप रखती कि उसकी बरौनियाँ पुस्तक को छूने लगतीं। उसने कॉलेज से दो डिग्रियाँ प्राप्त कीं। मिनेसोटा विश्वविद्यालय से उसने बी.ए. की डिग्री प्राप्त की और कोलंबिया विश्वविद्यालय से एम.ए. की।

मिनेसोटा अंतर्गत क्वीनवेली के एक छोटे से गाँव में उसने अध्यापन कार्य शुरू किया और उसके बाद साउथ डाकोटा के ऑगस्टाना कॉलेज में साहित्य एवं पत्रकारिता की प्राध्यापिका नियुक्त हुई। तेरह वर्षों तक वहाँ प्राध्यापिका रही। वह महिलाओं के क्लबों में भाषण देती तथा पुस्तकों एवं लेखकों के संबंध में रेडिया से समीक्षा प्रसारित करती। उसने लिखा है कि मेरे दिमाग में पूर्णांध हो जाने का भय सदा बना रहता था। इस भय से मुक्त होने के लिए मैंने अपने जीवन के प्रति उल्लास का रुख अपनाया। सन् 1943 में जब वह बावन वर्ष की थी एक चमत्कारी घटना घटी। प्रसिद्ध्‌ मेया क्लिनिक में उसका ऑपरेशन हुआ और वह पहले से अधिक अच्छी तरह से देखने लगी।

उसके सामने एक नवीन, मोहक एवं चहल-पहलपूर्ण संसार निखर उठा। उसके लिये अब रसोईघर में बर्तन धोना भी एक रोमांचक अनुभव बन गया। उसने लिखा है कि ''मैं कढ़ाई और बर्तनों में सफेद झाग से खेलने लगती, अपने हाथ उनमें डुबों देती और छोटे बुदबुदों को हाथों में भर लेती और उन्हें प्रकाश में रखकर इंद्रधनुष के सतरंगी दृश्य का आनंद उठाती।''

वह घने हिमपात के बीच उड़ती हुई उन स्पेरो चिड़ियों को, जो अपने काले एवं भूरे पँखों को फडफड़ाती हुई उड़ती थीं, रसोईघर की खिड़की से देखती। उन बुदबुदों तथा चिड़ियों को देखकर उसे ऐसा आध्यात्मिक आनंद प्राप्त होता था कि उसने पुस्तक के अंत में लिखा है कि ''हे प्रभु इस आनंद के लिए मैं तुम्हें बार-बार धन्यवाद देती हूँ।''

जरा सोचियेत्र तश्तरियाँ धोते हुए पानी के बुदबुदों में इंद्रधनुष के रंगों और हिमपात के बीच उड़ती हुई स्पेरो चिड़ियों को देख सकने के कारण भी ईश्वर को धन्यवाद।

हमें शर्म आनी चाहिए कि जीवन भर सौंदर्य के नंदनवन में रहकर भी हम उसके आनंद का उपभोग करने से वंचित रहते हैं। यदि आप चिंतामुक्त होकर जीना चाहते हैं तो इस चौथे नियम पर ध्यान दीजिये - अपने वरदानों को याद रखिए और कठिनाइयों को भुला दीजिए।

❑

सुख-शांति के उपाय

अपने आप को पहचानिये और जो आप हैं वही बने रहिये। ध्यान रखिए कि इस धरती अपनी तरह के आप अकेले ही हैं।

मेरे पास उत्तरी कैरोलिना माउंट एयरी की श्रीमती एडिथ एलरेड का एक पत्र है। उस पत्र में उन्होंने लिखा है, ''बचपन में मै अत्यंत भावुक एवं शर्मीली थी, मैं काफी मोटी थी और अपने फूले कपोलों के कारण तो और भी स्थूलकाय लगती थी। मेरी माँ पुराने खयालों की थी इसलिए कपड़ों को सुंदर ढंग से सिलवाना निरी मूर्खता की बात समझती थी। उसका कहना था कि ढीला वस्त्र चलता है और तंग वस्त्र फटता है। अपने इसी सिद्धांत के अनुसार वह मेरी पोशाक बनवाती। अपने बेढंगे कपड़ों के कारण मैं कभी पार्टियों में भी नहीं जाती और न किसी प्रकार का मनोरंजन करती। स्कूल में भी अन्य बच्चों के साथ बाह्य प्रवृत्तियों में भाग नहीं लेती थी। अकसर सोचती थी कि मैं सबसे निराली हूँ और मेरी कोई भी अपेक्षा नहीं रखता।

बड़ी होने पर मेरा विवाह ऐसे व्यक्ति से हुआ जो अवस्था में मुझसे कई वर्ष बड़ा था। मुझमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ, मेरी ससुराल के लोग प्रतिष्ठा एवं आत्मविश्वास वाले लोग थे। वह घराना अच्छी-से-अच्छी बहू के योग्य था, किंतु मैं वैसी नहीं थी। मैंने उन लोगों के समान बनने की बहुत कोशिश की, किंतु व्यर्थ। ज्यों-ज्यों वे मुझे अपने दायरे से बाहर लाने का प्रयत्न करते, त्यों-त्यों मैं अधिक-से-अधिक अपने घरों से बँधती जाती। मैं निरुत्साही एवं क्रोधी बन गई और अपन सभी मित्रों से दूर रहने लगी। मेरी मानसिक अवस्था इतनी खराब हो गई थी कि दरवाजे की घंटी की टनटनाहट भी मुझे भयभीत कर देती थी। जीवन की असफलता मुझ पर इतनी हावी थी कि मुझे हर बार डर लगा रहता था कि कहीं मेरा पति मेरी कमजोरी को न जान ले। इसलिए जब कभी हम बाहर के लोगों के साथ होते, में प्रसन्नचित्त रहने का प्रयास करती और अपने इस अभिनय को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर कर जाती। अपनी इस कृत्रिमता को मैं जानती थी और कई दिनों तक इसी को लेकर बहुत दु:खी बनी रही। अंत में एक दिन मैं इतनी निराश हो गई कि मुझे जीने में कोई सार नजर नहीं आया और आत्महत्या की बात सोचने लगी।''

इस निराश स्त्री का जीवन कैसे बदला?

श्रीमती एलरेड ने बताया कि ''एक साधारण सी बात ने मेरे जीवन को बदल दिया। एक दिन मेरी सास मुझे बता रही थीं कि किस प्रकार उन्होंने अपने बच्चों का लालन-पालन किया। मेरी सास ने कहा, 'मैंने सदा इस बात पर जोर दिया कि चाहे कुछ भी हो मेरे बच्चे अपनी स्वाभाविकता को न छोड़ें- और वे अपनी स्वाभाविकता में ही रहें।' सास के इन शब्दों ने मेरे जीवन को बदल दिया। तत्काल ही मैंने समझ लिया कि मेरी चिंताओं का मुख्य कारण यह था कि में अपने आपको ऐसे साँचे में ढालना चाहती थी जिसके अनुरूप में नहीं थी।

मैंने अपने स्वाभाविक रूप से रहना आरंभ किया। अपने व्यक्तित्व का अध्ययन करने, तथा मैं क्या हूँ, यह जानने का प्रयास किया। मैंने अपनी सभी अच्छी बातों का अध्ययन किया। रंगों तथा रहन-सहन के तरीकों का अध्ययन किया। मैं वैसी ही पोशाक पहनने लगी जो मेरे विचार से मुझे शोभा देती थी। मैंने मित्र बनाना आरंभ किया। सबसे पहले मैंने एक छोटी सी संस्था में प्रवेश किया, जहाँ मुझे कुछ बोलने का काम सौंपा गया। पहले तो मैं भय के मारे घबरा उठी, किंतु जैसे-जैसे मैं उस कार्यक्रम में बोलती गई, मेरी हिम्मत बढ़ती गई। पूर्ण सफलता पाने में मुझे समय अवश्य लगा, किंतु आज मैं आशा से अधिक सुखी हूँ। अपने बच्चों का लालन-पालन करते समय मैं उन्हें सदा वही शिक्षा देती हूँ जिसे मैंने कटु अनुभवों के बाद प्राप्त किया है। मैं उन्हें कहती कि कुछ भी हो, वही बने रहो जो तुम हो।''

डॉक्टर जेम्स गॉर्डन गिलकी का कहना है कि अपनी स्वाभाविकता को स्वीकार करने की समस्या इतिहास की तरह बहुत पुरानी है और मानव जीवन की तरह ही विश्वव्यापी भी। आज के अनेक स्नायु रोगों एवं मनोगंथियों का मूल कारण यह है कि हम अपनी स्वाभाविकता को स्वीकार नहीं करते। एन्जेलो पाट्री ने बाल शिक्षा पर तेरह पुस्तकें तथा हजारों लेख पत्रिकाओं में लिखे हैं। उनका कहना है कि ''अपनी स्वाभाविकता से भिन्न कुछ और बननेवाले व्यक्ति के समान दु:खी व्यक्ति अन्य कोई नहीं होता।

अपने स्वभाव से भिन्न बनने की यह प्रवृत्ति हॉलीवुड में विशेष रूप से सिर उठाए हुए हैं। हॉलीवुड के एक प्रसिद्ध निर्देशक सैमवुड का कहना है कि नए अभिनेताओं को उनकी स्वाभाविकता में लाना उनके लिए सबसे बड़ा सिरदर्द है। वे या तो लाना टर्नर की नकल करेंगे या क्लार्क गेबल्स की, और वह भी बड़े भद्दे ढंग से। सैमवुड उन्हें अकसर कहा करता हैं कि ''जनता को लाना टर्नर तथा क्लार्क गेबल्स के अभिनय की झाँकी मिल चुकी है, वह अब कुछ नवीन कला देखना चाहती है।''

'गुडबाय मिस्टर चिप्स' तथा 'फोर हूम दी बेल टॉल्स,' जैसे चलचित्रों का निर्देशन करने के पूर्व सैमवुड ने कई वर्ष व्यापारी केंद्रों में इसलिए बिताये कि वे वहाँ से अनुभव प्राप्त कर 'सेल्स पर्सनैलिटीज' का विकास कर सकें। उसका कहना है कि सिनेमा संसार तथा व्यवसाय जगत् में एक ही से सिद्धांत लागू होते हैं। आप नकलची बनकर या रट्टू तोता बनकर कोई काम नहीं कर सकते। जो व्यक्ति अस्वाभाविक बनने का प्रयत्न करे, उसे चित्र-जगत् में नहीं लेने में ही भला है।

हाल ही में एक बड़ी तेल कंपनी के रोजगार निदेशक पॉल बॉइन्टन से मैंने पूछा था कि नौकरी के लिए प्रार्थनापत्र देते समय लोग सबसे बड़ी गलती कहाँ करते हैं? इस संबंध में उन्हें अच्छी जानकारी होना स्वाभाविक है क्योंकि वे साठ हजार से भी अधिक नौकरी ढूँढ़ने वाले लोगों का इंटरव्यु ले चुके हैं और उन्होंने 'सिक्स वेज टू गेट दी जॉब' नामक पुस्तक भी लिखी है। उत्तर में उन्होंने बताया कि 'नौकरी ढूँढ़ने वाले लोग सबसे बड़ी गलती यह करते हैं कि वे अपनी स्वाभाविकता में नहीं रहते। नि:संकोच एवं स्पष्टवादी होने के बजाय प्राय: वे ऐसे उत्तर देने का प्रयास करते हैं जिन्हें वे सोचते हैं, हम पसंद करते हैं। किंतु इससे काम नहीं बनता, क्योंकि कोई भी व्यक्ति अस्वाभाविकता को पसंद नहीं करता और न कोई जाली सिक्के को ही स्वीकार करता है।'

एक कंडक्टर की लड़की कारा डेली को यह शिक्षा बड़ी कठिनाइयाँ झेलने के बाद मिली। वह एक गायिका बनना चाहती थी, किंतु उसके चेहरे की आकृति उसके लिए अभिशाप बन गई। उसका मुँह बड़ा था और दाँत निकले हुए थे। न्यूजर्सी के नाइट क्लब में जब उसने पहले पहल गाया तो ऊपर के होंठ को नीचा करके निकले हुए दाँतों को ढकने का प्रयास किया। उसका वह प्रयास मखौल बन गया और उसकी असफलता निश्चित हो गई।

किंतु उस नाइट क्लब में एक व्यक्ति ने उस लड़की को गाते हुए सुना था। उसने सोचा कि इस लड़की में संगीत प्रतिभा है और उसने उसे स्पष्ट शब्दों में कर दिया कि मैंने तुम्हारा गाना सुना है और मैं यह भी जानता हूँ कि गाते समय तुम किस बात को छिपाने का प्रयत्न करती हो। तुम्हें अपने निकले हुए दाँतों से शर्म लगती है। लड़की यह सुनकर उलझन में पड गई। किंतु वह व्यक्ति कहता गया। उसने कहा कि ''निकले दाँत होना कोई अपराध नहीं है। उन्हें छिपाने की कभी कोशिश मत करो, अपना मुँह पूरी तरह से खोलो और जब श्रोता यह जानेंगे कि तुम्हें दाँतों के कारण शर्म नहीं आती तो तुम से स्नेह करेंगे। इसके अलावा यह भी संभव है कि जिन दाँतों को तुम छिपाने का प्रयत्न करती हो वे ही तुम्हारे लिए वरदान बन जाएँ।''

कारा डेली ने यह सलाह मान ली और अपने दाँतों की परवाह करना छोड़ दिया। उस दिन से वह केवल अपने श्रोताओं का ध्यान रखने लगी। और अपने मुँह को पूरी तरह से खोलकर इतने उत्साह और आनंद से गाती कि कुछ

दिनों बाद वह एक प्रसिद्ध पार्श्व गायिका और रेडियो कलाकार बन गई। यहाँ तक कि अब कई अन्य नकलची भी उसकी नकल करते नजर आते हैं।

एक बार प्रसिद्ध विलियम जेम्स उन लोगों के बारे में बता रहे थे, जिन्होंने अपने को कभी नहीं पहचाना। उनका कहना था कि औसतन मनुष्य अपने में निहित केवल दस प्रतिशत मानसिक शक्तियों का ही विकास कर पाता है। हमें क्या होना चाहिए, इस दृष्टि से हम पूरे सजग नहीं हैं। हम अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों का बहुत कम उपयोग करते हैं। व्यापक दृष्टि से देखा जाए तो मनुष्य अपनी सीमाओं में भी पूर्णतया विकसित नहीं है। उसमें अनेक प्रकार की शक्तियाँ हैं। जिनका पूरा-पूरा उपयोग करने में वह सदा ही असफल रहा है।

हममें भी वे सभी शक्तियाँ पूरी मात्रा में हैं इसलिए दूसरों की बराबरी नहीं कर सकने की चिंता में हमें एक क्षण भी नष्ट नहीं करना चाहिए। अपनी सानी के हम इस संसार में एक ही हैं। ठीक हमारे जैसा इस संसार में न कभी कोई हुआ और न कभी होगा। हम अपने माता-पिता की संतान हैं तथा उनकी प्रवृत्तियाँ, उनके संस्कार एवं गुण-अवगुण हमको मिले हैं। एमरैम शीनफेल्ड के अनुसार प्रत्येक क्रोमोसोम में बीसियों जनन-कण होते हैं केवल एक जनक-कण ही व्यक्ति की सारी जीवनधारा बदलने को काफी है। मनुष्य का निर्माण विचित्र ढंग से होता है। एक ही माता-पिता से उत्पन्न चाहे हजारों भाई-बहन क्यों न हों, वे एक-दूसरे से बिलकुल मिन्न होंगे। यह एक वैज्ञानिक तथ्य है, कल्पना की बात नहीं। यदि आप इस संबंध में और अधिक जानकारी चाहें तो सार्वजनिक पुस्तकालय में जाकर एमरैम शीनफेल्ड की 'यू एंड हेरीडिटी' नामक पुस्तक पढ़िये।

मैं आपको अपनी स्वाभाविकता में रहने की बात विश्वास के साथ इसलिए कहता हूँ कि मैं इसे बहुत ही गंभीर बात समझता हूँ। मैं जो कुछ कर रहा हूँ वह दु:खद एव कीमती अनुभवों के आधार पर कह रहा हूँ। इसी विषय पर एक दृष्टांत लीजिए। जब मैं मिसूरी के धान के खेतों को छोड़ पहले पहल न्यूयॉर्क में आया, तब मैंने अमेरिकन एकेडेमी ऑफ ड्रामेटिक आर्ट्स में प्रवेश लिया। मैं अभिनेता बनना चाहता था। मैं इस क्षेत्र को सुगम, सरल और निश्चित सिद्धि देनेवाला क्षेत्र समझता था। मुझे समझ में नहीं आता था कि उत्साही लोग हजारों की संख्या में इस क्षेत्र को क्यों नहीं अपनाते। मेरी योजना यह थी कि उस समय के जॉन ड्रयू, वाल्टर हैंपडन तथा ओरिस स्कीनर जैसे प्रसिद्ध अभिनेताओं की सफलता एव सिद्धि का अध्ययन करूँ। मैंने सोचा कि मैं उन सभी प्रसिद्ध अभिनेताओं की विशिष्टताओं का अनुकरण कर अपने में उन गुणों का सुंदर एव सफल समन्वय करूँ। कितने मूर्खतापूर्ण थे मेरे वे विचार। दूसरों की नकल करने में मैंने जीवन के कई वर्ष नष्ट कर दिए और तब कहीं जाकर मुझमें यह विवेक जागा कि मुझे वही बनना है जो मैं हूँ।

इस अनुभव से मुझे शिक्षा ग्रहण कर लेनी चाहिए थी किंतु ऐसा हुआ नहीं। मुझे इस शिक्षा को नये सिरे से सीखना पड़ा। उसके कुछ वर्ष पश्चात् मैंने सार्वजनिक वक्तृता पर व्यावसायिक लोगों के लिए एक सर्वोत्तम पुस्तक लिखने का विचार किया। मैं एक ऐसी पुस्तक लिखना चाहता था जैसी अब तक किसी ने नहीं लिखी। यह पुस्तक लिखते समय भी मेरे मन में वही मूर्खतापूर्ण विचार थे जो अभिनय सीखने के समय थे। मैंने बहुत से लेखकों के विचारों को एक पुस्तक रूप में संकलित कर देने का विचार किया। इस विचार से कि ऐसी पुस्तक अपने में पूर्ण होगी। मैंने जन वक्तृता पर बीसियों पुस्तकें इकट्ठी कीं और उनके विचारों की पांडुलिपि बनाने में एक वर्ष बिता दिया। किंतु अंतत: मुझे लगा कि इस बार भी मैं वही मूर्खता कर रहा हूँ जो पहले की थी। दूसरे व्यक्तियों के विचारों की यह खिचड़ी जो मैंने पकाई थी, वह बड़ी बेढंगी थी। उसमें इतनी कृत्रिमता तथा प्रवाहहीनता थी कि कोई भी व्यवसायी उसे पढ़ने का कभी कष्ट नहीं करता। इसलिए मैंने साल भर के उस काम को रद्दी की टोकरी में फेंक दिया और नये सिरे से लिखना शुरू किया। इस बार मैंने सोचा कि मुझे अपने सारे दोषों एवं सीमाओं के साथ डेल कारनेगी

बने रहना है। मैं कोई अन्य नहीं बन सकता। इस तरह मैंने भानुमति का पिटारा होने का प्रयास करना छोड़ दिया। मैंने काम करने पर कमर कस ली और सबसे पहले वही काम किया जो मुझे करना चाहिए था। मैंने वक्ता तथा वक्तृता सिखानेवाले एक शिक्षक के नाते अपने अनुभवों, मान्यताओं और निरीक्षणों के आधार पर सार्वजनिक वक्तृता संबंधी एक पाठ्य पुस्तक लिख डाली। मैंने हमेशा के लिए वही पाठ सीखा जो सर वॉल्टर रेले ने सीखा था, जो 1904 में ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में अंग्रेजी साहित्य के प्राध्यापक थे) उसका कहना था- ''मैं शेक्सपियर के समान पुस्तक नहीं लिख सकता, किंतु मैं ऐसी पुस्तक अवश्य लिख सकता हूँ जो मेरी अपनी हो।''

अपनी स्वाभाविकता में रहिये और स्वर्गीय जॉर्ज गर्शविन को अरविग बर्लिन ने जो नेक सलाह दी, उसके अनुसार आचरण कीजिए। बर्लिन और गर्शविन पहली बार मिले तब तक बर्लिन काफी प्रसिद्ध हो चुका था, किंतु गर्शविन टिन-पैन-ऐली में पचपन डॉलर प्रति सप्ताह पर संगीत लेखक का काम करता था। बर्लिन गर्शविन की योग्यता से बहुत प्रभावित हुआ और उसे उस समय मिलने वाले वेतन से तिगुने वेतन पर अपना म्युजिक सेक्रेटरी बनाने का प्रस्ताव किया। किंतु बाद में उसी बर्लिन ने उसे उस प्रस्ताव के विरुद्ध सलाह दी। उसने कहा कि यदि तुम यह नौकरी कर लोगे तो एक सैकंड रेट बर्लिन बनकर रह जाओगे, इसलिए तुम वही बनने की कोशिश करो जो तुम हो और इस प्रकार एक दिन प्रसिद्धि प्राप्त कर सकोगे।

गर्शविन ने उसकी इस सलाह पर ध्यान दिया और धीरे-धीरे अपनी पीढ़ी का एक प्रसिद्ध अमेरीकी संगीतकार बन गया।

चार्ली चेप्लिन, विल रोजर्स, मैरी मार्ग्रेट, मैक्साइड, जेन ओट्री आदि सैंकड़ो व्यक्तियों को यही शिक्षा ग्रहण करनी पड़ी, जिसका मैं इस परिच्छेद में जिक्र करता आ रहा हूँ। उन्होंने भी मेरी तरह ही बड़ी कठिनाई के बाद यह शिक्षा ग्रहण की थी।

जब पहले पहल चार्ली चैल्पिन चित्रजगत् में आया तो चित्रों के निर्देशक ने उसे प्रसिद्ध जर्मन विदूषक की नकल करने का आग्रह किया किंतु जब तक चार्ली चैल्पिन ने अपना स्वाभाविक अभिनय नहीं, किया उसे सफलता नहीं मिली। बॉब होप का अनुभव भी ऐसा ही था। उसने संगीत, नृत्य और अभिनय के क्षेत्र में कई वर्ष बिता दिए किंतु जब तक उसमें अपना स्वाभाविक विवेक नहीं जागा, उसे कोई सफलता नहीं मिली। विल रोजर्स वर्षों तक मौन रह कर हँसी-मजाक के नाटकों में रस्सी के कर्तब दिखाता रहा, किंतु उसे सफलता तभी मिली जब उसे यह ज्ञात हो गया कि दूसरी को हँसाने का उसमें विशेष गुण है। उसके बाद से वह रस्सी के कर्तब बताते हुए हँसी-मजाक की बातें भी किया करता था।

जब मैरी मार्ग्रेट मेक्साइट पहले पहल रेडियो पर कार्यक्रम देने आई तब उसने आयरलैंड के एक विदूषक की नकल की और इसलिए वह असफल रही। किंतु अपनी स्वाभाविक योग्यता प्रदर्शित करने पर वह मिसूरी की साधारण ग्रामीण बाला न्यूयॉर्क की प्रसिद्ध रेडियो कलाकार बन गई।

जब जेन आट्री टेक्सास के बोलचाल के ढंग को छोड़कर शहरी लड़कों की वेषभूषा अपनाकर न्यूयॉर्क के निवासी की तरह रहने लगा तो लोग उस पर हँसने लगे, किंतु जब उसने बेंजो बजा-बजाकर लोकगीत गाने आरंभ किये, वह चित्रपट तथा रेडियो पर ग्रामीण काउबॉय का अभिनय करनेवाला एक सर्वश्रेष्ठ कलाकार बन गया।

इस दुनिया में अपनी सानी के आप एक ही हैं, इस बात से आपको खुश होना चाहिए। प्रकृति द्वारा दी गई नियामतों का पूर्ण दौहन कीजिए। विश्लेषण करके देखा जाए तो सारी कला, आत्माभिव्यक्ति मात्र है। अपने संगीत में आप अपनी आत्मा का ही राग अलापते हैं। आपके द्वारा चित्रित चित्र आपकी आत्मा की ही अभिव्यक्ति हैं। आपके अनुभवों, संस्कारों और वातावरण ने आपको जैसा बनाया है, वैसा ही आपको रहना चाहिए। चाहे अच्छा हो

या बुरा। आपको अपने ही इस उद्यान को विकसित करना चाहिए, चाहे मोहक को चाहे कुरूप। आपको जीवन के वाद्यवृंद में अपन ही लघु वाद्य बजाना चाहिए।

स्वावलंबन शीर्षक निबंध में इमरसन ने कहा है कि ''प्रत्येक मनुष्य की शिक्षा के दौरान एक ऐसा समय आता है, जब वह इस निष्कर्ष पर पहुँच जाता है कि स्पर्धा अज्ञान है और अनुकरण आत्महत्या।'' उसे महसूस होने लगता है कि अपने भाग्य में आये हुए अच्छे या बुरे को उसे स्वीकार कर लेना चाहिए। वह समझने लगता है कि यद्यपि व्यापक विश्व अच्छी वस्तुओं से भरा पडा है तथापि आवश्यक परिश्रम के बिना अन्न का एक कण भी उसके पल्ले नहीं पड़ सकता। अपनी शक्ति का उपयोग कैसे किया जाए, वह हमारे सिवा अन्य कोई नहीं जान सकता और यह सब जानने के लिए प्रयत्नों की आवश्यकता होती है।

इमरसन की इसी बात को स्वर्गीय कवि डगलस मैलौस ने और ढंग से कहा है-

यदि आप पर्वत की चोटी पर देवदार वृक्ष नहीं बन सकते तो घाटी के लघु वृक्ष बनिए, झरने के निकट एक सुंदर छोटा वृक्ष बनिए और यदि वृक्ष भी न बन सकें तो झाड़ी बनिये, यदि झाड़ी भी न बन सकें तो वह घास बनिए जो मार्ग को सुखद बना सके। यदि आप कस्तूरी मृग नहीं बन सकें तो एक मछली ही बनिए, झील की सुंदरतम मछली। हम सभी कप्तान नहीं बन सकते, हमें नाविक बनना होगा, हम सबके लिए कुछ-न-कुछ कार्य है ही - छोटा या बड़ा हो - हमारा काम हमारे पास ही है। यदि आप राजमार्ग नहीं बन सकें तो पगडंडी ही बनिए। यदि आप सूरज न बन सकें तो तारा ही बनिए क्योंकि केवल आकार ही से मनुष्य की सफलता अथवा असफलता का निर्णय नहीं होता। आप अपनी स्वाभाविकतानुसार श्रेष्ठ बनिए।

मन में शांति और निश्चितता का विकास करने के लिए यह नियम याद रखिए - दूसरों की नकल न कीजिए, अपने को पहचानिए और जो आप हैं, वही बने रहिए।

❑

खटास को मिठास बना लो

जिन दिनों मैं यह किताब लिख रहा था, शिकागो विश्वविद्यालय के उपकुलपति मैनार्ड हचिंस से मेरी भेंट हुई थी। मैंने उनसे पूछा कि आप चिंता-मुक्त कैसे रहते हैं। उन्होंने उत्तर दिया कि ''मैं हमेशा सियर्स रोबेक कंपनी के अध्यक्ष स्वर्गीय रोजर्ड बॉल्ड की सलाह के अनुसार आचरण करने का प्रयत्न करता हूँ। उनका कहना था कि 'अपने जीवन की खटास को मिठास में बदल दो'।''

एक महान उपदेशक यही करता है किंतु मूर्ख इसके ठीक विपरीत आचरण करता है। यदि उसके हिस्से नीबू आता है तो वह उसे भी दुर्भाग्य कहकर छोड़ देता है, निराश हो जाता है और आत्मवेदना में घुलने लगता है। किंतु एक बुद्धिमान आदमी उसी नीबू से शर्बत बनाकर अपने दुर्भाग्य से शिक्षा ग्रहण करता है तथा उसमें सुधार करने का प्रयास करता है।

जीवन भर मानव शक्तियों एव मानव प्रकृति का अध्ययन करने के बाद महान मनोवैज्ञानिक एलफ्रेड एडलर ने घोषणा की कि हानि को लाभ में परिवर्तित कर देने की शक्ति मनुष्य की आश्चर्यजनक विशिष्टताओं में से एक है। यहाँ मैं एक अत्यंत रोचक एवं प्रेरक कहानी सुनाऊँगा। यह कहानी मेरी एक परिचित महिला की है। उस महिला का नाम है - थेलमा थोम्पसन और वह न्यूयॉर्क की मॉरनिंग साइट ड्राइव पर रहती है। उस महिला ने बताया कि ''युद्ध के दिनों में मेरे पति की नियुक्ति न्यूमैक्सिको के मोजाव रेगिस्तान में सैनिक प्रशिक्षण कैंप में हुई थी। मुझे उस स्थान से बड़ी चिढ़ और घृणा थी। इसके कारण में बहुत दु:खी रहती थी। मेरे पति के युद्ध अभ्यास के लिए मोजाव रेगिस्तान में जाने पर मुझे एक छोटी सी कुटिया में अकेले रहना पड़ा। जबरदस्त गर्मी थी, तापमान लगभग 124 डिग्री फारेनहाइट रहता था। वहाँ के मूल निवासियों तथा भारतीयों के सिवाय वहाँ कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जिससे बातचीत की जा सके। उनमें से कोई भी अंग्रेजी नहीं जानता था। लू बराबर चलती रहती और भोजन तथा श्वास के साथ शरीर में प्रवेश करती। भीतर बाहर रेत ही रेत हो गई थी। इस हालत से मैं तंग आ गई थी।

मैं इतनी परेशान और दुखी हो गई कि मैंने तंग आकर अपने माता-पिता को पत्र लिखा कि मैं सबकुछ छोड़कर घर लौट आना चाहती हूँ। मैंने लिखा कि एक क्षण के लिए भी मैं यह सब बर्दाश्त नहीं कर सकती। इससे तो जेल में रहना अच्छा है। पत्र के उत्तर में मेरे पिता ने दो पंक्तियाँ लिख भेजीं। इन दो पंक्तियों ने मेरे जीवन की दिशा बदल दी। ये मेरी स्मृति में आज भी गूँजती रहती हैं। उन्होंने लिखा था, 'दो कैदियों ने एक साथ जेल के बाहर देखा, पर एक ने सितारे देखे जबकि दूसरे ने कीचड़।'

मैंने बार-बार इन दो पंक्तियों को पढ़ा। मुझे अपने पर लज्जा हो आई। मैंने अपनी तत्कालीन परिस्थितियों में से अच्छाइयों को खोजने तथा सितारों को ही देखने का निश्चय किया।

मैंने वहाँ के निवासियों से मित्रता की। उसकी बड़ी विचित्र प्रतिक्रिया हुई। मैं उनके बरतन बनाने और बुनाई के काम में रुचि लेने लगी। इसके फलस्वरूप वे मुझे अपनी कला के उत्कृष्ट एवं प्रिय नमूने भेंट स्वरूप देने लगे। साधारणतया वे किसी भी अन्य पर्यटक को वे नमूने नहीं बेचते थे। मैं वहाँ के वृक्षों की मोहक आकृतियों और वहाँ के प्रेयरी कुत्तों का अध्ययन करती। मैं रेगिस्तान के डूबते हुए सूरज को देखती और उन सीपियों की खोज करती, जो वर्षों पूर्व वहाँ पर लहराते हुए सागर की निधि थीं।

यह विचित्र परिवर्तन मुझमें कैसे हुआ। वही मोजाव रेगिस्तान था और वही वहाँ के निवासी। कुछ भी नहीं बदला था। पर मैं बदल गई थी। मेरा मन बदल गया था। मैंने अपने भयानक अनुभवों को जीवन के अत्यंत रोचक और रोमांचकारी अनुभवों में बदल लिया था। मैं अपने द्वारा खोजे गए इस नये संसार में उत्साहित रहने लगी। मेरे मानस

में हलचल इतनी तीव्र हो उठी कि उस आवेग में मैंने एक उपन्यास लिख डाला, जो बाद में 'ब्राइट रैम्पाट्र्स' के नाम से प्रकाशित हुआ। इस प्रकार मैंने स्वनिर्मित कारागृह के बाहर झाँककर सितारों को निहारा।''

थेलमा थोम्पसन ने वही एक प्राचीन सत्य खोज निकाला जिसे ईसा के पाँच सौ वर्ष पूर्व एक यूनानी दार्शनिक ने बताया था। उसका कहना था, ''उत्कृष्ट वस्तुएँ दुर्लभ होती हैं।''

इसी सत्य को हैरी इमरसन फास्डिक ने बीसवीं सदी में फिर दुहराया था। उसने कहा कि, ''अधिकांशतया सुख सिद्धि सापेक्ष होता है। यह सिद्धि की भावना से उत्पन्न होता है और इसे प्राप्त करने के लिए नीबू के खटास को मीठे शर्बत में बदलना पड़ता है।''

एक बार मैं फ्लोरिडा के एक सुखी किसान ने मिला, जिसने जीवन के खटास को मिठास में बदल दिया था। पहले पहल तो वह अपने फार्म से बहुत ही निराश हुआ। जमीन इतनी खराब थी कि न तो वह उस पर फल उगा सकता था और न सूअर पाल सकता था। वहाँ झाड़ियों और साँपों के सिवाय और कुछ नहीं था। तब उसे एक युक्ति सूझी। उसने इस अभिशाप को वरदान में बदलने का निश्चय किया। उन साँपों से उसने अधिक-से-अधिक लाभ उठने का निश्चय किया। आश्चर्य की बात तो यही थी कि उसने साँपों के मांस को डिब्बों में भरना शुरू किया। कुछ वर्ष पूर्व जब मैं उसे मिलने गया तो वहाँ उसके फार्म पर आए हुए कई पर्यटकों को मैंने देखा। बढ़ते-बढ़ते वहाँ उनकी संख्या बीस हजार प्रतिवर्ष हो गई थी। उसका व्यवसाय जोरों पर था। मैंने देखा कि साँपों का विष वहाँ से दवाइयाँ बनाने के लिए जहाजों द्वारा प्रयोगशालाओं में भेजा जाता था। मैंने यह भी देखा कि साँपों की खाल स्त्रियों के जूते तथा हैंडबैग बनाने के लिए ऊँचे दामों पर बिकती थी। मैंने देखा कि साँप का मांस दुनिया के सभी भागों के ग्राहकों के लिए भेजा जाता था। मैंने वहाँ एक पोस्टकार्ड खरीदा और वहाँ के स्थानीय डाकघर 'रेटल्सस्नेक, फ्लोरिडा' द्वारा डाक में भिजवा दिया। उस व्यक्ति के सम्मान में इस डाकघर का नामकरण हुआ था। उस व्यक्ति ने विषैले नीबू को मीठे शर्बत में बदल दिया था।

मैंने कई बार अमेरिका के विभिन्न प्रांतों की यात्रा की है और मुझे कई ऐसे व्यक्तियों से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है जिनमें घाटे को लाभ में बदलने की अपूर्व शक्ति है।

'ट्वेल्व अगेंस्ट दी गॉड्स' पुस्तक के लेखक स्वर्गीय विलियम बॉलिथो का कथन है कि ''जीवन में लाभ को महत्त्व देना कोई विशेषता की बात नहीं। वह तो मूर्ख व्यक्ति भी आसानी से कर सकता है। वास्तव में महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि अपनी हानि से लाभ उठाया जाए, क्योंकि उसमें बुद्धि की आवश्यकता होती है और यहीं पर मूर्ख और बुद्धिमान मनुष्य में अंतर मालूम हो जाता है।

मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ जिसने अपनी दोनों टाँगें खो दी थीं फिर भी उसने अपनी उस हानि को लाभ में बदल लिया था। वह व्यक्ति है बेन फोर्टसन। मैं उसे जॉर्जिया अंतर्गत अटलांटा में एक होटल के एलिवेटर में मिला था। जैस ही मैने एलिवेटर में प्रवेश किया, उसके कोने में एक पहियेवाली कुर्सी में बैठे हुए टूटी टाँगोंवाले उस व्यक्ति को मैंने प्रसन्न मुद्रा में देखा। जब एलीवेटर उसकी मंजिल पर रुका तो उसने बड़े ही प्रसन्न भाव से मुझे एक तरफ हो जाने की प्रार्थना की ताकि उसको कुर्सी निकालने में आसानी रहे। असुविधा के लिए उसने मुझसे क्षमा भी माँगी। उस समय उसके चेहरे पर प्रसन्नता की उज्ज्वल रेखाएँ खिंची हुई थीं।

जब ऐलिवेटर छोड़कर मैं अपने कमरे में गया तो उस प्रसन्नचित्त विकलाँग के बारे में सोचता रहा। मैंने उसकी फिर से खोज की और उसे अपने जीवन की कहानी सुनाने के लिए कहा।

उसने मुस्कराते हुए कहा, ''सन् 1929 की बात है। मैं अपने बाग में लगाई हुई फलियों के लिए खूँटे काटने के लिए जंगल में गया हुआ था। उन खूँटों को काटकर मैंने उन्हें अपनी फोर्ड गाड़ी में भरा और घर के लिए रवाना

हुआ। यकायक एक खूँटा कार के नीचे फिसल पड़ा और जबकि मैं एक सँकरे मोड़ पर था, वह गाड़ी के पहियों में उलझ गया। गाड़ी एक पेड़ से टकरा गई और मैं एक पेड़ के तने से जा टकराया। मेरी रीढ़ की हड्डी में बहुत चोट आई और मेरे पाँव को लकवा मार गया। उस समय मैं चौबीस वर्ष का था और तब से मैं एक पाँव भी नहीं चल पाया।''

मुझे उसकी कहानी सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ। चौबीस वर्ष की आयु और यह सजा! मैंने पूछा, ''आखिर तुमने इतनी हिम्मत से अपने दुर्भाग्य का सामना कैसे किया?''

उसने उत्तर दिया, ''पहले पहल तो मैं निराश हो गया, बिलबिलाया, विद्रोह किया और अपने भाग्य पर क्रुद्ध हुआ; किंतु जैसे-जैसे वर्ष बीतते गये, मुझे विदित हुआ कि इस प्रकार के विद्रोह से केवल दु:ख ही होता है। अंततः मैंने महसूस किया कि जब दूसरे व्यक्ति मुझ पर कृपा रखते हैं और मेरे साथ शिष्टाचार बरतते हैं तो मुझे भी चाहिए कि उनके साथ वैसा ही व्यवहार करूँ और क्रुद्ध न होऊँ।''

जब मैंने उससे फिर पूछा कि आज भी तुम उस दुर्घटना को भारी दुर्भाग्य समझते हो तो उसने तपाक से उत्तर दिया, ''नहीं, मुझे प्रसन्नता है कि वह दुर्घटना हुई क्योंकि अपने क्रोध और धक्के से सँभलने के बाद में एक और ही दुनिया में रहने लगा। मैंने पढ़ना शुरू किया और अच्छे साहित्य के लिए अपनी रुचि का विकास किया। चौदह वर्षों में मैंने चौदह सौ पुस्तकें पढ़ डालीं। उन पुस्तकों ने मेरे लिए नवीन सृष्टि का उद्घाटन किया तथा आशा से अधिक मेरे जीवन को सुखी बना दिया। मैं मधुर संगीत में आनंद लेने लगा और आज तो हालत यह है कि तान और लय मुझको रोमांचित कर देते हें, जबकि पहले तान और लय को सुनकर में ऊब जाया करता था। सबसे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन मुझमें यह हुआ कि मुझे सोचने के लिए समय मिलने लगा। जीवन में पहली बार मैं संसार तथा उसके वास्तविक मूल्यों को समझने लगा। आज मैं महसूस करता हूँ कि पहले जिन वस्तुओं के लिए मैं प्रयत्नशील रहता था, वे निकम्मी थीं।

अध्ययन के कारण मैं राजनीति में रुचि रखने लगा। जनता के प्रश्नों का अध्ययन करता और अपनी पहियोंवाली कुर्सी पर बैठे-बैठे भाषण देता। मैं लोगों को समझने लगा और लोग मुझको।''

वही बेन फॉर्टसन जोकि आज भी पहियों वाली कुर्सी में घूमता-फिरता है, जॉर्जिया की प्रांतीय सरकार का 'सेक्रेटरी ऑफ स्टेट्स' है।

गत पैंतीस वर्षों से मैं न्यूयॉर्क शहर में प्रौढ़ शिक्षा की कक्षाओं को चला रहा हूँ और मैंने मालूम किया है कि अनेक प्रौढ़ इसलिए दु:खी हैं कि वे कभी कॉलेज में नहीं पढ़ सके। उनके विचार से कॉलेज में नहीं पढ़ना जीवन में एक बहुत बड़ी रुकावट है। यद्यपि मैं जानता हूँ कि उनकी यह धारणा सर्वथा सत्य नही हैं, क्योंकि मैं हजारों ऐसे सफल व्यक्तियों को जानता हूँ जो हाईस्कूल से आगे भी नहीं पढ़े। इसलिए उन विद्यार्थियों को मैं अपने परिचित एक ऐसे आदमी की कहानी सुनाता हूँ जिसने 'ग्रेड स्कूल' की शिक्षा भी पूरी नहीं की थी। दारुण निर्धनता में उसका पोषण हुआ था। उसके पिता की मृत्यु के समय उसके कफन के पैसे भी मित्रों ने जुटाए थे। उसके पिता की मृत्यु के बाद उसकी माँ छतरियों के कारखाने में दिन में दस घंटों तक काम करती थी और घर आने पर भी कुछ काम अपने साथ ले आती। रात के ग्यारह बजे तक वह काम किया करती।

उक्त वातावरण में पोषित वह लड़का एक क्लब द्वारा संगठित युवक-नाट्य मंडली में भाग लेता। अभिनय करने में उसे इतना अधिक आनंद आता था कि उसने पब्लिक स्पीकिंग का पेशा अख्तियार करने का निश्चय किया। उसके सहारे उसने राजनीति में प्रवेश किया और तीस वर्ष की अवस्था में न्यूयॉर्क राज्य की विधानसभा का सदस्य बन गया। किंतु वह इतनी बड़ी जिम्मेदारी के लिए तैयार नहीं था। वस्तुतः उसने मुझे स्पष्ट रूप से कह दिया था कि

विधानसभा के कार्य के बारे में मैं कुछ नहीं जानता। वह लंबे-लंबे कठिन विधेयकों को पढ़ता, जिनके लिए उसे मत देना पड़ता था, पर उसके पल्ले कुछ नहीं पड़ता। वह चिंतित एवं किंकर्तव्यविमूढ़ रहता था। तब उसे जंगल संबंधी मामलों पर विचार करने वाली एक परिषद् का सदस्य बना दिया गया। जंगल में उसने पहले कभी पैर भी नहीं रखा था। जब उसे राज्य बैंक आयोग का सदस्य बनाया गया तब भी वह चिंचित और विस्मित रहने लगा क्योंकि तब तक उसने कभी बैंक में अपना खाता भी नहीं खोला था। उसने मुझे बताया कि वह इतना निरुत्साही हो गया था कि यदि उसे अपनी माँ के सामने अपनी असफलता स्वीकार करने में लज्जा नहीं आती, तो वह कभी का विधानसभा से त्यागपत्र दे देता। अपने इस नैराष्य में उसने दिन में सोलह घंटों तक अध्ययन करने का निश्चय किया और अपने अज्ञान के नीबू को ज्ञान के शर्बत में बदल डाला। अपने उन प्रयत्नों द्वारा वह एक सफल राजनीतिज्ञ और राष्ट्रीय नेता बन गया। उसने अपने आप को इतना महत्त्वपूर्ण बना लिया कि 'न्यूयॉर्क टाइम्स' ने उसे 'न्यूयॉर्क के लोकप्रिय नागरिक' के नाम से प्रसिद्ध कर दिया।

मैं अलस्मिथ की बात बता रहा हूँ। अपने राजनीतिक स्वाध्याय के दस वर्ष पश्चात् न्यूयॉर्क राज्य के राजनीतिक मामलों की जानकारी रखने वाला वह एक धुरंधर विद्वान बन गया था। लगातार चार-चार वह न्यूयॉर्क के गर्वनर के पद के लिए चुना गया। यह सम्मान अब तक अन्य किसी भी व्यक्ति को नहीं मिला है। 1928 में अमेरिका के प्रेसीडेंट पद के लिए डेमोक्रेटिक पार्टी की ओर से वह नामजद किया गया और छह महान विश्वविद्यालयों ने, जिनमें कोलंबिया और हॉवर्ड भी सम्मिलित हैं, उस व्यक्ति को जो 'ग्रेड स्कूल'' से आगे नहीं पढ़ा था, ऑनरेरी डिग्रियाँ प्रदान कीं।

अलस्मिथ ने मुझे बताया कि अपने घाटे को लाभ में बदलने के लिए यदि उसने दिन में सोलह घंटों तक काम नहीं किया होता तो इतनी सफलता उसे कभी प्राप्त नहीं होती।

नित्से के फार्मूले के अनुसार, महान व्यक्तियों को न केवल कठिनाइयाँ बर्दाश्त ही करनी पड़ती है बल्कि उनसे प्यार भी करना पड़ता है।

ज्यों-ज्यों मैं सफल व्यक्तियों के आचरण का अध्ययन करता जाता हूँ, त्यों-त्यों मेरा यह विश्वास दृढ़ होता जाता है कि इनमें से अधिकांश वे व्यक्ति थे जिन्हें बाधाओं और रुकावटों ने महान प्रयत्नों और महान परिणामों की ओर प्रोत्साहित किया। जैसा कि विलियम जेम्स ने कहा है, ''हमारी दुर्बलताएँ अप्रत्याशित रूप से हमारी सहायक बन जाती हैं।''

मिल्टन इतना सुंदर काव्य इसलिए लिख सका क्योंकि वह अंधा था। बिथोविन उत्कृष्ट संगीत रचना इसलिए कर सका क्योंकि वह बहरा था। हेलन केलर का चरित्र प्रखर इसलिए बन सका क्योंकि वह अंधी और बहरी थी।

यदि चायकोवस्की के जीवन में नैराश्य नहीं होता, यदि दु:खद दांपत्य जीवन ने उसे आत्महत्या के निकट न खदेड़ा होता, यदि उसका अपना जीवन इतना दयनीय नहीं होता, तो शायद वह अपनी अमर कृति 'सिम्फनि पैथेटिक' की रचना नहीं कर पाता। यदि दोस्तोवस्की और टॉलस्टॉय ने दु:खपूर्ण जीवन नहीं भोगा होता तो संभवत: वे अपने-अमर उपन्यासों की रचना नहीं कर पाते।

पृथ्वी पर प्राणियों के जीवन संबंधी धारणाओं को बदलने वाले एक प्राणी शास्त्री का कथन है कि ''यदि मैं इतना दुर्बल और असमर्थ न होता तो जितना काम मैंने किया है, उतना कभी भी नहीं कर पाता।'' यह उक्ति चार्ल्स डार्विन की है। दुर्बलता ने उसकी अप्रत्याशित सहायता की थी।

जिस दिन इंग्लैंड में डार्विन का जन्म हुआ, उसी दिन केन्टकी के एक जंगल में लकड़ी की एक कुटिया में एक दूसरे शिशु का जन्म हुआ था। वह शिशु लिंकन था। दुर्बलताओं ने उसकी भी अप्रत्याशित सहायता की। यदि

अब्राहम लिंकन अभिजात कुछ में उत्पन्न होता, हॉवर्ड विश्वविद्यालय से कानून पास करता और सुखी दांपत्य जीवन बिताता तो उसके हृदय की गहराइयों में से गेटिसबर्ग पर कह गये वे अमर वाक्य नहीं निकलते, और न वह द्वितीय उद्घाटन समारोह के अवसर पर उन काव्यमय शब्दों की सृष्टि कर पाता जो अब तक के मानव शासकों के हृदय से निकले हुए उद्‌गारों में सबसे मधुर, सबसे महान और सबसे कोमल हैं। उसने कहा था कि ''उदारता सबके लिए रखो पर घृणा किसी के लिए नहीं।''

हैरी इमरसन फॉस्डिक ने अपनी पुस्तक 'द पावर टू सी इट थ्रू' में एक स्केंडिनेवियन कहावत के बारे में लिखा है। जिसमें कहा गया है कि 'उत्तरी हवाओं ने ही वीरो की सृष्टि की है।' क्या आपने कभी भी देखा है कि कठिनाइयों के अभाव में किसी ने सुखी एवं उत्तम जीवन का निर्माण किया है? जो व्यक्ति अपने आपको कोसते रहे हैं वे तो चाहे मखमल की गद्दियों पर ही क्यों न बैठें, वही करते रहेंगे। किंतु इतिहास में सदैव यह देखा गया है कि मनुष्य के सुख और चरित्र का निर्माण अच्छी-बुरी सभी परिस्थितियों में होता है। पर यह तभी संभव है जब वह अपनी व्यक्तिगत कठिनाइयों को झेलने का उत्तरदायित्व सँभाल लेता है।

मान लीजिए आप अपने जीवन की खटास को मिठास में बदलने में सर्वथा निरुत्साही एवं निराश हो जाएँ। ऐसी स्थिति में आपको इन दो कारणों को लेकर अपने प्रयत्नों को जारी रखना चाहिए। एक तो यह कि संभव है आप सफल हो जाएँ। दूसरा यह कि यदि हम सफल न भी हों तो भी घाटे को लाभ में बदलने का यह प्रयत्न हमें पीछे देखने के बजाय आगे देखना सिखाएगा। यह प्रयत्न हमारे निषेधात्मक विचारों को विधेयात्मक बना देगा, यह हममें रचनात्मक शक्ति की उद्‌भावना करेगा तथा हमें इतना व्यस्त रखेगा कि विगत पर दु:खी होने के लिए हमें समय ही नहीं मिलेगा।

एक बार संसार प्रसिद्ध वॉयलिन वादक ऑलेबुल पेरिस में अपना कार्यक्रम दे रहा था। यकाएक वॉयलिन का एक तार टूट गया, किंतु ऑलेबुल ने केवल तीन तारों पर ही अपनी धुन को सफलता से पूरा कर दिया।

हैरी इमरसन फॉस्डिक के कथनानुसार, जीवन की विशेषता इसी में है कि यदि एक तार टूट भी जाए तो तीन तारों पर ही अपना काम चला लिया जाए। इसी में जीवन की सफलता है।

यदि मेरा बस चलता तो मैं विलियम बॉलिथो के इन अमर शब्दों को काँसे में खुदवाकर देश के प्रत्येक स्कूल में रखवा देता - ''अपने लाभ को लेकर डींग हाँकना जीवन में महत्त्व नहीं रखता। यह तो एक मूर्ख भी कर सकता है। वस्तुत: घाटे को लाभ में बदलने में ही मनुष्य की अपनी विशेषता है। ऐसा करने के लिए बुद्धि चाहिए और यहीं पर मूर्ख और बुद्धिमान में अंतर जाना जा सकता है।''

इसलिए मन में सुख शांति रखने के लिए इस नियम का पालन कीजिए - 'अपने जीवन के खटास को मिठास में बदलने का प्रयास कीजिए।'

❑

चिंता को जीतना कितना आसान

मेरा लालन-पालन मिसूरी में अपने फार्म पर हुआ था। उन दिनों अन्य किसानों की तरह ही मेरे माता-पिता को भी बड़े परिश्रम से जीवन निर्वाह करना पड़ता था। मेरी माँ गाँव के स्कूल में अध्यापिका थी और मेरे पिता प्रति माह बारह डॉलर की आय पर खेत पर मजदूरी करते थे। माँ मेरे कपड़े सीती थी और उनके धोने के लिए साबुन भी वही तैयार करती थी। नकद रुपये हमारे पास नहीं के बराबर थे। साल में जब हम एक बार सूअर बेचते थे तब कुछ रोकड़ के दर्शन हो पाते थे। आटा, शक्कर और कॉफी के बदले में हम मोदी की दुकान पर मक्खन, अंडे आदि दे आते थे। मैं बारह वर्ष का हुआ तब अपना साल भर का खर्च चलाने के लिए मेरे पास पंद्रह सेंट भी नहीं थे। चार जुलाई के समारोह का वह दिन आज भी मुझे याद है जब पिताजी ने मुझे इच्छानुसार खर्च करने के लिए दस सेंट दिये थे और मुझे ऐसा लगा जैसे कोई खजाना मिल गया हो।

मुझे रोज एक मील चलकर स्कूल जाना पड़ता था। मुझे घनी बर्फ में से गुजरना पड़ता था, तापमान शून्य से भी 28 डिग्री कम होता था। चौदह वर्ष की अवस्था तक तो मुझे रबर के जूते पहनने का सौभागय भी प्राप्त नहीं हुआ था। जाड़े के लंबे और ठडे दिनों में ठंड से मेरे पैर सुन्न हो जाते थे। बचपन में मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि सर्दी में किसी के पाँव सूखे और गरम रह सकते हैं।

यद्यपि मेरे माता-पिता दिन में सोलह घंटे गुलामी करते, तथापि हम सदा कर्ज से दबे रहते और अपने दुर्भाग्य के कारण दु:ख उठाते। बचपन के दिनों की एक घटना मुझे याद है, जब पास की नदी की बाढ़ का पानी हमारे धान और घास के खेतों में फैल गया था और फसल नष्ट हो गई थी। सात वर्षों में छह वर्ष हमारी फसल बाढ़ के कराल जबड़ों में समा जाती। हर साल हमारे सुअरों को हैजा हो जाता और हमें उन्हें जला देना पड़ता। आज भी मैं आँखें बंद कर सुअरों के जलने की तेज दुर्गंध की कल्पना कर सकता हूँ।

एक साल बाढ़ नहीं आई थी। हमने धान की खेती की थी, कुछ पशु भी खरीदे और उन्हें खिला-पिलाकर मोटा किया। यद्यपि बाढ़ नहीं आई, तथापि हमारी स्थिति से कोई परिवर्तन नहीं आया। क्योंकि शिकागो के बाजार में मोटे पशुओं के मूल्य में गिरावट आ गई थी और हमें उन पशुओं को पालने और मोटा करने में जो खर्च हुआ, उससे केवल तीस डॉलर ही अधिक मिले। ये तीस डॉलर हमारे साल भर के परिश्रम की कमाई थी।

कठिन परिश्रम के बावजूद हमारा रुपया डूब गया। मुझे आज भी उन लंबे कानों वाले खच्चरों के नन्हे-नन्हे बच्चों का स्मरण है, जिन्हें मेरे पिताजी ने खरीदा था। तीन वर्ष तक बराबर उनको खिलाया-पिलाया और उन्हें सिखाने के लिए आदमी रखे। उसके बाद उन्हें जहाज में टेनिसी के अंतर्गत मैमफिस भेज दिया। उनको बेचने में हमें तीन वर्ष पूर्व उनको खरीदने में जो मूल्य देना पड़ा था, उससे भी कम प्राप्त हुआ। तीन वर्ष के इस जी तोड़ परिश्रम के बाद भी हम कौड़ी-कौड़ी के मोहताज रहे और भारी ऋण में घिर गये। हमें अपना खेत गिरवी रख देना पड़ा। भरसक प्रयत्न करने पर भी हम रेहन की रकम का ब्याव भी नहीं चुका सके। जहाँ मेरा मकान गिरवी था उस बैंक ने मेरे पिताजी का अपमान किया। वहाँ के अधिकारी ने उन्हें गालियाँ दीं और धमकी दी कि बैंक फार्म को अपने कब्जे में कर लेगा। पिताजी की अवस्था उस समय सैंतालीस वर्ष की थी। तीस वर्ष के कठोर परिश्रम के बाद उनके पास ऋण और अपमान के सिवा कुछ भी नहीं बचा। यह अभिशाप उनके लिए असह्य हो उठा, वे दु:खी हो गये और उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। सारे दिन खेत पर परिश्रम करके भी उन्हें भोजन करने की इच्छा नहीं होती थी। भूख बढ़ाने के लिए उन्हें दवा लेनी पड़ती थी। उनका शरीर सूख गया था। डॉक्टर ने मेरी माँ को बता दिया था कि छह महीनों के अंदर-अंदर उनकी मृत्यु हो जाएगी। पिताजी इतने दु:खी हो गये थे कि और अधिक जीना नहीं चाहते थे।

जब कभी भी वे घोड़ों को दाना देने अथवा गायों को दुहने के लिए जाते और निश्चित समय तक नहीं लौटते तो माँ उन्हें देखने जाती। वह डरती थी कि कहीं उनकी लाश किसी रस्सी से लटकी हुई न मिले। एक दिन जब वे मैरीविले से, जहाँ कि बैंकर ने उन्हें मकान जब्त कर लेने की धमकी दी थी, लौट रहे थे। उन्होंने अपने घोड़े को नदी के एक पुल के पास खड़ा कर दिया और गाड़ी से उतरकर बहुत समय तक नीचे पानी की ओर देखते रहे और संघर्ष करते रहे कि पानी में कूदकर दु:ख का अंत करें या नहीं।

वर्षों बाद मेरे पिताजी ने मुझे बताया कि उस दिन उनके पानी में न कूदने का एकमात्र कारण मेरी माँ की अगाध श्रद्धा और भक्तिपूर्ण विश्वास था। उसका विश्वास था कि यदि हम ईश्वर की आज्ञाओं और उसके नियमों का निरंतर पालन करते रहें तो एक दिन सबकुछ ठीक हो जाएगा। माँ का कहना बिलकुल ठीक था। क्योंकि अंत में सचमुच ही सबकुछ ठीक हो गया। इसके बाद पिताजी 42 वर्ष तक और जिये। 1941 में 89 वर्ष की अवस्था में उनका देहांत हुआ था।

संघर्ष और दिल दहलाने वाले उन वर्षों में मेरी माँ ने कभी चिंता नहीं की। वह अपने सारे दु:खों को भगवान के चरणों में अर्पित कर देती। रात को सोने के पहले वह नियमपूर्वक बाइबिल का एक अध्याय पढ़ती। मेरे माता-पिता प्राय: ईसा के इन सांत्वना भरे शब्दों को पढ़ा करते थे, ''भगवान के घर में रहने के लिए बहुत जगह है। मैं वहाँ तुम्हारे लिए स्थान बनाने जा रहा हूँ। जहाँ मैं, वहीं तुम भी रहोगे।'' हम सभी मिसूरी के अपने मकान में घुटने टेक कर ईश्वर से प्यार और संरक्षण की याचना करते थे।

विलियम जेम्स हॉवर्ड ने, जो दर्शन के प्राध्यापक थे, एक बार कहा था, ''धार्मिक श्रद्धा चिंता रोकने की रामबाण दवा है।''

इस सत्य को खोजने के लिए आपको हॉवर्ड जाने की आवश्यकता नहीं। मेरी माँ ने इसे मिसूरी के फार्म पर ही खोज लिया था। मेरी माँ की उल्लासमय, प्रखर एवं सफल प्रवत्ति को बाढ़, ऋण तथा दु:ख कभी नहीं दबा सके। आज भी वह काम करती जाती है और गाती जाती है, ''भगवान से प्राप्त वह पावन शांति, कितनी अद्भुत है। मेरी तो यही कामना है कि दीन-बंधु के प्यार की वे लहराती मौजें मेरे अंतर पर सदा लहराया करें।''

मेरी माँ चाहती थी कि मैं अपने को धर्म के लिए समर्पित कर दूँ। मैंने विदेश में पादरी बनने पर गंभीर रूप से विचार किया। फिर कॉलेज में पढ़ने चला गया। पर धीरे-धीरे ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, मुझमें परिवर्तन आता गया। मैंने जीवशास्त्र, दर्शनशास्त्र और विज्ञान का अध्ययन किया। मैंने अन्य धर्मों का भी तुलनात्मक अध्ययन किया। मैंने वे पुस्तकें भी पढ़ीं जिनमें बताया गया था कि बाइबिल की रचना कैसे की गई। उन पुस्तकों की स्थापनाओं को लेकर मुझमें कई प्रश्न उठने लगे। गाँवों के धार्मिक प्रवचन करनेवालों की सैद्धांतिकता पर मैं शंका करने लगा। मैं एक तरह की खींचातानी में पड़ गया। वाल्ट व्हिटमेन की तरह मुझको भी जिज्ञासा एवं अप्रत्याशित प्रश्नों ने मथ डाला। मेरी समझ में नहीं आता था कि किस पर विश्वास करूँ। मुझे जीवन का कोई उद्देश्य नजर नहीं आता था। मैंने प्रार्थना करना छोड़ दिया और वस्तुवादी बन गया। मुझे विश्वास हो गया कि जीवन अनिश्चित और निस्सार है। मैं मानने लगा कि मानव जीवन में कोई ईश्वरीय हेतु नहीं है और यदि कोई है तो वही जो हजारों वर्ष पूर्व इस पृथ्वी पर भटकने वाले लंबे-लंबे सर्पों का था। मुझे लगा कि एक-न-एक दिन उन सर्पों की तरह मानवता भी नष्ट हो जाएगी। विज्ञान में मैंने पढ़ा था कि सूरज धीरे-धीर ठंडा होता जा रहा है और यदि उसका तापमान दस प्रतिशत भी गिरा तो इस भूमंडल पर कोई भी जीव न बच सकेगा। यह विचार कि मंगलकारी भगवान ने अपनी इच्छा से इस संसार का निर्माण किया है, असत्य लगने लगा। मुझे विश्वास हो गया कि इस प्राणीहीन अंधकारमय शीतल अंतरिक्ष में चक्कर काटने वाले असंख्य ग्रह या तो किसी अंधी शक्ति से निर्मित हुए हैं या फिर

उनका निर्माण किसी ने भी नहीं किया, वे काल और अंतरिक्ष की भाँति ही शाश्वत हैं।

तो क्या अब मैंने उन सभी गुत्थियों का उत्तर पा लिया है? नहीं, आज तक कोई भी विश्व-निर्माण के रहस्य का उद्घाटन नहीं कर सका और न कोई जीवन के रहस्य को ही समझ सका। हम रहस्यों से घिरे हुए हैं। हमारे शरीर का परिचालन भी एक रहस्य ही है। ऐसा ही रहस्य आपके घर की बिजली के बारे में भी है। ऐसा ही रहस्य दीवार की दरार में खिलने वाले फूल का है। आपकी खिड़की के बाहर उगी घास भी रहस्यमय है। घास हरी क्यों होती है, इस बात का पता लगाने के लिए जनरल मोटर्स रिसर्च लेबोरेटरी का प्रतिभाशाली अधिकारी चार्ल्स एफ. केटरिंग, एल्टियोक कॉलेज को प्रतिवर्ष अपनी गाँठ से तीस हजार डॉलर देता है कि यदि हमें इस बात का पता चल जाए कि घास - सूरज की रोशनी, पानी तथा कार्बनडाइऑक्साइड को खाद्य और शक्कर के रूप में किस प्रकार परिवर्तित करती है, तो हम सारी सभ्यता को बदल लेने में समर्थ हो जाएँ।

यही नहीं, आपकी मोटर के इंजिन का संचालन भी एक गूढ रहस्य ही है। इस बात का पता लगाने के लिए कि सिलिंडर के अंदर की चिनगारी मोटर को दौड़ाने का काम कैसे और क्यों करती है। जनरल मोटर्स लेबोरेट्रीज ने कई वर्ष और कई लाख डॉलर खर्च किये हैं, किंतु आज भी इस रहस्य का पता नहीं चल सका।

हम अपने शरीर, विद्युत, गैस और इंजिन के रहस्यों को नहीं जानते, फिर भी इसका अर्थ यह नहीं कि हम उन वस्तुओं का उपभोग करने एवं उनका आनंद उठाने से वंचित रखे जाएँ। मैं प्रार्थना एवं धर्म के रहस्यों को नहीं समझता फिर भी धर्म द्वारा प्रदत्त संपन्न और सुखद जीवन का उपभोग करने में मुझे किसी तरह की बाधा का अनुभव नहीं होता। अंततोगत्वा मुझे संतायन के इस कथन में बुद्धिमता का ज्ञान होता है कि ''मनुष्य की सृष्टि जीने के लिए हुई है, जीवन को समझने के लिए नहीं।''

मैं कुछ पीछे की बात कह गया। हाँ तो, मैं कहने जा रहा था कि धर्म को लेकर मैं बहक गया था। किंतु ऐसा कहना शायद उचित नहीं होगा। मैं तो धर्म की एक नवीन व्याख्या को लेकर आगे बढ़ा हूँ। मुझे चर्च को विभाजित करनेवाले विभिन्न संप्रदायों में कोई श्रद्धा नहीं किंतु धर्म मेरे लिए जो कुछ करता है उसमें मेरी वैसी ही अगाध श्रद्धा है जैसी बिजली, पौष्टिक भोजन तथा पानी के उपभोग में है। वे सब पूर्णतया सुखद जीवन जीने में मेरी सहायता करते हैं किंतु इससे भी ज्यादा काम हमारा धर्म हमारे लिए करता है। यह मुझे आध्यात्मिक मूल्यों का ज्ञान कराता है और विलियम जेम्स के शब्दों में एक नवीन उत्साह, लंबा, संपन्न एवं संतोषप्रद जीवन प्रदान करता है। यह मुझे श्रद्धा, आशा एवं उत्साह प्रदान करता है। यह आकुलता चिंता, भय एवं तनाव को दूर कर देता है। जीवन में उद्देश्य एवं दिशा का ज्ञान कराता है। आनंद में अपूर्व वृद्धि करता है। पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान करता है और जीवन के मरुस्थल में शांति का मरुद्यान स्थापित करने में हमारी सहायता करता है। तीन सौ पचास वर्ष पूर्व फ्रांसिस बेकन ने ठीक ही कहा था कि ''छिछला दर्शन-ज्ञान मानव मस्तिष्क को नास्तिकता की ओर झुकाता है और दर्शनज्ञान की गहनता मानव मस्तिष्क को धर्म के रंग में रँग देती है।

आज भी मुझे वे दिन याद हैं, जब लोग विज्ञान एवं धर्म के बीच में संघर्ष की बातें करते थे किंतु अब वैसी बातें नहीं उठतीं। हमारा आधुनिक मनोविज्ञान वही सिखाता है जो ईसा ने सिखाया था। मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि प्रार्थना एवं दृढ़ धार्मिक निष्ठा द्वारा चिंता, आकुलता, बोझ, भय और बहुत सी बीमारियाँ दूर की जा सकती हैं। शीर्ष मनोवैज्ञानिक डॉ. ए.ए. ब्रिल का कहना है कि जो व्यक्ति सच्चे रूप में धार्मिक निष्ठा रखता है, उसे कभी स्नायु रोग नहीं होता।

यदि धर्म में कोई सच्चाई नहीं तो जीवन भी निरर्थक है, भ्रांति है।

कुछ वर्ष हुए, मैंने हेनरी फोर्ड से उनकी मृत्यु के कुछ ही वर्ष पूर्व भेंट की थी। उनसे मिलने के पूर्व मेरा ख्याल

था कि वर्षों से संसार के एक विशाल व्यवसाय का निर्माण एवं संचालन करते रहने के कारण उस व्यक्ति पर तनाव के कुछ लक्षण दिखाई देंगे। किंतु मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि अठत्तर वर्ष की अवस्था में भी वे स्वस्थ, शांत एवं सौम्य दिखाई दिये। जब मैंने उनसे पूछा कि 'क्या आप भी कभी चिंता के फंदे में पड़े है?' तो उन्होंने कहा, 'नहीं, क्योंकि मेरा विश्वास है कि भगवान ही मेरे व्यवसाय की व्यवस्था करते हैं और उन्हें मेरी सलाह की आवश्यकता नहीं है। मेरा विश्वास है कि भगवान की देखरेख में अंतत: सभी कार्य उत्तम रूप से संपन्न होंगे, फिर चिंता क्यों की जाए।'

आज तो मनोवैज्ञानिक भी आधुनिक धर्म-प्रचारक बन गये हैं। आज वे हमें आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने के लिए कहते हैं। किंतु इस उद्देश्य से नहीं कि हम परलोक में नर्क की यातना से बच जाएँ, बल्कि इसलिए कि उदर व्रण, हृदय रोग, स्नायु विघटन एवं विक्षिप्तता आदि इहलौकिक यातनाओं से छुटकारा पा सकें। आजकल के चिकित्सक एवं मनोवैज्ञानिक क्या सिखाते हैं, यह जानने के लिए 'रिटर्न टू रिलिजन' नामक पुस्तक पढ़िये जो डॉक्टर हेनरी सी. लिंक द्वारा लिखी गई है। संभव है, आपके पुस्तकालय में ही यह पुस्तक मिल जाए।

ईसाई-धर्म प्रेरणा एवं स्वास्थ्य प्रदान करता है। ईसा का कथन है, ''मैं जीवन और ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए इस भूतल पर अवतरित हुआ हूँ।'' ईसा अपने युग की प्रचलित शुष्क एवं निष्प्राण धार्मिक रूढ़ियों पर आक्षेप करते थे। वे एक विद्रोही थे। उन्होंने एक नवीन धर्म का प्रचार किया था। लोगों को यह शंका हुई कि यह धर्म संसार में उथल-पुथल मचा देगा, इसलिए उन्होंने उन्हें फाँसी पर लटका दिया। ईसा का कहना था कि धर्म मनुष्य के लिए है मनुष्य धर्म के लिए नहीं। सबाथ (विश्वास का दिन) मनुष्य के लिए हो, न कि मनुष्य सबाथ के लिए। उन्होंने पाप की बात न कहकर भय की बात अधिक कही है। झूठा भय एक प्रकार का पाप ही है। यह पाप हम अपने स्वास्थ्य तथा ईसा द्वारा उपदेशित संपन्न, सुखी, परिपूर्ण एवं उत्साहपूर्ण जीवन के प्रति करते है।। इमरसन अपने को आनंद विज्ञान के प्राध्यापक मानते थे। ईसा भी इसी आनंद विज्ञान का प्रचार करते थे। वे अपने शिष्यों को आनंद से झूमने के लिए कहते थे।

ईसा के विचार से धर्म के दो पहलू मुख्य हैं - हृदय से ईश्वर की भक्ति और अपने पड़ोसी के प्रति समभाव। जो व्यक्ति इन दो बातों का पालन करता है, वह धर्म को न जानकर भी धार्मिक है। उदाहरणार्थ ओक्लाहोमा अंतर्गत टुल्सा के निवासी मेरे श्वसुर हेनरी प्राइस को ही लीजिए। वे ईसा की उक्त दोनों उक्तियों के अनुसार आचरण करते हैं और कभी भी स्वार्थ, नीचता एवं बेईमानी का काम नहीं करते। वे चर्च में नहीं जाते और अपने को नास्तिक समझते हैं। किंतु वे नास्तिक नहीं हैं। ईसाई कौन है, यह आप जॉन बेली के शब्दों में सुनिए। वॉन बेली एडिनबरा विश्वविद्यालय में धर्म-शास्त्र पढ़ाने वाले अत्यंत प्रतिभासंपन्न प्राध्यापक थे। वे कहते थे कि ''कुछ विचारों को बौद्धिक मान्यता देकर तथा कुछ नियमों से सहमति प्रकट करने मात्र से ही मनुष्य ईसाई नहीं बनता। ईसाई वह है जो एक विशेष प्रकार की स्फूर्ति से अनुप्राणित रहता है एवं अमुक प्रकार के जीवन व्यवहार को अपनाता है।''

यदि उपर्युक्त बातों को मानने वाला ईसाई कहा जा सकता है तो हेनरी प्राइस सच्चे ईसाई हैं।

आधुनिक मनोविज्ञान शास्त्र के जन्मदाता विलियम जेम्स ने अपने मित्र प्रोफेसर थॉमस डेविडसन को लिखा था, 'ज्यों-ज्यों वर्ष बीतते गए, मुझे लगा कि भगवान में निष्ठा रखे बिना जीने की मेरी क्षमता धीरे-धीरे कम हो चली है।'

पिछले परिच्छेद में मैं यह बता चुका हूँ कि जब निर्णायकों ने चिंता के विषय में लिखी गई दो सर्वश्रेष्ठ कहानियों को चुनने का प्रयास किया तो उन्हें बड़ी कठिनाई का अनुभव हुआ और अंतत: पारितोषिक को दो लेखकों में विभाजित कर देना पड़ा। प्रथम पुरस्कार के योग्य द्वितीय कहानी में एक महिला के जीवन का अविस्मरणीय अनुभव था। उस महिला ने बड़ी कठिनाई के बाद महसूस किया कि 'भगवान की कृपा के बिना जीवन का बेड़ा

पार नहीं लग सकता।'

मैं उस महिला का नाम मैरी कुशमेन रख रहा हूँ। यह उसका वास्तविक नाम नहीं है। उसके पौत्र तथा प्रपौत्र जीवित हैं। इस छपी हुई कहानी को पढ़कर संभव है, उन्हें क्लेश हो। यही कारण है कि मैं उस महिला का नाम गुप्त रख रहा हूँ। किंतु महिला का अस्तित्व यथार्थ है। कुछ महीनों पूर्व मेरी टेबल के पास कुर्सी पर बैठे-बैठे उसने मुझे अपनी कहानी सुनाई थी-

''मंदी के दिनों में मेरे पति का वेतन अठारह डॉलर प्रति सप्ताह था। कभी कभी तो अठारह डॉलर भी पूरे नहीं मिलते थे, क्योंकि जब कभी वे बीमार हो जाते, उन दिनों की तनख्वाह काट ली जाती थी और वे अकसर बीमार रहते थे। अनेक छोटी-छोटी दुर्घटनाओं के फंदे में वे फँस जाते थे। उन्हें कंठमाला और लाल बुखार हो चुका था। इन्फ्लुएंजा तो उन्हें प्राय: हो जाया करता था।

जो घर हमने बनाया था वह हमसे छूट गया। हम पर मोदी का पचास डॉलर का कर्ज था और हमें पाँच बच्चों का भरण-पोषण करना पड़ता था। मैं पड़ोसियों के कपड़े धोती, उनके कपड़ों पर इस्त्री करती। सैनिक स्टोर से सैकंड-हैंड कपउह्य+ खरीदकर उन्हें ठीक-ठाक कर अपने बच्चों को पहनाती थी। चिंता से मैं बीमार रहती। एक दिन मोदी ने, जो हमसे पचास डॉलर माँगता था, मेरे ग्यारह वर्ष के लड़के पर दुकान से पेंसिलें चुराने का दोष मढ़ दिया। लड़के ने रोते-रोते मुझे यह घटना सुनाई। मैं जानती थी कि लड़का ईमानदार और संवेदनशील है। मैं यह भी जानती थी कि दूसरे लोगों की उपस्थिति में उसका अपमान किया गया है और उसे नीचा दिखाया गया है। इस घटना ने मेरे क्लेश की रही-सही कसर और भी पूरी कर दी। इस धक्के ने मेरी कमर तोड़ दी। अब तक जितने भी संकट मैंने झेले थे, उन सबका विचार आने लगा। भविष्य निराशा से भर गया। कुछ समय तक तो मैं चिंता से लगभग पागल सी बनी रही। मैंने धुलाई की मशीन बंद कर दी। अपनी पाँच वर्ष की लड़की को लेकर मैं अपने सोने के कमरे में चली गई। कमरे की खिड़कियों और रोशनदानों में कागज और फटे कपउह्य+ ठूँसकर उन्हें बंद कर दिया। इस पर बच्ची से पूछा, ''माँ तुम यह क्या कर रही हो?'' मैंने कहा, ''कुछ नहीं बेटी, हवा का झोंका आ रहा है इसके बाद मैंने गैस के चूल्हे को भी नहीं जलाया और गैस निकालने के लिए उसे ढीला कर दिया। बच्ची ने, जो मेरे पास ही सो रही थी, आश्चर्य से कहा, ''माँ, बड़ी अजीब बात है, अभी-अभी तो हम सोकर उठे ही हैं, फिर से क्यों सो रहे हैं?'' मैंने कहा, ''कोई बात नहीं बेटी, थोड़ी झपकी और ले लें।'' मैंने अपनी आँखें मूँद लीं और आतिशदान से निकलती हुई गैस की सरसराहट सुनने लगी। मैं उसकी उस बदबू को कभी नहीं भूल सकती।

यकायक मुझे गीत सुनाई दिया। रसोईघर में लगे रेडियो को बंद करना मैं भूल गई थी। मैंने सोचा, चलने दो। गीत चलता रहा और मैंने सुना-

'ईसा हमारा कितना सच्चा मित्र है। यह हमारे सभी पाप और क्लेश सहता है। भक्ति से सबकुछ भगवान को अर्पण कर देना भी कितना पावन अधिकार है। भगवान को सबकुछ अर्पण न कर हम प्राय: अगाध शांति को खो देते हैं और व्यर्थ ही इतने दु:ख झेलते रहते हैं।'

यह भजन सुनकर मुझे विचार आया कि अकेले यह भीषण संघर्ष करने का प्रयास करके मैंने एक दु:खद भूल की है। मैंने अपना सबकुछ भगवान को समर्पित नहीं किया, यह सोचकर मैं उठ बैठी। गैस बंद कर दी और खिड़कियाँ खोल दीं। मैं सारा दिन रोती रही। मैंने सहायता के लिए प्रभु से प्रार्थना ही नहीं की, बल्कि अपनी समस्त भावनाओं एवं निष्ठा के साथ भगवान को धन्यवाद दिया कि उसने मुझे तन और मन से स्वस्थ, बलिष्ठ एवं सुंदर पाँच बच्चे दिये हैं। मैंने उस दयानिधान के समक्ष प्रतिज्ञा की कि भविष्य में कभी भी इतनी कृतघ्न नहीं होऊँगी। तब से अपनी प्रतिज्ञा को बराकर निभाती चली जा रही हूँ।

यहाँ तक कि अपना घर छोड़ देने के बाद पाँच डॉलर प्रति माह किराये पर लिए गये गाँव के एक छोटे से स्कूल के लिए बने एक घर में रहना पड़ा, तब भी मैंने प्रभु को धन्यवाद दिया कि अपने को गरम और सूखा रखने के लिए हमारे ऊपर छत तो है। यानी प्रभु को इसलिए भी धन्यवाद दिया कि परिस्थिति अधिक खराब नहीं बनी। मेरा विचार है कि उसने मेरी प्रार्थना सुन भी ली, क्योंकि कुछ ही समय बाद परिस्थितियाँ सुधरने लगीं। ज्यों-ज्यों मंदी कम होती गई, हम कुछ ज्यादा पैसा कमाने लगे। मैंने देहात के एक बड़े से क्लबों में टोपियों की रखवाली करने का काम ले लिया और शेष समय में जुराबें-मोजे बेचने का काम करने लगी। कॉलेज का खर्च चलाने के लिए मेरे एक लड़के ने एक फार्म पर नौकरी कर ली। उसे रोजाना तीस गायों को दुहना पड़ता था। आज मेरे वे ही बच्चे सयाने एवं गृहस्थ बन गये हैं। मेरे तीन पोते-पोतियाँ हैं जो बहुत सुंदर हैं। आज, जब मैं अतीत के उन दुर्भाग्यपूर्ण दिनों के बारे में सोचती हूँ, जबकि मैंने गैस को खोल दिया था, तो भगवान को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकती, क्योंकि उसने मुझे समय रहते सावधान कर दिया। यदि मेरी योजना सफल हो जाती तो जीवन का कितना ही सुख व्यर्थ ही नष्ट हो जाता। कितने ही आनेवाले अपूर्व वर्षों को सदा के लिए खो बैठती। आज जब भी मैं किसी को आत्महत्या की बात कहते सुनती हूँ तो डाँटकर उसका मुँह बंद कर देने को जी करता है। जीवन में अत्यंत धूमिल विषाद के क्षण कुछ ही समय तक रहते हैं और उनके बीत जाने पर हमारे सामने अपना मधुर एवं उज्ज्वल भविष्य नाच उठता है।''

अमेरिका में औसतन हर पैंतीस मिनट में एक-न-एक व्यक्ति तो आत्महत्या करता ही है और हर 120 मिनट में कोई-न-कोई तो पागल हो ही जाता है। यदि वे आत्महत्या करने वाले व्यक्ति आध्यात्मिकता एवं भक्ति में निहित सांत्वना एवं शांति को प्राप्त करने का प्रयत्न करें तो ऐसी दुर्घटनाएँ कभी न हों।

आधुनिक जगत् के सुप्रसिद्ध मनोरोग-चिकित्सक डॉ. कार्ल जुंग ने अपनी पुस्तक 'मॉडर्न मेन इन सर्च ऑफ ए सोल' नामक पुस्तक में लिखा है कि गत तीस वर्षों में विश्व के सभी सभ्य देशों के नागरिकों ने मुझसे उपचार कराया है और मैंने सैकड़ों का उपचार किया है, किंतु उन रोगियों में से पैंतीस वर्ष के ऊपर की अधेड़ अवस्था वाले रोगियों में से एक भी ऐसा नहीं निकला, जिसकी समस्या अंततः जीवन के प्रति आध्यात्मिक दृष्टिकोण अपनाने की न रही हो। यदि मैं यह कहूँ कि उनमें से प्रत्येक इसलिए बीमार पड़ा कि उसने उस आध्यात्मिक दृष्टिकोण को खो दिया था, जिसे विभिन्न धर्म युगों-युगों से अपने अनुयायियों को देते आए हैं तो अत्युक्ति न होगी। उन रोगियों में जो भी आध्यात्मिक दृष्टिकोण नहीं अपना सका, वह उपचार करने पर भी स्वस्थ नहीं हो सका।

यह कथन इतना महत्त्वपूर्ण है कि इसे दुहराया जाना चाहिए।

विलियम जेम्स ने भी लगभग ऐसी ही बात कही है, उनका कहना है, ''धर्म उन शक्तियों में से है जिनके सहारे मनुष्य जीता है, उस शक्ति के नितांत अभाव का अर्थ है मृत्यु।''

भारत में महात्मा बुद्‌ध के बाद महात्मा गांधी ही एक महान देता के रूप में अवतरित हुए। यदि वे प्रार्थना की जीवनदायिनी शक्ति से प्रेरणा न पाते तो टूट कर रह जाते। यह कोई मेरी अपनी मनगढंत बात नहीं। गांधीजी ने स्वयं एक जगह लिखा है कि ''प्रार्थना कि शक्ति के बिना मैं कभी का पागल हो गया होता।''

इस कथन के साक्ष्यस्वरूप हजारों व्यक्ति इस संसार में विद्यमान है। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ कि यदि मेरे पिताजी को माँ की निष्ठा एवं प्रार्थना की जीवनदायिनी शक्ति न मिलती, तो वे कभी के डूबकर आत्महत्या कर चुके होते। आज हम हजारों दु:खी आत्माओं को पागलखानों में चीखते हुए सुनते हैं। यदि उन्होंने अकेले जीवन-संघर्ष करने के बजाय आध्यात्मिक शक्ति की सहायता ली होती तो वे सहज ही अपने को उस दशा से बचा लेते।

हम भगवान का द्‌वार तभी खटखटाते हैं, जब हम दु:खी और निराश हो जाते हैं और हमारी सहनशक्ति जवाब दे

देती है; किंतु उस निराशावस्था की प्रतीक्षा ही क्यों की जाए, क्यों न हम प्रतिदिन प्रार्थना एवं निष्ठा द्वारा अपनी शक्ति का विकास करते जाएँ। यह जरूरी तो नहीं कि प्रार्थना रविवार को ही की जाए। मैं तो हफ्ते के किसी भी दिन दोपहर के समय निर्जन चर्चों में जा बैठता हूँ और ऐसा मैं वर्षों से करता आ रहा हूँ। जब मुझे आध्यात्मिक चिंतन के लिए कुछ समय निकालना भी कठिन हो जाता है या जल्दी रहती है तो मैं अपने आप को रोकना हूँ और कहता हूँ, ''अरे पगले, यह सब उतावल और दौड़-धूप किसलिए? तुझे रुककर कुछ गंभीर चिंतन करना चाहिए।'' और उस चिंतन के लिए मैं प्राय: जो भी चर्च खुला पाता हूँ, उसी में घुस जाता हूँ। यद्यपि मैं एक प्रोटेस्टेंट हूँ तो भी प्राय: संत पेट्रिक कैथेड्रल में सप्ताह के किसी भी दिन दोपहर के समय जा खड़ा होता हूँ, क्योंकि मेरा विश्वास है कि सभी प्रकार के चर्च महान, चिरंतन एवं आध्यात्मिक सत्यों का प्रचार करते हैं। जीवन की क्षणभंगुरता को याद करते हुए मैं अपने आप को स्मरण दिलाता हूँ कि केवल तीस वर्ष और जीना है और तब आँखें मूँदकर प्रार्थना करने लग जाता हूँ। ऐसा करने से मेरे मनोवेग शांत हो जाते हैं, शरीर को आराम मिलता है। हर वस्तु मेरे सामने स्पष्ट हो जाती है और मुझे अपने मूल्यों पर पुन: विचार करने में सहायता मिलती है। गत छह वर्षों से मैं यह पुस्तक लिखने में लगा हुआ हूँ। इस अवधि में मैंने उन सैकड़ों उदाहरणों एव सच्ची घटनाओं का संकलन किया है, जिनके द्वारा विदित होता है कि मनुष्यों ने प्रार्थना की शक्ति द्वारा भय एवं चिंता पर किस प्रकार विजय प्राप्त की। ऐसी घटनाओं एवं तथ्यों के विवरण मेरे पास भरे पड़े हैं। उदाहरण के लिए, आइए एक पस्तहिम्मत एवं निराश पुस्तक विक्रेता की कहानी लें। इस निराश व्यक्ति का नाम जॉन आर. एंथनी है। अपनी कहानी सुनाते हुए उसने कहा-

''बाईस वर्ष पहले अपनी वकालत बंद कर मैं एक अमेरिकन लॉ बुक कंपनी के क्षेत्रीय प्रतिनिधि का नाम करने लगा। मेरा मुख्य कार्य वकीलों को कानून की किताबें बेचना था, और ये पुस्तकें हरेक के लिए जरूरी थीं।

मैं इस काम में काफी होशियार था और इस काम की मैंने शिक्षा भी ली थी। ग्राहकों से सीधे बात करके उन्हें राजी करना तथा उनकी सभी संभव आपत्तियों का समाधान करना मेरे बाएँ हाथ का खेल था। किसी भी व्यक्ति से मिलने के पूर्व मैं उसकी आय, वकालत, उसके राजनीतिक विचार एवं उसकी रुचि के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त कर लेता औा उससे मिलते समय उस जानकारी का बड़ी चतुराई से उपयोग करता। फिर भी कहीं-न-कहीं कुछ दोष अवश्य ही रह जाता था और यही कारण था कि मुझे ऑर्डर नहीं मिलता था।

मेरा उत्साह मरने लगा, ज्यों-ज्यों दिन बीतते गए, मैं अपने प्रयत्नों को दुगुना करता गया, फिर भी अपना खर्च चलाने भर कमा लेना भी मेरे लिए मुश्किल हो गया। मुझ पर भय हावी हो गया। लोगों से मिलने में मुझे डर लगने लगा। जब भी मैं बिक्री के लिए किसी घर में प्रवेश करता, मेरा भय और झिझक की भावनाएँ बड़ीं उग्र हो जातीं और मैं दरवाजे के बाहर ही कदम नापने लगता था फिर घर के बाहर अथवा ब्लॉक के इर्दगिर्द चक्कर काटने लगता। बहुत कुछ समय इस प्रकार नष्ट करने के पश्चात अपना समूचा साहस बटोरकर, इच्छाशक्ति के वेग से काँपते हाथों ऑफिस का दरवाजा खोलता। मुझे यह भी आशा न रहती कि मेरा ग्राहक अंदर ही होगा।

मेरे सेल्स मैनेजर ने धमकी दी कि अच्छी संख्या में ऑर्डर न भेजने पर मेरा पैसा रोक लिया जाएगा। इधर घर पर पत्नी को मोदी का बिल चुकाना था। उसे अपना और बच्चों का खर्च चलाना था इसलिए पैसों की जरूरत थी। इन सारी चिंताओं ने मुझे घेर लिया। दिन प्रतिदिन मेरा नैराश्य उन्माद की सीमा तक बढ़ता गया। समझ में नही आता था कि क्या करूँ और क्या नहीं करूँ। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि वकालत करना मैंने छोड़ दिया था। मेरे मुवक्किल छूट चुके थे। मैं लगभग दिवालिया बन चुका था। न मेरे पास होटल का बिल चुकाने के लिए पैसे थे और न ही घर लौटने के लिए किराया। एक हारे आदमी की तरह घर लौटने का साहस मुझमें नही थी। मुझे अपने जीवन-मरण की चिंता नहीं थी पर इस बात का दु:ख जरूर था कि मैं इस दुनिया में आया क्यों? उस रात मैं गरम दूध पीकर सो

गया, मेरा वह दूध पीना भी मेरी आर्थिक क्षमता के बाहर की बात थी। किंकर्तव्यविमूढ़ व्यक्ति खिड़की से कूदकर जान क्यों देते हैं, इस बात का एहसास मुझे उस रात को ही हुआ। यदि मुझमें हिम्मत होती तो मैं भी वैसा ही करता। जीवन की सार्थकता एवं सोद्देश्यता पर मुझे शंका होने लगी। जीवन के उद्देश्य को मैं समझ नहीं सका।

इसके अतिरिक्त वहाँ कोई ऐसा व्यक्ति भी नहीं था जिससे मैं सहायता की आशा करता। मैंने भगवान का सहारा लिया और प्रार्थना करने लगा। मैंने प्रभु से अंधकार एवं निराशा से भरे जीवन के लिए प्रकाश, शक्ति एवं मार्गदर्शन की याचना की। मैंने प्रार्थना की कि हे भगवान, पुस्तकों के लिए अधिक ऑर्डर प्राप्त करने में मेरी सहायता कर और मुझे कम-से-कम इतना पैसा जुटा दे कि मैं अपनी पत्नी एवं बच्चों का पेट भर सकूँ। प्रार्थना कर लेने के बाद जब मैंने आँखें खोलीं तो होटल के उस एकांत कमरे में ड्रेसर पर रखी एक बाइबिल पर मेरी नजर पड़ी। उसे खोलकर मैंने ईसा के उन चिरंतन एवं महत्त्वपूर्ण प्रवचनों को पढ़ा, जो सदियों से असंख्य एकाकी, क्लांत एवं अभिभूत आत्माओं को प्रेरणा देते आ रहे हैं। ईसा ने उक्त प्रवचन अपने अनुयायियों को चिंता से दूर रहने का उपाय बताते हुए दिया था-

'अपनी चिंता न करो। क्या खाओगे, क्या पिओगे और क्या पहनोगे यह मत सोचो। मौज-शौक आदि खान-पान के अलावा जीवन का अपना विशेष महत्त्व है। उन उड़ते पक्षियों को देखो, वे अनाज नहीं बोते, फसल नहीं काटते और भंडार नहीं भरते, फिर भी परम पिता परमात्मा उनका पोषण करता है, फिर तुम तो उनसे भी अच्छी स्थिति में हो।'

'पहले उस अध्यात्म एवं सत्य की साधना करो, अन्य सभी वस्तुएँ अपने आप ही तुम्हें मिल जाएँगी।'

जब मैं उन शब्दों को पढ़ रहा था, एक अपूर्व बात हुई, मेरा मनोवेग शांत हो गया। चिंता, भय एव क्लेश के स्थान पर मुझमें साहस, आशा तथा निष्ठा के भाव जाग उठे। यद्यपि होटल का बिल चुकाने के लिए मेरे पास पर्याप्त रकम नहीं थी तथापि मैं प्रसन्न था और इसीलिए मैं खूब सोया। इतना मैं पहले कभी नहीं सोया था।

दूसरे दिन सवेरे अपने ग्राहकों के ऑफिस खुलने तक मैं अधीर हो उठा। उस दिन पानी बरस रहा था। सुंदर सुहाना मौसम था। मैं दृढ़ एवं साहस भरे कदमों से ऑफिस की ओर बढ़ा। दृढ़ता से मैंने दरवाजा खोला और बड़े उत्साह के साथ एक संभ्रांत कुल के व्यक्ति की तरह चेहरे पर मुस्कराहट लिए, सिर ऊँचा उठाए कमरे में प्रवेश किया, अभिवादन किया और अपना परिचय दिया। मेरे ग्राहक ने मुस्कराहट के साथ हाथ मिलाते हुए मेरा स्वागत किया और बैठने को कुर्सी दी।

उस दिन जितनी बिक्री मैंने की थी, उतनी गत कई दिनों में नहीं की थी। उस दिन शाम को मैं एक विजयी योद्धा की तरह अपने होटल में लौटा। मैंने अपने में एकदम नयापन अनुभव किया, यह इसलिए कि मैंने सिद्धिदायक एक नवीन मानसिक दृष्टिकोण को अपना लिया था। उस दिन मैंने केवल दूध ही नहीं पिया, बल्कि भर पेट स्वादिष्ट भोजन भी किया। उस दिन से मेरी बिक्री दिन दूरी रात चौगुनी बढ़ती गयी।

बाईस वर्ष पूर्व उस भयानक रात में टेक्सास की छोटी अमेरिलो होटल में मैंने नया जन्म सा लिया था। मेरी स्थिति तो वैसी ही रही, जैसी कई दिनों से चली आ रही थी, किंतु आंतरिक स्थिति में भारी परिवर्तन आ गया था। ईश्वर के प्रति अपने संबंधों का एकाएक मुझे भान हो आया था। मैंने महसूस किया कि कोई भी क्यों न हो, अकेला तो सहज ही में परास्त किया जा सकता है, किंतु प्रभु की शक्ति यदि उसके साथ हो तो वह अजय बन सकता है। यह बात मैं इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि इसका मुझे प्रत्यक्ष अनुभव हो चुका है।''

'माँगो और तुम्हें मिलेगा, खोजो और ढूँढ़ लोगे, द्वार खटखटाओ और वह तुम्हारे लिए खुल जाएगा।'

एलिनॉय अंतर्गत हाईलैंड में श्रीमती एल.जी. बेयर्ड रहती हैं। जब उन पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा तो उन्होंने

भगवान से प्रार्थना करके शांति और धैर्य को प्राप्त किया। प्रभु के चरणों में झुककर वे प्रार्थना करतीं, ''हे प्रभु, तू जो करेगा, सो ही होगा।''

श्रीमती एल.जी. बेयर्ड अपने एक पत्र में लिखती हैं, ''एक दिन शाम को मेरे टेलिफोन की घंटी बज उठी। रिसीवर उठाने का साहस करते-करते वह बराबर चौदह बार बजी। मुझे ज्ञात था कि फोन अस्पताल से ही आया होगा होगा, इसलिए मैं काँप उठी। मुझे आशा थी कि मेरा छोटा बच्चा कहीं दम न तोड़ रहा हो। उसे मेनिंजाइटिस हो गया था। पेनिसिलीन देने से उसका ज्वर बढ़ गया था और डॉक्टर को शंका हुई कि बीमारी का असर दिमाग पर हो चुका है। इसका परिणाम ब्रेनट्यूमर और आखिर में मृत्यु ही हो सकता था। फोन पर यही सूचना थी जिसकी मुझे आशंका थी। डॉक्टर ने हमें जल्दी ही अस्पताल बुलाया था। मैं अपने पति के साथ वहाँ पहुँची।

संभव है, आप हमारी परेशानी का अनुमान लगा सकें। मुझे खयाल आया, एक ओर वे माता-पिता हैं जो अपने बच्चों को गोद में लेकर झुला रहे हैं। दूसरी ओर हम हैं जो इस आशंका में डूबे हुए हैं कि क्या हम अपने बच्चे को फिर कभी गोद में ले सकेंगे। अंत में जब हमें डॉक्टर ने अपने कमरे में बुलाया तो उसके चेहरे के भाव देखकर हम आशंका से काँप उठे। उसके शब्दों ने हमें और भी भयातुर कर दिया। उसने बताया कि बच्चे के बचने की केवल 25 प्रतिशत आशा रह गई है। यदि आपका कोई परिचित डॉक्टर हो तो उसे आप बच्चे को बचाने के लिए बुला सकते हैं।

घर लौटते समय रास्ते में मेरे पति अधीर हो उठे। उन्होंने हाथों को स्टीयरिंग पर पटकते हुए कहा, ''कुछ भी हो मैं अपने बच्चे को हाथ से नहीं जाने दूँगा।'' यदि आपने किसी को चीखते हुए देखा है तो आप जानते होंगे कि वह दृश्य कितना करुणाजनक होता है। हमने गाड़ी रोक ली और कुछ सोच-विचार के बाद हमने चर्च में जाने का विचार किया। हमने सोचा, यदि भगवान की यही इच्छा है कि बच्चा हम से छिन जाए तो हम उसकी इच्छा सिर झुकाकर स्वीकार कर लें। मैं चर्च में गई और वहाँ एक जगह बैठ गई। रोते-रोते मैंने भगवान से कहा, 'प्रभु, तेरी इच्छा ही सर्वोपरि है।'

जैसे ही मैंने उन शब्दों दुहराया, मैं अपने को स्वस्थ अनुभव करने लगी। मुझमें एक नवीन शांति का भाव जाग उठा। जिसका इधर कई दिनों से अभाव था। घर लौटते समय रास्ते में भी यही दुहराती रही, ''प्रभु, तेरी इच्छा ही सर्वोपरि है।'

एक सप्ताह बाद उस रात मैं पहली बार गहरी नींद सो सकी। कुछ दिनों के उपरांत डॉक्टर ने हमें फिर अस्पताल बुलाया और बताया कि बच्चा अब खतरे से बाहर हो चुका है। आज मैं अपने चार वर्ष के उस स्वस्थ बच्चे को जीवनदान देने के लिए ईश्वर का बड़ा उपकार मानती हूँ।''

मैं कुछ ऐसे लोगों को जानता हूँ जो धर्म को केवल स्त्रियों, बच्चों तथा प्रचारकों का क्षेत्र ही समझते हैं। उन्हें अपने पुरुषार्थ पर गर्व है, वे समझते हैं कि वे अपनी लड़ाई अकेले ही लड़ सकते हैं, किंतु जब उनको यह पता चलेगा कि संसार के अत्यंत पुरुषार्थी व्यक्ति भी रोज प्रार्थना करते हैं तो उन्हें कितना आश्चर्य होगा। उदाहरण के लिए जैक डेम्प्सी को ही ले लीजिए, कितना बड़ा पुरुषार्थी है वह। उसने मुझे एक दिन बताया कि प्रार्थना किये बिना वह कभी सोता नहीं। कुश्ती के लिए अभ्यास करते समय भी वह रोज प्रार्थना कर लेता है और जब कुश्ती लड़ने जाता है तो पहली घंटी बजने के पहले ही प्रार्थना कर लेना नहीं भूलता। प्रार्थना से उसे साहस और विश्वास से साथ लड़ने की शक्ति मिलती है।

पुरुषार्थी 'कोनी मैन' ने भी मुझे बताया कि वह प्रार्थना किये बिना नहीं सोता। पुरुषार्थी रिकनबैकर का कहना है कि उसका जीवन प्रार्थना के वरदान से ही सुरक्षित है। वह रोज प्रार्थना करता है।

पुरुषार्थी एडवर्ड आर. स्टेटिनियस ने, जोकि जनरल मोटर एंड युनाइटेड स्टेट्स स्टील कंपनी का एक उच्च अधिकारी है तथा जो सेक्रेटरी ऑफ स्टेट रह चुका है, मुझे बताया कि रोज सुबह-शाम, बुद्धि एव मार्गदर्शन के लिए वह भगवान से प्रार्थना करता है।

अपनी पीढ़ी का महान उद्योगपति एवं पुरुषार्थी जे. पियरपॉन्ट मोर्गन प्राय: अकेला ही शनिवार के दिन दोपहर के समय वॉल स्ट्रीट स्थित ट्रिनिटी चर्च में जाकर प्रार्थना किया करता था। पुरुषार्थी आइजनहॉवर भी ब्रिटिश एवं अमेरिकन सेनाओं के सर्वोच्च कार्यभार सँहालने के लिए जब विमान द्वारा इंग्लैंड गये तो उनके पास केवल एक पुस्तक थी - बाइबिल। पुरुषार्थी जनरल मार्क क्लार्क ने मुझे बताया कि युद्ध के दिनों में भी वे बराबर प्रार्थना किया करते थे। च्यांग काई शेक और जनरल मॉन्टगोमेरी भी यही करते थे। ये वही मॉन्टगोमेरी हैं, जिन्होंने एल. एलामेन में ख्याति प्राप्त की थी। लॉर्ड नेल्सन ने भी ट्रॉफेलगर में यही किया। जनरल वॉशिंगटन, रोबर्ट, ई. लीए स्टोनवॉल जेक्सन तथा अन्य बीसियों महान सैनिक नेता सदैव प्रार्थना किया करते थे। उन कर्मवीरों ने विलियम जेम्स की सत्यता को खोज निकाला। उसने कहा था, ''हमारा और भगवान का पारस्परिक संबंध है और अपने को उसके हाथों सौप देने में हमें अथाह सिद्धि की प्राप्ति हो सकती है।''

बहुत से कर्मवीर आज भी इसी खोज में लगे हैं। सात सौ बीस लाख अमेरिकी, चर्च के सदस्य हैं और वह संख्या अब तक के सदस्यों की संख्या से काफी अधिक है। मैं आपको पहले ही बता चुका हूँ कि वैज्ञानिक भी धर्म की शरण ले रहे हैं। उदाहरणार्थ 'मेन द अननोन' पुस्तक के लेखक और नोबल पुरस्कार पाने वाले डॉक्टर एलेक्सिस कैरेल को ही लीजिए। रीडर्स डाइजेस्ट पत्रिका में उन्होंने लिखा था कि 'प्रार्थना से अत्यंत प्रबल शक्ति उपलब्ध की जा सकती है और वह शक्ति भू-गुरुत्वाकर्षण शक्ति के समान ही वास्तविक है। मैं एक डॉक्टर हूँ और मैंने देखा है कि सभी इलाज नाकाम हो जाने पर भी रोगी श्रद्धा से प्रार्थना कर व्याधि एवं संकट से मुक्त हो सके हैं।'

रेडियम की भाँति प्रार्थना भी प्रकाश एवं शक्ति का स्रोत है। प्रार्थना द्वारा मनुष्य अपनी सीमित शक्ति को असीम शक्ति से जोड़कर उसकी वृद्धि करने का प्रयास करता है। प्रार्थना करते समय हम अपना संबंध सृष्टि का संचालन करने वाली उस चिरंतन शक्ति के साथ जोड़ते हैं। हमारी लालसा रहती है कि उस शक्ति का कुछ अंश हमें प्राप्त हो जाए, ताकि हम अपने जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। प्रार्थना करने से भगवान हमारे अभावों की पूर्ति कर देता है और हम सबल एव स्वस्थ हो उठते हैं। भक्ति से ईश्वर का स्मरण करके हम अपने शरीर एवं आत्मा का उद्धार करते हैं। चाहे मनुष्य क्षण भर ही प्रार्थना क्यों न करें, उसे उसका शुभ परिणाम मिले बिना नहीं रहता।

सृष्टि का संचालन करने वाली उस अविनाशी शक्ति के साथ नाता जोड़ने का एडमिरल रिचर्ड बियर्ड को अच्छा अनुभव है। उस चिरंतन शक्ति से तारतम्य साधने की क्षमता ने ही उसे जीवन के कठिनतम क्षणों में भी उबार लिया। 'अलोन' नामक अपनी पुस्तक में उन्होंने अपनी कहानी सुनाई है। सन् 1934 में उनको पाँच महीने दक्षिण ध्रुव के सुदूर अंचल रॉस बैरियर की हिमाच्छादित शिखरों की तलहटी में दबी एक झोंपड़ी में बिताने पड़े। अठहत्तर अक्षांश रेखा के दक्षिण में वे ही एक जीवित प्राणी थे। उन पर बर्फीले तूफान गरजते थे। भंयकर शीत के कारण तापमान शून्य से भी 82 डिग्री नीचे तक पहुँच गया था। अँधेरे से वे पूर्णतया घिर गये थे। रात खत्म ही नहीं होती थी। स्टोव से निकाला कार्बनडाइऑक्साइड उनके लिए घातक बन रहा था और उसका विष धीरे-धीरे अपना काम करता जा रहा था। वे क्या करते? निकटतम सहायता केंद्र भी उनसे 123 मील दूर था। और शायद कई महीनों तक किसी प्रकार की सहायता पाना उनके लिए संभव नहीं था। उन्होंने अपने स्टोव को जलाने का प्रयत्न किया और रोशनदान बनाया। किंतु कोई लाभ नहीं हुआ। स्टोव से निकलने वाली गैस ने उन्हें कई बार बेहोश कर दिया था। वे बेहोश

फर्श पर पड़े रहते। न खा सकते थे, न सो सकते थे। उनकी कमजोरी इतनी बढ़ गई थी कि बिस्तर छोड़ना तक उनके लिए मुश्किल हो गया था। कई बार उन्हें शंका होती कि वे सुबह होने तक जिंदा भी रह सकेंगे? उन्हें विश्वास हो गया था कि वे उसी केबिन में मर जायेंगे और उनका शरीर उस अपार हिमराशि के नीचे दब कर रह जाएगा।

उनकी जान कैसे बची? एक दिन जब वे भयंकर रूप से निराश हो गये, तो उन्होंने बड़ी मुश्किल से अपनी डायरी ली और उसमें अपना जीवन-दर्शन लिखने का प्रयास किया। उन्होंने लिखा, ''इस विश्व में केवल मनुष्य ही नहीं रहते, यहाँ आकाश में चमकते हुए तारे भी हैं तथा अन्य ग्रह एवं उपग्रह भी।'' उन्होंने सूर्य का विचार किया जो समय-समय पर दक्षिण ध्रुव के समूचे उजाड़ प्रदेश को रोशनी से जगमगा देता और उसके बाद उन्होंने अपनी डायरी में लिखा, ''मैं यहाँ अकेला नही हूँ।''

उनके इसी विचार से पृथ्वी के उस एकांतर छोर में, हिम की उस गुफा में उन्हें मरने से बचा लिया। उन्होंने भी यही कहा है, इसी विचार ने मेरी रक्षा की है। कुछ ही व्यक्ति ऐसे होते हैं जिनकी जीवनशक्ति अपने जीवनकाल ही में लगभग समाप्त हो जाती है, अन्यथा मरने तक मनुष्य में शक्ति के कितने ही गहरे कुएँ भरे रहते हैं, जिनका वह उपयोग ही नहीं कर पाता। रिचर्ड बियर्ड ने भगवान की शरण में जाकर शक्ति के उस भंडार को खोलकर उसका उपयोग करना सीख लिया।

जो पाठ एडमिरल बियर्ड ने ध्रुव प्रदेश की हिमानियों के बीच रहकर सीखा, वही ग्लेन ए. अरनॉल्ड ने इलिनॉय के धान के खेतों में सीखा था। इलिनॉय अंतर्गत चिलिकोथे के ये महाशय बीमा ब्रोकर का काम करते थे। चिंता पर विजय पाने की कहानी उन्होंने इस प्रकार सुनाई थी-

''आठ वर्ष पूर्व की बात है, मैंने विचार किया कि मैं हमेशा के लिए घर छोड़ दूँ और अपनी गाड़ी में बैठकर नदी की ओर चल दूँ। मैं जीवन में हार चुका था, एक माह पूर्व ही मेरा अपना छोटा सा संसार चूर होकर रह गया था। बिजली के यंत्रों एवं उपकरणों का मेरा व्यापार बैठ गया था। घर पर माँ अंतिम साँसें गिन रही थी, पत्नी उन दिनों गर्भवती थी, दूसरे पुत्र को जन्म देने वाली थी। डॉक्टर का बिल दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा था। अपना व्यापार फिर से शुरू करने के लिए मैं अपने पास जो कुछ था, उसे गिरवी रख चुका था। कार और फर्नीचर भी रेहन रखे हुए थे। अपनी बीमा की रकम पर भी कर्ज उठा लिया था। सबकुछ एकदम चौपट हो गया था। विपत्ति का सामना करना कठिन हो गया था। अंततः एक दिन अपनी मुश्किलात से सदा के लिए छुटकारा पाने के विचार से मैं अपनी गाड़ी में बैठकर नदी की ओर चल पड़ा।

''मैंने देहात में कुछ मील यात्रा की और तब गाड़ी को सड़क से दूर खड़ी कर बाहर निकल आया और बच्चे की तरह फूट-फूटकर रोने लगा। अपनी उस अवस्था में मैंने चिंता में उलझे न रहकर वस्तुस्थिति पर क्रियात्मक रूप से विचार करना आरंभ किया। मेरी परिस्थिति कितनी खराब है? क्या वह इससे भी अधिक खराब हो सकती? क्या वह सचमुच ही निराशापूर्ण है? उसे सुधारने के लिए क्या किया जा सकता है?

इतना सोचकर मैंने तत्काल ही अपनी समस्या भगवान के हवाले कर दी और उसे सुलझाने के लिए भगवान से प्रार्थना करने का निश्चय किया। मैंने खूब प्रार्थना की, मानो मेरा समूचा जीवन उस प्रार्थना कर ही टिका हुआ हो। बात भी कुछ ऐसी ही थी। इसी दरमियान एक अजीब बात हुई। जैसे ही मैंने अपनी समस्याओं को सर्वशक्तिमान प्रभु के हवाले किया, मुझे एक आंतरिक शांति का अनभुव हुआ। ऐसा अनुभव इधर कई महीनों से मैं नहीं कर पाया था। मैं उस जगह करीब आधा घंटा रोता-सिसकता बैठा रहा और फिर घर लौटकर छोटे बच्चे की तरह मीठी नींद सो गया।

दूसरे दिन सवेरे जब मैं जगा तो मुझमें नया आत्मविश्वास था। मैं सर्वथा निर्भय हो चुका था क्योंकि मार्गदर्शन के लिए मैं अब भगवान पर ही निर्भर था। उस दिन मैं अपने आत्मविश्वास के साथ सिर ऊँचा उठाए एक स्थानीय डिपार्टमेंटल स्टोर के बिजली संबंधी सामग्री बेचने वाले विभाग में सेल्समेन की नौकरी खोजने के लिए गया। नौकरी मिल जाने का मुझे पूरा विश्वास था और वह मिली भी। मुझे उससे लाभ भी मिलता रहा, किंतु बाद में युद्‌ध के कारण वह कारोबार एकदम चौपट हो गया। तब मैंने अपने भगवान की छत्रछाया में जीवनबीमा के एजेंट का काम किया। यह घटना पाँच वर्ष पूर्व की है। अब तो मैंने अपना सारा कर्ज अदा कर दिया है। अब मेरे तीन प्यारे से बच्चे है। मेरे पास अपना घर है, मोटर है और पच्चीस हजार डॉलर का बीमा है।

आज जब मैं अपने अतीत पर विचार करता हूँ तो मुझे इस बात की खुशी होती है कि उन दिनों में बरबाद हो गया और और घबराकर आत्महत्या के विचार से नदी में डूबने के लिए चल दिया था। यदि यह सब न होता तो मुझमें भगवान के प्रति इतना विश्वास उत्पन्न नहीं होता। आज मुझमें इतनी शांति और इतना आत्मविश्वास है कि जिसकी मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

क्या कारण है कि धार्मिक निष्ठा हमें शांति, दृढ़ता एव धैर्य प्रदान करती है। इसका उत्तर विलियम जेम्स से पूछिए। उनका कहना है कि जिस प्रकार सागर का ऊपरी चंचल भाग और उमड़ती मौजें उसके अंत:स्थल की शांति भंग नहीं कर सकते, उसी प्रकार यदि मनुष्य का विशाल चिरंतन शक्तियों पर अधिकार हो तो वैयक्तिक जीवन का क्षणिक उतार-चढ़ाव उसके लिए कोई महत्त्व नहीं रखता। जिस व्यक्ति में वास्तविक धार्मिक निष्ठा को वह दृढ़ एवं संतुलित रहता है और धैर्यपूर्वक दैनिक जीवन के किसी भी कर्तव्य को निभाने में तत्पर रहता है।

अपनी चिंता एवं व्याकुलता में हम भगवान का सहारा क्यों न लें। इमानुएल कांट कहते हैं, 'ईश्वर में निष्ठा रखो, इसकी हमें बड़ी आवश्यकता है। हमें आज ही, अभी से, सृष्टि का संचालन करने वाली उस अनंत शक्ति के साथ अपना नाता जोड़ लेना चाहिए।''

भले ही स्वभाव और शिक्षा की दृष्टि से आप निष्ठावान व्यक्ति न हों, भले ही आप पूरे नास्तिक हों, फिर भी प्रार्थना से आपको अप्रत्याशित सहायता मिल सकती है। यह एक व्यावहारिक उपाय है। इसे मैं व्यावहारिक इसलिए बताता हूँ कि चाहे मनुष्य ईश्वर में निष्ठा न भी रखे, इससे उसकी तीन मूलभूत मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओ की, जो उसके लिए बहुत आवश्यक हैं, पूर्ति हो जाती है।

प्रार्थना करके हम अपने वास्तविक दु:ख को वाणी में प्रकट कर सकते हैं। वस्तुत: प्रार्थना करना बहुत कुछ अपनी समस्याओं को कागज पर उतारने के समान ही है। यदि हम किसी समस्या को लेकर भगवान की सहायता चाहें तो भी हमें उसे वाणी में प्रकट करना पड़ेगा।

प्रार्थना से हमें ऐसा अनुभव होता है कि मानो हम अपने दु:ख-भार को अकेले न ढोकर दूसरों में बाँट रहे हैं। हममें से कुछ ही व्यक्ति ऐसे समर्थ हैं जो अपने भार तथा यातना देने वाले कष्टों को अकेले ही सह लेते हैं। कभी-कभी हमारे कष्ट ऐसे भी होते हैं कि उन्हें हम अपने निकटतम संबंधियों एवं अभिन्न मित्रों तक को नहीं बता सकते। ऐसी दशा में अपना दु:ख व्यक्त करने के लिए प्रार्थना ही एकमात्र उपाय रह जाता है। कोई भी मनोरोग चिकित्सक आपको बता सकेगा कि चिकित्सा की दृष्टि से व्याकुलता, तनाव एवं संताप की अवस्था में अपने दु:खों को दूसरों के सामने व्यक्त कर देने से बड़ा लाभ होता है और यदि कुछ दु:ख ऐसे हो जिन्हें हम किसी और से न कह सकें तो भगवान से तो निश्चित ही कह सकते हैं।

प्रार्थना से रोगी को व्यस्त रखने के सिद्‌धांत को बल मिलता है, उसे व्यस्त रखने की यह पहली अवस्था है। मैं तो नहीं मानता कि कोई भी व्यक्ति बिना कोई लाभ हुए, अपनी समस्या सुलझाने के लिए रोज-रोज प्रार्थना करता रहे।

मैं यह भी नहीं मानता कि वह अपनी उलझन को समाप्त करने के लिए कोई प्रयत्न ही न करे। एक विश्वविख्यात वैज्ञानिक का कहना है, ''प्रार्थना से अत्यंत प्रबल शक्ति की उद्‌भावना होती है। फिर प्रार्थना करके ऐसी शक्ति का उपयोग क्यों न किया जाए। ईश्वर की परिभाषा और राम-रहीम के झगड़े में क्यों पड़ा जाए, जबकि प्रकृति की वह रहस्यमयी शक्ति हमारी रक्षा करती है।''

क्यों न आप इसी क्षण पुस्तक पढ़ना बंद कर शयनकक्ष में जा, दरवाजा बंद कर, प्रार्थना करना शुरू कर दें और अपने हृदय का बोझ हल्का कर लें। यदि आपने अपनी निष्ठा खो दी है तो प्रार्थना कीजिए कि वह आपको पुनः प्राप्त हो जाए। ईश्वर के सामने गिड़गिड़ाइए और याचना कीजिए कि 'हे भगवान, अब मैं अकेला संघर्ष नहीं कर सकता, मुझे तुम्हारी सहायता और तुम्हारा स्नेह चाहिए। मेरी सभी भूलों को क्षमा कर दो और मेरे हृदय का कल्मश धो डालो। मुझे शांति, स्थिरता एवं स्वास्थ्य का मार्ग दिखाओ और मुझमें इतना प्रेम-भाव भ्र दो कि मैं अपने दुश्मनों को भी प्यार कर सकूँ।'

यदि आपको प्रार्थना करना न आता हो सात सौ वर्ष पूर्व व्यक्त किये गये संत फ्रांसिस के शब्दों को दुहरा लीजिए -

''हे प्रभु, मुझे अपनी शांति का उपकरण बना, ताकि मैं घृणा के बदले प्रेम, अपकार के बदले क्षमा, नैराश्श्य के बदले आशा, अंधकार के बदले प्रकाश तथा उदासी के बदले उल्लास के भाव प्रकट कर सकूँ।''

''हे परम पिता, मुझे वरदान दे कि मैं अपने धैर्य की परवाह न कर दूसरो को धैर्य दे सकूँ। अपने को समझाने की परवाह न कर दूसरों को समझा सकूँ, दूसरों का प्रिय बनने की लालसा न रख कर, उनको प्यार कर सकूँ। क्योंकि हम देकर ही ले सकते हैं; क्षमा करके ही क्षमा के पात्र बन सकते हैं, दूसरों के लिए मरकर ही अमर बन सकते हैं।''

❑

आलोचना की उपेक्षा

एक बार मैंने मेजर जनरल मेडले बटलर से भेंट की। ये वही है जो जिमलेट-आई और हेल-डेविल के उपनाम से प्रसिद्ध थे। इन उपनामों से शायद आप उन्हें पहचान गये होंगे। अमेरीकी नौसेना के ये जबदस्त रँगीले एवं शेखीबाज जनरल थे।

उन्होंने मुझे बताया कि जवानी कि दिनों में उन्हें लोकप्रिय होने की तीव्र लालसा थी। प्रत्येक व्यक्ति पर वे अच्छा प्रभाव जमाना चाहते थे। उस दिनों मामूली सी आलोचना भी लोगों को चुभ जाया करती थी, किंतु नौसेना में तीस वर्ष काम करने के कारण उनकी खाल इतनी मोटी हो गई है कि आलोचना का उन पर कोई असर ही नही होता। उन्होंने कहा, ''मेरा अपमान किया गया, मुझे गिराया गया और डरपोक साँप और नीच कहकर मेरी भर्त्सना भी की गई। कई विशेषज्ञों ने मुझे कोसा भी। जितनी हो सकती थीं बद्दुआएँ दीं, पर मैंने चिंता नहीं की। जब कभी मैं किसी व्यक्ति को बद्दुआ अथवा गाली देते सुनता हूँ, मैं उसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखता।

संभव है कि वृद्ध जिमलेट-आई बटलर आलोचना की आवश्यकता से अधिक उपेक्षा करते हो किंतु यह तो निश्चित है कि हमसे से कई बात का बतंगड़ बना देते हैं और मामूली सी बात को भी बहुत गंभीर रूप से देते हैं। आज भी मुझे यह घटना बाद है। कई वर्षों की बात है 'न्यूयॉर्क सन' के एक संवाददाता मेरी प्रौढ़ शिक्षा की कक्षाओं की प्रदर्शन-सभा में सम्मिलित हुए थे। उन्होंने मेरी और मेरे कार्य की छीछालेदर की। मैं जल-भुनकर रह गया। मैंने उसे अपना अपमान माना। मैंने 'सन' पत्र की प्रबंध कमेटी के अध्यक्ष गिलहॉजेस को फोन किया और कहा कि उन्हें अपने पत्र में ऐसा लेख देना चाहिए जो तथ्यों पर आधारित हो और जो कोरी बकवास न हो। मैं उन्हें योग्य दंड देने के लिए कृत-संकल्प था।

किंतु आज मुझे अपने उस व्यवहार पर लज्जा आती है। आज मैं महसूस करता हूँ कि अखबार पढ़नेवाले पाठकों में से आधे पाठकों ने तो उस लेख को देखा ही नहीं होगा। जिन्होंने उसे पढ़ा होगा उनमें से भी आधे पाठकों ने उसे सहज विनोद की सामग्री समझा होगा और बाकी जिन लोगों ने उस पर ध्यान दिया होगा वे कुछ ही हफ्तों में इस बात को भूल भी गये होंगे।

मैंने महसूस किया कि लोग दूसरों के बारे में कभी नहीं सोचते। वे इस बात की भी परवाह नहीं करते कि अन्य लोगों के बारे में कहाँ क्या कहा गया है। वे तो सोते-जागते अपनी ही चिंता में लगे रहते हैं। वे हमारी मौत से भी ज्यादा अपने मामूली से सिरदर्द की परवाह करते हैं।

यदि हम पर आरोप लगाया जाए, हमारी खिल्ली उडाई जाए, निंदा की जाए, पीठ में छुरा भी भोंक दिया जाए, या अपने अभिन्न मित्रों द्वारा हमारे साथ विश्वासघात हो तो भी हमें आत्मग्लानि से दु:खी नहीं होना चाहिए। बल्कि स्मरण रखना चाहिए कि ईसा के साथ भी ऐसी ही बातें हुई थीं। इनके बारह अन्य साथियों में से एक आज के मूल्य के अनुसार केवल उन्नीस डॉलर की रिश्वत में कारण विश्वासघात कर गया। एक और साथी ने उन्हें दुर्दिनों में छोड़ दिया और सौगंध खाकर तीन बार घोषणा की कि वह उन्हें नहीं जानता, इस प्रकार प्रति छह साथियों में से एक ईसा के लिए विश्वासघाती साबित हुआ। फिर हम उससे अच्छे परिणाम की आशा कैसे रखें। वर्षों पहले मैंने यह जान लिया कि लोगों को मैं अनुचित आलोचना करने से नहीं रोक सकता, किंतु मैं एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण काम अवश्य ही कर सकता हूँ और वह है, इस बात का निश्चय कि मुझे अनुचित आलोचना से परेशान नहीं होना चाहिए।

मैं जरा अपनी बात को स्पष्ट कर दूँ; मैं यह नहीं कहता कि आप सच्ची आलोचना की अवज्ञा करें। नहीं, बिल्कुल नहीं, मैं तो यह कहता हूँ कि आप अनुचित आलोचना की उपेक्षा कीजिए।

एक बार मैंने एलिनोर रूजवेल्ट से भी यही प्रश्न पूछा था कि आप अनुचित आलोचना से किस प्रकार पार पाती हैं? अनुचित आलोचना का उन्हें जितना सामना करना पड़ा है, इसे भगवान ही जानता है। व्हाइट हाउस में अब तक जितनी महिलाएँ रह चुकी हैं, उनमें से संभवत: ऐलिनोर रुजवेल्ट ही एक ऐसी महिला हैं जिनके घनिष्ट मित्र भी बहुत हैं और साथ ही कट्टर दुश्मनों की संख्या भी कम नहीं।

उन्होंने मुझे बताया कि जब वे तरुणावस्था में थीं, तब लोगों की टीका से अत्यंत घबराती व भय खाती थीं। वे आलोचना से इतनी डरती थीं कि एक दिन उन्होंने अपनी ननद से इस बारे में सलाह ली। उन्होंने कहा, ''आंटी, मैं ये-ये काम करना चाहती हूँ पर लोगों की आलोचना से डरती हूँ।''

टेडी रूजवेल्ट की बहन ने सहानुभूति से उसकी ओर देखते हुए कहा, ''जब तक तुम यह समझो कि जो कुछ तुम कर ही हो, वह ठीक है; लोगों की आलोचना की परवाह मत करो।'' एलिनोर ने मुझे बताया कि जिन दिनों मैं व्हाइट हाउस में थी, वह सलाह मेरे लिए एक आधार बन गई। उसने मुझे बताया कि आलोचना की अवज्ञा करने का एकमात्र उपाय यही है कि हम अपने को एकदम जड़ बना लें। एलिनोर रूजवेल्ट ने सलाह दी कि ''अपने मन में जो उचित समझो, करो। आलोचनाएँ तो होंगी ही, चाहे तुम कुछ करो या न करो।''

जब स्वर्गीय सी. मैथ्यु वॉल स्ट्रीट में अमरीकी अंतरराष्ट्रीय कॉरपोरेशन के अध्यक्ष थे, तब मैंने उनसे पूछा था कि ''क्या आप भी कभी आलोचना से क्षुब्ध होते हैं?'' उत्तर में उन्होंने बताया कि ''हाँ, पहले मैं आलोचना से उत्तेजित हो जाता था। मैं चाहता था कि मेरे संगठन के सभी कर्मचारी मुझे पूर्ण पुरुष समझें। और यदि कोई ऐसा न समझता तो मुझे क्लेश होता। पहले मैं उस व्यक्ति को प्रसन्न करने का प्रयास करता जो मेरी टीका करता किंतु ऐसा करने में मैं किसी और को नाराज एवं उत्तेजित कर बैठता। जब मैं उस व्यक्ति से मेल बढ़ाने की कोशिश करता तो दूसरे लोग भड़क उठते। अंतत: मुझे विदित हुआ कि व्यक्तिगत आलोचना से मर्माहत हुए लोगों के हृदय पर जितना अधिक मरहम लगाने की कोशिश करता हूँ, मेरे दुश्मनों की संख्या उतनी ही अधिक बढ़ती जाती है। तब मैंने विचार किया कि सामान्य लोगों से ऊपर उठकर चलने पर आलोचना अवश्य होगी, इसलिए उनकी बातों को अनसुना कर जाना ही ठीक है। इस विचार ने मुझे अत्यधिक सहायता दी। तब से मैं भरसक उत्तम कार्य करता और आलोचना की उपेक्षा करता।''

किंतु स्वर्गीय डीम्स टेलर सी. मैथ्यु से भी एक कदम आगे बढ़े हुए थे। ये आलोचना को स्वीकार कर लेते और बाद में जनता में उसकी खिल्ली उड़ाते। जब एक बार वे रविवार को दोपहर में आयोजित न्यूयॉर्क फिलहारमोनिक सिम्फनी आरकेस्ट्रा पर विश्रांति के समय टिप्पणी कर रहे थे, एक महिला ने पत्र लिखकर उन्हें झूठा, धोखबाज, विषैला और भीरु कहा।

आगामी सप्ताह में टेलर ने वह पत्र रेडियो पर लाखों सुननेवालों को पढ़कर सुनाया। अपनी पुस्तक 'मेन एंड म्यूजिक' में उन्होंने लिखा है कि रेडियो पर पत्र पढ़े जाने के कुछ दिनों बाद भी उसी महिला का ठीक वैसा ही पत्र बिना किसी परिवर्तन के फिर से उन्हें प्राप्त हुआ। मि. टेलर ने लिखा है कि मैं नहीं समझता कि उसने उस रेडियो भाषण की कोई परवाह नहीं की, जरूर की होगी। आलोचना को इस प्रकार ग्रहण करने वाले व्यक्ति की प्रशंसा किये बिना हम नहीं रह सकते। हम उसकी गंभीरता, उसके दृढ़ संतुलन और विनोदी स्वभाव की सचमुच ही प्रशंसा करते हैं।

प्रिंसटन में विद्यार्थी वर्ग के समक्ष भाषण करते हुए चार्ल्स श्वाब ने स्वीकार किया कि उसे सबसे महत्त्वपूर्ण शिक्षा श्वाब स्टील मिल में काम करने वाले एक वृद्ध जर्मन ने मिली। वह वृद्ध जर्मन मिल के अन्य मजदूरों के साथ युद्धकालीन गरमा-गरम बहस में उलझ गया और उन मजदूरों ने गुस्से में आकर उसे नदी में फेंक दिया। श्री श्वाब

कहते हैं कि जब वह कीचड़ और पानी से सना मेरे कार्यालय में आया जो मैंने उससे पूछा कि 'ऐसा तुमने उन मजदूरों को क्या कहा कि उन्होंने तुम्हें नदी में फेंक दिया?' उसने उत्तर दिया, ''मैंने उन्हें कुछ नहीं कहा, सिर्फ हँस दिया।''

श्री श्वाब ने बताया कि उन्होंने भी वृद्ध जर्मन के 'सिर्फ हँस दिया' शब्दों को अपना लक्ष्य बना लिया है।

अनुचित आलोचना के शिकार होने वाले लोगों के लिए ये शब्द बड़े लाभप्रद हैं। आपसे विवाद करने वाले से तो आप विवाद कर सकते हैं किंतु जो आपकी बात पर हँस दे उसका आप क्या करेंगे?

गृह-युद्ध की भीषणता के दिनों में लिंकन टूट कर रह जाता यदि उसने अपने सभी धृष्ट आलोचकों की आलोचना के प्रति मौन रहने का पाठ न सीखा होता। अंततः उसने कहा था, ''यदि मुझ पर किये गये उन सभी आक्षेपों का उत्तर न देकर केवल उन्हें पढ़ूँ भी तो मुझे अपना यह कारोबार छोड़कर कोई दूसरा कारोबार अख्तियार करना पड़े। मैं भरसक अच्छे से अच्छा काम करने का प्रयास करता हूँ और उसे अंत तक निभाने का प्रयत्न भी करता हूँ। यदि अंत सिद्धिदायक हुआ तो मेरे बारे में जो कुछ कहा गया है, उसकी मुझे चिंता नहीं। किंतु यदि अंत में गलत परिणाम निकले तो चाहे भगवान की आकर क्यों न कहें कि मैं सही हूँ, हकीकत में कोई फर्क नहीं पड़ता।''

यदि हमारी अनुचित आलोचना हो तो हमें इस नियम स्मरण रखना चाहिए, 'आलोचना की उपेक्षा कर भरसक उत्तम कार्य करो।'

❑

अधिक काम के लिए आराम जरूरी

चिंता पर प्रतिबंध लगाने के लिए लिखी गई इस पुस्तक के इस परिच्छेद में थकान की रोकथाक करने की बात मैं क्यों कर रहा हूँ? इसलिए कि प्राय: चिंता का उद्‌भव थकान से होता है। थकान में आपको चिंता का अहसास होने लगता है। कोई भी चिकित्सक आपको बता सकेगा कि थकान से शरीर की संघर्ष-शक्ति कितनी क्षीण हो जाती है और जुकाम आदि अनेक बीमारियाँ किस प्रकार आ घेरती हैं। मनोरोग-चिकित्सक आपको बताएगा कि थकान के कारण भय और चिंता के मनोवेगों के विरुद्‌ध लड़ने वाली शक्ति किस प्रकार निर्बल हो जाती है। अत: थकान की रोकथाम करके ही चिंता की रोकथाम की जा सकती है।

यह बात मैं नहीं कर रहा हूँ, डॉक्टर एडमंड कहते हैं। वे इस पर अधिक जोर देते हैं। डॉक्टर जेक्सन ने आराम पर दो पुस्तकें लिखी हैं, एक है 'प्रौग्रेसिव रिलेक्सेशन' तथा दूसरी 'यू मस्ट रिलेक्स' है। शिकागो विश्वविद्यालय के 'क्लीनिकल फिजियोलोजी' लेबोरेटरी के डायरेक्टर की हैसियत से उन्होंने आराम को चिकित्सा-क्षेत्र में उपयोगी सिद्‌ध करने की दृष्टि से कई वर्षों तक छानबीन की है, उनका कहना है कि स्नायु अथवा मनोवेग संबंधी अवस्था कैसी ही खराब क्यों न हो, पूर्ण आराम की अवस्था में वह ठीक हो जाती है।

अत: चिंता एवं थकान के निवारणार्थ पहला नियम यह है कि आराम किया कीजिये। थकने के पूर्व ही आराम कर लिया कीजिए। क्या कारण है कि आराम इतना महत्त्वपूर्ण है? कारण यह है कि थकान विचित्र गति से बढ़ती रहती है। अमरीकी सेना विभाग ने निरंतर परीक्षण करके इस बात का पता लगाया है कि वर्षों की सैनिक-शिक्षा में मजबूत बने युवक भी, यदि अपने बंधन दूर करके थोड़ा आराम करें तो ज्यादा अच्छी तरह से कवायद कर सकते हैं तथा ज्यादा देर मुकाबले में टिक सकते हैं। और इसीलिए सैनिक अनुशासन उन्हें आराम के लिए बाध्य करता है। आपका हृदय भी उतना ही चंचल है जितना सैनिकों का। आपका हृदय प्रतिदिन इतना खून बाहर फेंकता है कि उससे एक रेलवे टेंकर आसानी से भर सकता है। चौबीस घंटों में वह उतनी ही शक्ति उत्पन्न करता है जितनी तीन फीट ऊँचे प्लेटफार्म पर बीस टन कोयला ढोने के लिए आवश्यक है। हमारा हृदय यह अपूर्व कार्य पचास, सत्तर अथवा नब्बे वर्षों तक करता रहता है। पर हृदय इतना काम कैसे करता है? हॉर्वर्ड मेडिकल स्कूल के डॉक्टर वॉल्टर केनन इसके उत्तर में कहते हैं कि बहुत से लोगों का यह खयाल है कि हृदय यह कार्य निरंतर करता रहता है। वस्तुत: हर बार की सिकुड़न के बाद हृदय को निश्चित आराम मिलता है। यह प्रति मिनिट सामान्यतया सत्तर बार धड़कता है। चौबीस घंटों में केवल नौ घंटे वह काम करता है और पंद्रह घंटे विश्राम।

गत द्‌वितीय महायुद्‌ध के दिनों में सर विंस्टन चर्चिल अपनी सत्तर वर्ष की अवस्था में ब्रिटिश साम्राज्य का युद्‌ध संचालन करते हुए प्रतिदिन सोलह घंटे कार्य करते थे। यह एक अपूर्व एवं विलक्षण बात थी। किंतु इसका रहस्य क्या था? वह प्रतिदिन सवेरे ग्यारह बजे तक बिस्तर में लेटे-लेटे ही अपना काम करते थे। वहीं वे कागजात अथवा पत्र पढ़ते, ऑर्डर लिखवाते, टेलिफोन पर बात करते तथा महत्त्वपूर्ण बैठकें बुलाते। दोपहर के भोजन के बाद वे पुन: एक घंटे के लिए सो जाते। संध्या का भोजन करने के पूर्व वे फिर दो घंटे सो जाते। उन्हें थकान मिटाने का प्रयास नहीं करना पड़ा, क्योंकि उन्होंने कभी थकान को पास फटकने तक नहीं दिया, क्योंकि वे प्राय: आराम कर लिया करते थे और इस प्रकार आधे से भी अधिक समय तक स्वस्थता एवं ताजगी के साथ काम कर पाते थे। जॉन डी. रॉकफेलर ने जीवन में दो अपूर्व रेकॉर्ड स्थापित किये थे। उन्होंने अटूट दौलत जमा की। वे अपनी सानी के संसार में पहले व्यक्ति थे और साथ ही वे अट्‌ठानवे वर्ष तक जीवित रहे। उनकी सफलता का रहस्य क्या था? सबसे प्रमुख कारण था, लंबी आयु जीने की उनकी पुश्तैनी विरासत; दूसरा कारण था हर दिन दोपहर को अपने

ऑफिस से आधा घंटे सो लेने की आदत। वे अपने ऑफिस के कोच पर लेट जाते और फिर चाहे अमेरिका का प्रेसिडेंट ही फोन पर क्यों न हो, वे न उठते।

'व्हाई बी टायर्ड' नाम की अत्यंत सुंदर पुस्तक में डेनियल डब्ल्यू. जोसेलिन बताते हैं कि 'आराम का अर्थ बेकार पड़े रहना नहीं है। आराम का अर्थ है शक्ति अर्जन।' थोड़े से आराम में भी काफी शक्ति है। केवल पाँच मिनट की झपकी ही आपकी सारी थकान दूर कर सकती है। वेसबॉल के पुराने खिलाड़ी कॉनीमैन ने मुझे बताया कि जब कभी वह दोपहर में झपकी लिए बिना खेलने जाता है, पाँच पारी तक ही खेल सकता है, किंतु यदि वह पाँच मिनट भी सो लेता है तो बिना थकान का अनुभव किये पूरा खेल खेल जाता है।

जब मैंने एलिनोर रूजवेल्ट से पूछा कि ''बारह वर्ष व्हाइट हाउस में रहकर आप थकान वाले इतने बोझिल कार्यक्रम को किस प्रकार निभा सकीं?'' तो उन्होंने उत्तर दिया कि किसी भी सभा में भाषण देने अथवा लोगों से भेंट करने के पूर्व मैं प्राय: बीस मिनट तक अपनी कुर्सी में आँखें मूँदकर आराम कर लिया करती थी।

एक बार मैंने जीन ऑटरी से उसके मेडिसन स्क्वैयर गार्डन स्थित ड्रेसिंग रूम में भेंट की। वह रेडियो का एक बड़ा सितारा था। उसने एक पलंग की ओर इशारा करते हुए कहा, ''मैं रोज दोपहर को इस पलंग पर अपने कार्यक्रम के दौरान एक घंटे विश्राम कर लेता हूँ। जब मैं हॉलिवुड में फिल्म बनाने में व्यस्त रहता हूँ तो दिन भर में करीब तीन बार एक बड़ी आराम कुर्सी पर दस मिनट के लिए सो लेता हूँ। उससे मुझे अत्यधिक स्फूर्ति मिलती है।''

एडिसन जब भी चाहता सो लेता था और इसीलिए उसमें इतनी अधिक शक्ति एवं टिके रहने की क्षमता थी।

मैंने हेनरी फोर्ड से उनकी 80वीं वर्षगाँठ के कुछ ही दिन पूर्व भेंट की थी। मैं उनकी स्फूर्ति और ताजगी को देखकर दंग रह गया। उन्होंने कहा, ''यदि बैठ सकने का अवसर हो तो मैं कभी खड़ा नहीं रहता और यदि लेट करने का मौका मिले तो बैठा नहीं रहता।''

आधुनिक शिक्षा पद्धति के पंडित होरेसमैन ने भी वृद्ध होने पर यही किया। जिन दिनों वे एंटियॉक कॉलेज के अध्यक्ष थे, अपने पलंग पर लेटकर विद्यार्थियों से भेंट करते थे।

हॉलिवुड के एक फिल्म निर्देशक को मैंने ऐसे ही उपाय का प्रयोग करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने बाद में मान लिया कि इस उपाय ने उन पर खूब असर किया। वे महाशय मेट्रो गोल्डविन मेयर के उच्च श्रेणी के निर्देशक जैक चेरटॉक थे। जिन दिनों वे मुझसे मिलने आए, एफ.जी.एम. के लघु-चित्र विभाग के अध्यक्ष थे। वे थके-माँदे एवं निर्बल थे। सभी पौष्टिक दवाएँ एवं विटामिनों का प्रयोग वे कर चुके थे, किंतु किसी से भी कोई लाभ नहीं हुआ था। मैंने उन्हें रोज आराम करने की बात सुझाई। आराम कैसा हो, इस संबंध में मैंने उन्हें बताया कि वे ऑफिस में लेटे-लेटे अपने लेखकों तथा अन्य कर्मचारियों के साथ बात करें।

जब दो वर्ष बाद मैं उनसे मिला, तो उन्होंने मुझे बताया, ''उस उपाय का मुझ पर गहरा प्रभाव पड़ा था। मेरे डॉक्टर ने भी यही सुझाव दिया है। पहले मैं लघुचित्रों के विषय में विचार-विमर्श करते समय अपनी कुर्सी पर तनकर बैठा रहता था। अब बैठकों के समय अपने ऑफिस के कोच पर आराम से लेट जाता हूँ। अब मैं अपने को बीस वर्षों की अपेक्षा अधिक स्वस्थ अनुभव करता हूँ। मैं पहले की वनिस्पत दो घंटे अधिक काम करता हूँ, किंतु थकान का अनुभव नहीं करता।''

आप पर यह सब कैसे लागू हो? यदि आप स्टेनोग्राफर हैं तो एडिसन तथा सैम गोल्डविन की भाँति ऑफिस में सो नहीं सकते और यदि आप एकाउंटेंट हैं तो अपने अधिकारियों के सामने लेटकर वित्तीय मसौदे पर विचार-विमर्श नहीं कर सकते। किंतु यदि आप किसी छोटे नगर में रहते हैं तथा दोपहर में भोजन के लिए घर जाते हैं, तो भोजन के बाद दस मिनट तक तो कम-से-कम सो ही सकते हैं। जनरल जॉर्ज सी. मार्शल भी यही किया करते थे। युद्ध के

दिनों में अमेरिकी सेना का संचालन करने में वे इतने व्यस्त रहते कि उन्हें दोपहर को ही विश्राम करना पड़ता।

यदि आप दोपहर को न भी सो सकें तो कम-से-कम संध्या के भोजन के पूर्व एक घंटे लेटने का प्रयास कीजिये। यह काफी सस्ता एवं असरकारक उपाय है। यदि आप छह-सात बजे के करीब एक घंटे तक तो सकें तो आप अधिक काम करने लगेंगे। वैसे संध्या को भोजन से पूर्व एक घंटे तक ली गई नींद और रात को केवल छह घंटों की नींद, आठ घंटे की लगातार नींद से अधिक लाभकारी होती है।

शारीरिक श्रम करने वाला व्यक्ति यदि अधिक विश्राम करे तो अधिक काम कर सकता है। बेथलेहम स्टील कंपनी में साइंटिफिक मैनेजमेंट इंजीनियर का काम करते हुए फ्रेडरिक टेलर इस कथन को आजमा चुके हैं। उन्होंने देखा कि मजदूर प्रतिदिन लगभग 12.5 टन कच्चा लोहा ट्रकों पर चढ़ाते थे और मध्या तक थक जाते थे। उन्होंने थका देने वाले सभी कारणों का वैज्ञानिक अध्ययन किया गया, तब उन्हें पता चला कि उन व्यक्तियों को प्रतिदिन 12.5 टन लोहा लादने की वनिस्पत चार गुना अधिक लोहा लादना चाहिए। टेलर ने अपने कथन को सिद्ध करने के लिए श्मिट नाम के व्यक्ति को चुना, जिसे स्टॉपवॉच के सहारे काम करना पड़ा। जो आदमी घड़ी लेकर खड़ा रहता, वह कहता, 'अब छह उठाओ...अब विश्राम करो, बैठ जाओ। अब चलो...अब बैठ जाओ।'

परिणाम क्या हुआ? श्मिट ने एक दिन में सैंतालीस छड़ें लादी जबकि दूसरा मजदूर 12.5 टन लोहा ही लाद सका। जब तक फ्रेडरिक टेलर बेथलेहम में रहा, उसकी देखरेख में तीन वर्ष तक काम करके वह कभी नहीं थका। और यह इसलिए कि थकने के पूर्व ही वह आराम कर लेता था। वह एक घंटे में लगभग 26 मिनट काम करता और 34 मिनट आराम। यद्यपि काम से अधिक वह आराम करता था, फिर भी अन्य साथियों से चार गुना अधिक काम कर लेता था। यह कोई सुनी-सुनाई बात नहीं है। आप स्वयं इस रिकॉर्ड को विक्सो टेलर द्वारा लिखित पुस्तक 'पिंसिपल्स ऑफ साइंटिफिक मैनेजमेंट' में पढ़ सकते हैं।

इसे फिर से दुहरा लूँ : वही कीजिए जो सेना में किया जाता है - आराम कीजिए। जिस तरह आपका हृदय काम करता है, उसी तरह आप भी काम कीजिए - थकने के पूर्व ही आराम की लीजिए। इससे आप अधिक काम कर सकेंगे।

❑

आपका दिमाग कभी नहीं थकता

मैं आपको एक बहुत ही विचित्र एवं सारभूत तथ्य बताने जा रहा हूँ। केवल दिमागी काम से मनुष्य कभी नहीं थकता, यह कहना बड़ा अजीबा सा लगता है। किंतु कुछ वर्ष हुए वैज्ञानिकों ने पता लगा लिया है कि कार्य-क्षमता में गिरावट लाए बिना ही मानव मस्तिष्क कहाँ तक कार्य कर सकता है। उन वैज्ञानिकों को यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि चेतनावस्था में मस्तिष्क में से जब खून गुजरता है, तब उसमें जरा भी थकान के लक्षण नहीं होते। यदि आप काम करते हुए मजदूर की रगों से खून निकाल लें तो आपको उसमें थकान उत्पन्न करने वाला एक प्रकार का विषैला पदार्थ नजर आएगा। किंतु दिन के अंत में यदि आप अलबर्ट आइंस्टीन के मस्तिष्क से खून की बूंद निकाल कर देखें तो उसमें थकान उत्पन्न करने वाला विषैला पदार्थ आपको जरा भी नहीं मिलेगा।

जहाँ तक मस्तिष्क का प्रश्न है, यह आठ अथवा बारह घंटों के कार्य के पश्चात् भी उतनी ही तीव्रता दिखाता है जितनी कार्यारंभ के समय दिखाता था। मस्तिष्क कभी नहीं थकता। फिर वह कौन सा कारण है जो आपको थकाता है?

मनोरोग चिकित्सकों का कहना है कि प्राय: थकान का मुख्य कारण हमारी भावात्मक एवं दिमागी अवस्थाएँ है। इंग्लैंड के प्रसिद्ध मनोरोग चिकित्सक जे.ए. हैडफील्ड का कहना है कि बैठे रहकर काम करने वाले पूर्ण स्वस्थ कामगार को उसके मनोवैज्ञानिक एवं भावात्मक तत्त्व के कारण ज्यादा थकान होती है।

वे कौन से भावात्मक तत्त्व हैं जो बैठक का काम करने वाले कामगार को थका देते हैं? क्या वह प्रसन्नता एवं संतोष की भावना है? नहीं, कभी नहीं। ये तो उकताहट, क्लेश, प्रशंसा का अभाव, निस्सारता, जल्दबाजी, क्षोभ तथा चिंता के भाव हैं जो उसे थका देते हैं और उसे रोग का शिकार बना देते हैं। ये उसकी उत्पादन-क्षमता कम कर देते हैं और उसे सिरदर्द देकर घर भेज देते हैं। हाँ तो, हम इसलिए बीमार होते हैं क्योंकि हमारे मनोवेग शरीर में स्नायु-तनाव उत्पन्न कर देते हैं।

मेट्रोपॉलिटन जीवन बीमा कंपनी ने थकान के बारे में लिखी एक पुस्तिका में बताया है कि कठोर कार्य से शायद ही कोई थकान उत्पन्न होती है जो अच्छी नींद और थकान से मिटाई न जा सके। चिंता, तनाव तथा मनोवेगकारक असंतुलन ही थकान के तीन मुख्य कारण हैं। प्राय: थकान का कारण शारीरिक एवं मानसिक परिश्रम न होकर ये भाव ही हैं। स्मरण रखिये कि काम करते समय मांसपेशियाँ तनी रहती हैं। उन्हें ढीला कर दीजिए और इस प्रकार महत्त्वपूर्ण कामों के लिये शक्ति की बचत कीजिये। क्या आप इस पुस्तक को पढ़ते समय भृकुटि चढ़ाये हैं? क्या आप आँखों पर कोई भार अनुभव करते हैं? क्या आप आराम से कुर्सी पर बैठे हुए हैं या कंधों को झुकाए हुए हैं? कहीं आपके चेहरे की आकृति तनी हुई तो नहीं है? यदि आपका शरीर पुराने कपड़े के गुड्डे की भाँति ढीला एवं लचीला नहीं हैं तो आप अपने में स्नायु एवं मांसपेशियों का तनाव व थकान उत्पन्न कर रहे हैं।

क्या कारण है कि हम दिमागी काम करते समय अनावश्यक तनाव महसूस करते हैं? जोसेलिन कहते हैं, ''प्राय: यह तो सभी मानते हैं कि कठोर कार्य के लिए प्रयत्न की भावना की अपेक्षा रहती है, अन्यथा वह भली-भाँति संपन्न नहीं हो पाता।'' अत: जब हम ध्यान को केंद्रित करते हैं तो हमारी भृकुटि चढ़ जाती है। हम कंधों को झुका लेते हैं। अपनी मांसपेशियों में प्रयास की अवस्था उत्पन्न करते हैं जो बिना ऐसा किए हमारे मस्तिष्क की जरा भी सहायता नहीं करती।

कितने दु:ख की बात है कि जो व्यक्ति एक पैसा भी खर्च करने की हिम्मत नहीं करते वे ही आज अपनी शक्ति को बरबाद करने पर तुले हुये हैं।

इस स्नायु-थकान का क्या इलाज है? आराम! आराम!! और आराम!!! जब आप अपना काम कर रहे हों, तब आराम करना सीखिये।

क्या यह करना आसान है? नहीं। संभवत: आपको अपने जीवन भर की सभी आदतें बदलनी पड़ें। किंतु आपका यह प्रयास लाभकारी रहेगा क्योंकि इससे आपके जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन हो जाएगा। विलियन जेम्स ने अपने निबंध 'आराम का सिद्धांत' में कहा है कि 'बुरी आदतों के कारण ही अमरीकी जीवन में तनाव का आधिक्य है, अफरातफरी है और उसकी अभिव्यक्ति में गहनता एवं वेदना है। तनाव एक आदत है और आराम करना भी एक आदत है, बुरी आदतें मिटाई जा सकती हैं और अच्छी आदतें डाली जा सकती हैं।'

आप आराम किस प्रकार करते हैं? आप इसकी शुरुआत दिमाग से कहते हैं या स्नायु से? दोनों में से किसी एक से भी आप यह शुरुआत न कीजिये। आप इसकी शुरुआत मांसपेशियों से कीजिये।

आइए, अब देखें कि मांसपेशियों से शुरुआत कैसे की जाए। मान लीजिए हम आँखों से इसकी शुरुआत करें। आप इस अनुच्छेद को पूरा पढ़ जाइये और इसके बाद पीठ के सहारे बैठ जाइये और चुपचाप आँखों से कहिए, ''शांत। शांत। अपने पर बोझ मत डालो, कड़ी नजर न करो, शांत, शांत।'' एक मिनट तक इसी को धीरे-धीरे दुहराइये।

क्या आपको पता नहीं चला कि ऐसा करने से आँखों की मांसपेशियाँ आपकी आज्ञा मानने लगती हैं? क्या आपको अनुभव नहीं हुआ जैसे कि किसी ने अपने हाथों से आपका तनाव दूर कर दिया है? यद्यपि यह विश्वास के बाहर की बात मालूम होती है। किंतु सचमुच आपने एक ही मिनट में आराम करने की कला का रहस्य एवं उसकी कुंजी प्राप्त कर ली है। आप अपने जबड़े, गर्दन, चेहरे, कंधे और सारे शरीर की मांसपेशियों के साथ भी उपुर्यक्त प्रयोग कर सकते हैं। किंतु सबसे प्रमुख आँखों की मांसपेशियाँ हैं। शिकागो विश्वविद्यालय के डॉक्टर एडमंड जेकबसन तो यहाँ कहते हैं कि यदि आप आँखों की मांसपेशियों को पूरा आराम दे सकते हैं तो आप अपने सभी संकट भूल सकते हैं। स्नायु-तनाव को दूर करने में आँखों की प्रमुखता इसलिए है क्योंकि वे शरीर द्वारा काम में लाई जाने वाली एक चौथाई स्नायु-शक्ति को नष्ट कर देती हैं। और यही एक कारण है कि इतने अधिक मनुष्य पूर्ण स्वस्थ दृष्टि के होते हुए भी 'आँखों के तनाव' से परेशान रहते हैं। वे अपने नेत्रों पर तनाव लाते हैं। प्रसिद्ध उपन्यास लेखिका विकीबाम का कथन है कि जब वह बच्ची थी, एक वृद्ध व्यक्ति से मिली थी, जिसने उसे जीवन का अत्यंत महत्त्वपूर्ण पाठ पढ़ाया। एक बार वह गिर पड़ी थी और फलस्वरूप उसके घुटने छिल गए थे और कलाई में चोट आ गई थी। वृद्ध सज्जन ने उसे उठा लिया। वह वृद्ध कभी सर्कस में विदूषक रह चुके थे। उन्होंने उसे झाड़ा-पोछा और कहा, ''तुम्हारे इस तरह चोट खा जाने का कारण यह है कि तुम कभी आराम नहीं करती। तुम्हें इस तरह से सोचना चाहिये कि तुम एक पुराने मोजे की भाँति ढीली-ढीली और लचीली हो। आजो, मैं तुम्हें आराम करने की सही विधि बता दूँ।''

उन वृद्ध सज्जन ने विकीबाम तथा अन्य बच्चों को फ्लीप-फ्लोप (नृत्य) करना तथा कुलाँचें भरना सिखाया और उससे आग्रह किया कि वह अपने को एक पुराने मसले हुए मोजे की तरह ढीला और लचीला समझे और आराम करे।

अवकाश के समय आप आराम कर सकते हैं। चाहे आप कहीं भी हों। किंतु आराम करने के लिए अपने पर जोर न डालिये। आराम सर्वथा सहज एवं तनावरहित ढंग से किया जाना चाहिए। आराम का विचार कीजिये। अपने नेत्रों तथा चेहरे की मांसपेशियों को शिथिल करने का विचार करके यह शुरुआत कीजिये। बार-बार दुहराइये, शांत...शांत...शांत और आराम। चेहरे की मांसपेशियों में शरीर के केंद्र की ओर शक्ति-प्रवाह का अनुभव कीजिये तथा अपने को एक शिशु के समान तनाव से मुक्त समझने लगिये।

सुमधुर गायिका गैली कर्की भी यही करती थी। हेलन जेप्सन ने मुझे बताया कि उसने गैली कर्की को कार्यक्रम में भाग लेने से पूर्व अपनी सभी मांसपेशियों को ढीला कर कुर्सी में आराम करते देखा है। उसका नीचे का जबड़ा तो इतना शिथिल हो जाता था कि लटक सा पड़ता था। वह एक उत्तम अभ्यास था। इससे वह रंगमंच पर आने में घबराहट का अनुभव नहीं करती थी तथा थकती भी नहीं थी।

आराम करना सीखने के लिए ये चार सुझाव देखिये-

(1) अवकाश के क्षणों में आराम कीजिए। अपने शरीर को मसले हुए मोजे की तरह ढीला और लचीला कर दीजिये। मुझे कितना शिथिल होना चाहिए, इस बात का स्मरण रखने के लिए मैं स्वयं भी एक पुराना कत्थई रंग का मोजा टेबल पर रखता हूँ। यदि आपके पास मोजा न हो तो बिल्ली को ही देख लीजिए। क्या आपने कभी धूप में सोते बिल्ली के बच्चे को उठाया है? आपने देखा होगा कि उसके शरीर के दोनों सिरे भीगे समाचार पत्र के सिरों की भाँति लटक जाते हैं। यहाँ तक कि भारतीय योगी भी कहते हैं कि आराम करने की कला सीखने के लिए बिल्ली का अध्ययन कीजिए। मैंने कभी ऐसी बिल्ली नहीं देखी जो थकी हुई हो, स्नायु विघटन की शिकार हो अथवा अनिद्रा-रोग, चिंता, एवं उदरव्रण से पीड़ित हो। यदि आप बिल्ली की तरह ही शिथिल होना सीख लें तो संभवत: इन घातक रोगों से बच जाएँ।

(2) सदैव आराम से बैठकर, जितना संभव हो काम कीजिए। स्मरण रखिये कि शरीर के तनाव से कंधे दुखने लग जाते हैं और स्नायु-थकान हो आती है।

(3) दिन में चार-पाँच बार अपने को टटोलिए और सोचिए, 'क्या मैं अपने काम को अधिक कठिन बना रहा हूँ? क्या मैं उन मांसपेशियों का उपयोग तो नहीं कर रहा हूँ, जिनकी इस काम के लिए कोई आवश्यकता नहीं है?' ऐसा करके आपको आराम करने की आदत डालने में सहायता मिलेगी और जैसा कि प्रो. डेविड हैरोल्ड फिंक का कहना है कि मनोविज्ञान को अच्छी तरह समझनेवाले दो में से हरेक व्यक्ति में यह आदत विद्यमान रहती है।

(4) दिन के अंत में अपने को टटोलकर मन-ही-मन पूछिये, ''मैं कितना थका हूँ? उसका कारण दिमागी काम नहीं बल्कि वह ढंग है जिससे मैंने वह काम किया है।'' डेनियल जोसेलिन का कथन हैं, ''मैं अपनी दैनिक सफलता थकान से नहीं आँकता, बल्कि कितना नहीं थका हूँ, इससे आँकता हूँ। जब मैं दिन के अंत में विशेष थकान अनुभव करता हूँ या क्षुब्धता मेरे स्नायु की थकावट प्रमाणित कर देती है तो बिना किसी तर्क के समझ लेता हूँ कि दिन बुरा निकला है।'' यदि प्रत्येक व्यापारी यह पाठ सीख ले तो अत्यधिक तनाव से अद्‍भुत बीमारियों के कारण मरने वालों की संख्या एकदम घट जाए तथा हम चिंता एवं थकान के कारण टूटे हुए बीमारों से सेनिटोरियम तथा पागलखानों को भरना बंद कर दें।

❑

यौवन को अक्षुण्ण बनाए रखें

गत पतझड़ के दिनों की बात है। एक दिन मेरा एक सहयोगी संसार में विलक्षण ढंग की मेडिकल कक्षाओं के एक सत्र में सम्मिलित होने के लिए हवाई जहाज द्वारा बोस्टन पहुँचा। वहाँ बोस्टन में सप्ताह में एक बार ये कक्षाएँ लगती हैं। जो बीमार इसमें भाग लेते हैं, उनकी ठीक तरह से जाँच की जाती है, तब कहीं उन्हें भर्ती किया जाता हैं। किंतु वस्तुत: उन कक्षाओं में मनोविज्ञान-चिकित्सा संबंधी व्याख्यान ही होते हैं यद्यपि आधिकारिक रूप से यह कक्षा व्यावहारिक मनोविज्ञान की कक्षा कहलाती है। किंतु इसका वास्तविक उद्‌देश्य उन लोगों को स्वस्थ करना है जो चिंता से बीमार हैं। उन बीमारों में अधिकांश असंतुलित मनोवेगों वाली गृहिणियाँ होती हैं।

चिंतित लोगों के लिए थे कक्षा कैसे आरंभ हुई। डॉ. जोसेफ एच. प्रैट सर विलियम ओसलर के शिष्य थे, उन्हें विदित हुआ कि बोस्टन डिस्पेंसरी में आने वाले बहुत से रोगियों में शारीरिक दृष्टि से कोई व्याधि नहीं होती, फिर भी उनमें वे सभी लक्षण वस्तुत: विद्यमान रहते हैं जो शरीर में हो सकते हैं - एक स्त्री के हाथ आर्थराइटिस से इतने अपंग हो गए थे कि उससे कोई काम नहीं होता था। दूसरी स्त्री उदर-कैंसर के तीन लक्षणों से पीड़ित थी। तीसरी स्त्री सिरदर्द, पीठ के दर्द तथा अन्य अनिश्चित रोगों से पीड़ित थी। लंबे अरसे से चली आने वाली थकान से वह चूर थी। उसे सचमुच पीड़ा होती थी। किंतु सर्वांगी मेडिकल परीक्षण के बाद ज्ञात हुआ कि उन स्त्रियों में शारीरिक दृष्टि से कोई व्याधि नहीं थी। बहुत से दकियानूसी डॉक्टर इस को कोरी कल्पना या दिमागी खुराफात कहेंगे। किंतु डॉक्टर प्रैट ने महसूस किया कि रोगियों से यह कहना कि घर जाओ और अपनी पीड़ा को भूल जाओ, व्यर्थ है। वे जानते थे कि उन स्त्रियों में से बहुत सी बीमार होना नहीं चाहती थीं। यदि अपनी व्याधियों को भूलना इतना सरल होता तो वे स्वयं ही भूल जातीं। फिर क्या किया जाता?

उन्होंने अपनी कक्षा खोली। बहुत से मेडिकल क्षेत्र के लोगों को इसकी सफलता पर संदेह हुआ। किंतु कक्षा ने खुद काम कर दिखाया। कक्षा की शुरुआत हुए अठारह वर्ष हुए हैं और इस अर्से में हजारों बीमार कक्षा में उपस्थित रहकर स्वास्थ्य लाभ कर चुके हैं। कुछ बीमार तो वर्षों से इस कक्षा में उपस्थित रहते आ रहे हैं, उसी निष्ठा से जैसे कि वे चर्च में जाते हैं। मेरे सहयोगी ने एक महिला से बातचीत की, जो वर्षों से बराबर उन कक्षाओं में उपस्थित रहती आई है। उसने बताया कि जब वह पहली बार क्लीनिक में गई, उसे पूर्ण विश्वास हो गया था कि उसे गुर्दे एवं हृदय की कुछ बीमारी है। वह इतनी चिंतित एवं तनावपूर्ण अवस्था में थी कि कभी-कभी उसे दिखाई तक नहीं देता था और आँखों के आगे अँधेरा छा जाता था। किंतु आज वह प्रसन्नचित्त है। उसमें जीवन का विश्वास है। और जब मैंने उसे देखा, उसका स्वास्थ्य भी उत्तम था। उसकी गोद में उसका पौत्र सो रहा था। पर लगता था, मानो उसकी उम्र चालीस के लगभग ही हो। उसने कहा, मैं इतनी चिंतित रहती थी कि अधिक जीना नहीं चाहती थी। किंतु इस क्लीनिक में आने पर मुझे चिंता की निस्सारता ज्ञात हुई। मैंने चिंता छोड़ दी। मैं ईमानदारी से कहती हूँ कि मेरा जीवन अब सुखी है।

कक्षा के मेडिकल सलाहकार डॉ. रोस हिल्फर्डिंग ने कहा कि उसकी राय में चिंता से हल्का होने का एक उत्तम उपाय यह है कि आप अपने कष्टों को अपने विश्वस्त व्यक्ति से कह डालें। हम इस प्रणाली को 'केथारसिस' कहते हैं। उसने बताया, जब रोगी यहाँ आते हैं तो वे अपने कष्टों को विस्तार से कह डालते हैं और इस प्रकार उन्हें अपने दिमाग से निकाल बाहर करते हैं। चिंताओं को लेकर उस पर सोचते बैठने और अपने तक ही रखने से स्नायु-तनाव प्रबल हो जाता है। हमें अपने कष्टों तथा चिंताओं को एक-दूसरे के साथ बाँटना चाहिये। हमें सोचना चाहिये कि संसार में कोई ऐसा भी हो सकता है जो हमारी बातें सुनने तथा समझने को तैयार हो। मेरे सहयोगी ने देखा था

कि अपने कष्टों को दूसरों के सामने व्यक्त करके एक महिला को कितनी शक्ति प्राप्त हुई थी। उसकी अपनी घर-गृहस्थी की चिंताएँ थीं। जब उसने बात आरंभ की, वह बड़ी उत्तेजित थी किंतु धीरे-धीरे बातचीत के दौरान में वह शांत हो गई और अंत में तो मुस्कराने भी लगी थी। तो क्या उसकी समस्या सुलझ चुकी थी। नहीं, वह इतनी सरल कहाँ थी। उसके व्यवहार में परिवर्तन इसलिए हुआ कि वह अपना दु:खड़ा दूसरे को सुना सकी तथा दूसरे की सलाह एवं सहानुभूति प्राप्त कर सकी। शब्दों में घाव भरने की बड़ी शक्ति है और इसीलिए उसमें वह परिवर्तन आया था।

कुछ हद तक मनोविश्लेषण शब्दों की घाव भरने की शक्ति पर निर्भर करता है। फ्रॉयड के समय में ही मनोविश्लेषकों को यह बात विदित हो गई थी कि यदि मनुष्य दूसरों को अपनी बात कह सके तो उसे आंतरिक चिंताओं से कुछ शांति मिल सकती है और यह इसलिए कि अपनी बात दूसरों को कहकर संभव है हमें अपने कष्टों के विषय में ठीक-ठीक ज्ञान हो जाए और हम उनका सही रूप जान सकें। यों, इस विषय में पूरा-पूरा उत्तर किसी के पास नहीं है, किंतु हम सभी जानते हैं कि अपनी बात को कह देने से जी एकदम हल्का हो जाता है।
अत: भविष्य से जब कभी हम मानसिक संकट में हों, हमें चाहिये कि अपनी बात उगल देने के लिये अपने आसपास किसी को खोज लें। मेरा मतलब यह नहीं कि आप हरेक के सामने अपना दुखड़ा रोते फिरें या शिकवा-शिकायत करने लगें। मैं यह भी नहीं कहता कि अपनी कमजोरी दूसरों को बताकर आप अपने लिए खतरा बन जाएँ। आपको यह करना चाहिये कि एक विश्वासपात्र व्यक्ति को खोज लें और उसे अपनी सारी बातें कह दें। चाहे वह आपका संबंधी हो, डॉक्टर हो, वकील हो अथवा कोई धर्मगुरु हो। उस व्यक्ति से मिलकर कहिये, ''मुझे आपकी सलाह चाहिये। मेरी एक समस्या है और मैं आशा करता हूँ कि आप इसे ध्यान से सुनेंगे। संभव है आप मुझे उचित राय दे सकें। संभव है आप इसे उस सही दृष्टिकोण से देख सकें, जिससे मैं न देख पाता होऊँ और यदि आप इस संबंध में कुछ भी न कर सकें तो भी यदि आप मेरी बातों को ध्यान से सुन लेंगे तो मुझे बड़ी सहायता मिलेगी।''

यदि आपको ऐसा कोई व्यक्ति मिले ही नहीं जिसके सामने आप अपना मन खोल सकें तो किसी एन.जी.ओ. का सहारा लीजिए।

अपनी बात कह दो, यह चिंता की मुख्य चिकित्सा पद्धति है। इसका प्रयोग एक गृहिणी की हैसियत से आप अपने घर बैठे ही कर सकती हैं-
(1) अपने पास एक डायरी रखिये जिसे आप मन बहलाने अथवा प्रेरणा लेने के लिए पढ़ सकें। उस डायरी में आप कविताएँ, छोटी-छोटी प्रार्थनाएँ तथा उद्धरण, जो व्यक्तिगत रूप से आपके हृदय को छू गये हों, लिख लीजिए। जिस दिन आपको क्लेष हो, आप उसे मिटाने के लिए इस डायरी से उपचार प्राप्त कर सकते हैं। ऐसी डायरी आप में आध्यात्मिक शक्ति का संचार करेगी।
(2) दूसरों के दोषों पर बहुत अधिक ध्यान न दीजिए, यह ठीक है कि आपके पति के दोष हैं। यदि वह संत होता तो आप से कभी विवाह ही नहीं करता। उस कक्षा में एक स्त्री ऐसी थी जो दिन-ब-दिन झगड़ालू एवं गालदराज होती जा रही थी। उसके चेहरे पर कटुता उभरने लगी थी। उसे एक छोटा सा सवाल पूछा गया, ''यदि तुम्हारा पति मर जाए तो तुम क्या करो?'' इस विचार मात्र से उसे एक ऐसा धक्का लगा कि तत्काल ही वह बैठकर अपने पति की अच्छाइयों की सूची तैयार करने में लग गई। उसने खासी बड़ी सूची तैयार कर ली। आप भी, जब कभी आपको लगे कि आपका पति एक कंजूस और दुष्ट है, इस प्रयोग का उपयोग कीजिए। संभव है कि उसके गुण जान लेने के बाद आप अनुभव करने लगें कि आप उसे चाहती हैं।

(3) अपने पड़ोस में खूब दिलचस्पी लीजिए। पड़ोस में रहने वाले लोगों के साथ मित्रता का व्यवहार कीजिए। एक बीमार स्त्री किसी मित्र के अभाव में अपने को एकाकी अनुभव करती थी, इसलिए उसे कहा गया कि अब से जिस व्यक्ति को वह देखे, उसके विषय में एक कहानी तैयार करने का प्रयास करे। एक गाड़ी में घूमकर उसने मुहल्ले के लोगों की पृष्ठभूमि तथा उनके वातावरण के विषय में सोचना आरंभ किया। वह उनके जीवन के विषय में कल्पनाएँ करने लगी। परिणाम यह हुआ कि वह कहीं भी लोगों से बातें करने लग जाती। अपने इसव् यवहार से आज वह एक आकर्षक, प्रसन्न एवं फुर्तीली स्त्री बन गई है और पीड़ा से मुक्त है।

(4) सोने के पूर्व दूसरे दिन के कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार कर लीजिए। यह बहुत जरूरी है क्योंकि अनेक स्त्रियाँ उन घरेलू कामों से जो कभी समाप्त ही नहीं होते, परेशान एवं थकी-हारी रहती हैं। उनके काम का कभी अंत ही नहीं आता। समय का भूत उन पर हर वक्त सवार रहता है। इस उतावल और चिंता की दशा को मिटाने के लिए वे दूसरे दिन के लिए रात ही को कार्यक्रम निश्चित कर लें। इससे वे अधिक काम पूरा कर सकती हैं और वह भी कम थकान से। उनमें गर्व एवं सफलता की भावना का उदय भी होता है। आराम तथा बनाव-श्रंगार करने के लिए भी समय मिल जाता है। प्रत्येक स्त्री को दिन में कुछ समय बनाव-श्रंगार के लिए निकालना ही चाहिये ताकि वह आकर्षक बन सके। मेरा अपना विचार है कि जब तक स्त्री अपने को आकर्षक महसूस करती रहे, उसे घबराने की कोई आवश्यकता नहीं।

(4) अंत में तनाव तथा थकान से दूर रहिये आराम कीजिए! आराम! नहीं तो तनाव एवं थकान के कारण आप जल्दी ही वृद्ध दीखने लगेंगी और आपका आकर्षण एवं सौंदर्य नष्ट हो जाएगा।

शारीरिक विश्राम पर इतना बल क्यों दिखा जाता है। इसलिए कि डॉक्टरों की भाँति क्लीनिक भी जानता है कि यदि हमें लोगों को चिंता से छुटकारा दिलाना है तो उन्हें आराम देना होगा।

एक गृहिणी के नाते आपको आराम जरूर करना चाहिये। इससे आपको बहुत बड़ा लाभ होगा और वह यह है कि आप जब और जहाँ चाहे लेट सकेंगी। फिर चाहे फर्श पर ही क्यों न लेटना हो! आश्चर्य की बात तो यह है कि लचीले गद्दे पर आराम करने की वनिस्पत कठोर फर्श पर आराम करना अधिक लाभदायक है। इससे संघर्ष शक्ति की वृद्धि होती है तथा रीढ़ की हड्डी को लाभ पहुँचता है।

अब मैं आपको कुछ अभ्यास बताता हूँ जिन्हें आप घर में ही कर सकते हैं। एक सप्ताह तक उन्हें कीजिए और देखिये कि आपकी आकृति तथा मन पर उनका कैसा प्रभाव पड़ता है।

(1) जब कभी भी आप थकान महसूस करें, फर्श पर तनकर सीधे लेट जाइये। यदि आप चाहें तो गोल-गोल लुढ़क भी सकते हैं। दिन में दो बार यह अभ्यास कीजिए।

(2) अपनी आँखें बंद कर लीजिये। जैसा कि प्रोफेसर जॉन्सन ने कहा है, आप भी कहिये, ''सूरज सिर पर चमक रहा है। आसमान नीला और स्वच्छ है। शांत प्रकृति संसार के नियंत्रण में बनी हुई है और मैं प्रकृति की संतान के नाते विश्व सापेक्ष ही हूँ।'' इसके अलावा यदि आप प्रार्थना करें तो और भी अच्छा।

यदि आप कुछ पकवान बना रहे हैं अथवा किसी कार्य में व्यस्त हैं और लेट नहीं सकते तो कुर्सी पर बैठे-बैठे अभ्यास करने पर भी आप उतना ही लाभ प्राप्त कर सकते हैं। कठोर और खड़ी कुर्सी आराम के लिए उत्तम रहती है। आप मिस्र की किसी प्रतिमा की भाँति कुर्सी पर सीधे बैठ जाइये और अपनी हथेलियों को जंघाओं पर टिका दीजिए। तब धीरे से पाँव के पंजे को कड़ा और ढीला कीजिये। टाँगों की मांसपेशियों को कड़ा और ढीला कीजिये। इस क्रिया को गर्दन तक शरीर की सभी मांसपेशियों के साथ कीजिये। तब अपने सिर को गेंद की तरह दाएँ-बाएँ लुढ़कने दीजिए और मांसपेशियों को ढीला करने का विचार कीजिये।

(3) अपने स्नायु-तंतुओं को धीरे-धीरे, दृढ़ता के साथ साँस लेकर शांत कीजिये। स्नायु-तंतुओं को शांत करने के लिये श्वास-प्रश्वास का ताल-मेल अत्यंत उत्तम पद्धति है। इस विषय में भारतीय योगियों के विचार बड़े सही हैं।

(4) अपने चेहरे की झुर्रियों एवं विकृति का विचार कीजिये तथा तनाव को दूर कर उसे सौम्य बनाइये। आपकी भृकुटी के बीच की तथा मुँह के दोनों ओर की चिंता-जनित सलवटों को ढीली कर लीजिये। दिन में दो बार ये प्रयोग कीजिये और संभव है, उसके बाद अपने चेहरे की मलिनता मिटाने के लिए आपको सौंदर्य प्रसाधनों की दुकान पर न जाना पड़े। यह भी संभव है कि शलवटें विलिन हो जाएँ।

❑

चिंतानिरोधी व्यावहारिक आदतें

अपनी डेस्क पर उन्हीं कागजातों को रखिये जिनकी समस्याओं का हल अभी बाकी हो। बाकी को वहाँ से हटा दीजिये। शिकागो तथा उत्तरी-पश्चिमी रेलवे के प्रधान रोलैंड एल. विलियम का कथन है कि 'जिस व्यक्ति की डेस्क पर कागजों का ऊँचा ढेर लगा पडा हो, वह यदि वहाँ उन कागजों को ही रखे, जिनकी समस्याओं का हल उसे अभी, इसी वक्त, करना हो और बाकी को वहाँ से हटा दे तो उसका काम अधिक सरल हो जाए। मैं इसे उत्तम घरेल-व्यवस्था कहता हूँ और यह कार्यकुशलता प्राप्त करने की पहली सीढ़ी है।'

यदि आप वाशिंग्टन डी.सी. स्थिति कांग्रेस पुस्तकालय देखने जाए तो आपको वहाँ छत पर कवि पोप के लिखे ये शब्द दिखेंगे, 'व्यवस्था ईश्वर का प्रमुख नियम है।'

उसी प्रकार व्यवस्था काम-काज के लिये भी प्रमुख होनी चाहिये। औसतन एक व्यापारी की डेस्क उन कागजों से भरी रहती है जिन्हें उसने कई सप्ताह बीत जाने पर भी नहीं देखा। न्यूऑर्लियंस समाचार पत्र के प्रकाशक ने मुझे एक बार बताया कि जब उसके सेक्रेटरी ने अपनी एक डेस्क से कागजात हटवाए तो उनके नीचे एक टाइपराइटर निकला, जो दो वर्षों से गुम था।

जवाब लिखे बिना पड़े ढेर सारे पत्रों, रिपोर्टों और मेमों से भरी टेबल को देखना ही घबराहट, तनाव तथा चिंता बढ़ाने के लिए पर्याप्त है। दुनिया भर का काम और समय की कमी की चिंता से तनाव एवं थकान ही नहीं बढ़ते किंतु उससे रक्तचाप, हृदयरोग तथा उदरव्रण की व्याधियाँ भी उत्पन्न हो सकती हैं।

पेंसिलवेनिया विश्वविद्यालय के ग्रेजुएट स्कूल ऑफ मेडिसिन के प्राध्यापक डॉक्टर जॉन एच. स्ट्रोक ने अमेरिकन मेडिकल एसासिएशन के राष्ट्रीय अधिवेशन में एक निबंध पढ़ा, जिसका शीर्षक 'फंक्शनल न्यूरोसिस एज कॉम्प्लीकेशंस ऑफ ऑर्गेनिक डिजीज' था। उस निबंध में डॉक्टर ने रोगी की मानसिक अवस्था के किस पहलू की जाँच पहले की जाए, इस शीर्षक के अंतर्गत ग्यारह मुद्दों की एक सूची तैयार की थी। उस सूची की पहली बात निम्नलिखित है-

''रोगी की अनिर्वायता तथा कर्तव्य की भावना को परखा जाए तथा उसके उन अगणित कार्यों की जानकारी की जाए जिनको किये बिना उसका छुटकारा नही।''

किंतु, केवल अपनी डेस्क साफ करने तथा निर्णय करने की यह प्राथमिक कार्य-प्रणाली ही आपका बोझ तथा हनुमान की पूँछ की तरह बढ़ते काम को करने की अनिवार्यता को कैसे दूर कर सकती है? डॉक्टर विलियम एल. सेडलर जो एक प्रसिद्ध मन:चिकित्सक हैं; अपने एक बीमार के विषय में बताते हैं कि किस प्रकार इस साधारण पद्धति के प्रयोग से वह स्नायु विघटन से बच सका। वह व्यक्ति शिकागो की एक बड़ी फर्म में अधिकारी था। डॉक्टर सेडलर के कार्यालय में आया उस समय वह तनाव, घबराहट तथा चिंता की अवस्था में था। वह जानता था कि वह नर्वस बेकडाउन की ओर बढ़ रहा है, किंतु वह अपना काम नहीं छोड़ सका और उसे सहायता की आवश्यकता पड़ गयी।

डॉक्टर सेडलर ने कहा कि जब वह मुझे अपनी कहानी सुना रहा था, एकाएक मेरे टेलीफोन की घंटी बज उठी। अस्पताल से बुलावा था। मैंने बात को टालने के बजाय तत्काल निर्णय कर लेने के लिये समय लिया। जहाँ तब संभव होता है, मैं हमेशा ही प्रश्नों को जहाँ-का-तहाँ हल कर लेता हूँ। जैसे ही मैंने रिसीवर रखा कि घंटी फिर बज उठी। इस बार मामला जरूरी था, जिसके विषय में बातचीत करने में मुझे देर लगी। तीसरी बार बाधा उस समय पड़ी जब मेरा एक सहयोगी, असाध्य रूप से बीमार व्यक्ति के विषय में राय लेने मेरे ऑफिस में आ गया। जब मैं

उसके साथ बातचीत समाप्त कर चुका तो मैं अपने से मिलने आए हुए व्यक्ति की ओर मुड़ा और उसे इतनी देर प्रतीक्षा कराने के लिए क्षमा माँगी। किंतु अब उसके चेहरे पर ताजगी दीखने लगी थी। उसके चेहरे का रंग ही बदल चुका था।

उस व्यक्ति ने सेडलर ने कहा, ''क्षमा माँगने की कोई बात नहीं। इन दस मिनटों में मैं अपनी भूल ज्ञात कर चुका हूँ। मैं अब ऑफिस जाकर अपनी कार्य पद्धति बदलना चाहता हूँ। किंतु जाने के पूर्व क्या मैं आपकी डेस्क का निरीक्षण कर सकता हूँ?''

डॉक्टर सेडलर ने अपनी डेस्क के दराज खोल दिये। सब खाली थे। सिर्फ कुछ दवाहयाँ आदि थीं। बीमार ने पूछा, ''आप अपने अधूरे काम के कागजात आदि कहाँ रखते हैं।''

डॉक्टर ने उत्तर दिया-''मेरा कोई काम अधूरा नहीं है।''

''और वे पत्र कहाँ हैं, जिनके उत्तर देने बाकी है?''

''उत्तर देने बाकी है? नहीं, यह मेरा नियम नहीं। मैं किसी भी पत्र को उसका उत्तर लिखे बिना नहीं रखता। मैं उसी समय अपने सेकेटरी को उसका उत्तर लिखवा देता हूँ।''

छह सप्ताह बाद उस अधिकारी ने डॉक्टर सेडलर को अपने कार्यालय में बुलाया। अब वह बदल चुका था और साथ ही उसकी डेस्क भी। उसने अपनी डेस्क के दराज खोलकर बताया कि उसमें कोई भी काम अधूरा नहीं रखा हुआ था। छह सप्ताह बाद उस अधिकारी ने कहा, ''दो अलग-अलग कार्यालय में मेरी तीन अलग-अलग टेबल थीं और मैं काम के बोझ से काफी दबा हुआ था। उसे कभी भी समाप्त नहीं कर पाता था। आपसे बात करने के बाद लौटकर मैंने एक गाड़ी भर कागजात तथा कई पुराने मामलों को निपटा दिया। अब मैं एक ही डेस्क पर काम करता हूँ और अपने मामलों को तत्काल निपटा देता हूँ। किसी भी काम को अधूरा नहीं छोड़ता कि बाद में वह मेरे लिये परेशानी तथा चिंता का कारण बन जाए। किंतु सबसे अधिक आश्चर्य की बात तो यह है कि अब मैं पूर्णतया स्वस्थ हो गया हूँ। अब मेरे स्वास्थ्य में कोई खराबी नहीं है।''

अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश चार्ल्स इवांस ह्यूज का कथन है कि 'लोग अधिक काम करने से कभी नहीं मरते, वे शक्ति अपव्यय और चिंता के कारण मरते हैं। वे कभी भी अपने काम को पूरा नहीं कर पाते इसलिए सदा चिंतित रहते हैं।'

अपने कार्य का क्रम उसके महत्त्व के अनुरूप निर्धारित कीजिये।

राष्ट्रव्यापी 'सिटीज सर्विस कंपनी' के संस्थापक हेनरी एल. डॉहर्टी का कहना है कि चाहे वह कितनी ही तनख्वाह देने को तैयार क्यों न हो, उसे लोगों में दो प्रकार की योग्यताएँ पाना बहुत ही कठिन लगा। वे अमूल्य योग्यताएँ हैं : सोचने की योग्यता तथा कार्य के अनुरूप काम करने की क्षमता।

चार्ल्स लुकमेन, जिसने सामान्य रूप से अपनी जीविका आरंभ की थी, बारह वर्ष की अवधि में ही ''पोप्सोडेंट'' कम्पनी का प्रधान बन गया। उसका वेतन एक लाख डॉलर प्रतिवर्ष था और दूसरे अलावा वह 10 लाख डॉलर और भी कमा लेता था। उसका कथन है कि उसकी सफलता का कारण वे दो योग्यताएँ हैं जिन्हें लोगों में पाना हेनरी एल. डॉहर्टी के अनुसार प्राय: असंभव हैं। चार्ल्स लुकमेन ने कहा, ''जहाँ तक मुझे स्मरण है, मैं सवेरे 4 बजे उठता आया हूँ, क्योंकि उस समय मैं ठीक तरह सोच सकता हूँ। ठीक तरह से सोच लेने के बाद अपना दैनिक कार्यक्रम बना लेता हूँ। अपने कार्यक्रम की योजना मैं उसके महत्त्व के अनुरूप बनाता हूँ।''

अमेरिका में बीमा का अत्यंत सफल कारोबार करनेवाला फ्रैंकलिन बैटगर आने वाले दिन का कार्यक्रम बनाने के लिए सवेरे चार बजे तक नहीं ठहरता। वह तो रात ही को, दूसरे दिन एक निश्चित रकम तक बीमा बेचने की योजना

तैयार कर लेता है। यदि वह उतनी रकम तक अपना व्यापार नहीं भी कर पाता है तो उसे दूसरे दिन में जोड़ लेता है।

अपने अनुभव से मैं जानता हूँ कि काम का क्रम उसके महत्त्व के अनुरूप निश्चित करना संभव नहीं होता, किंतु मैं यह भी जानता हूँ कि पहला काम पहले कर लेने की पद्धति निश्चित ही उत्तम है, वनिस्पत इसके कि जो भी काम संयोग से सूझे उसे हाथ में ले लिया जाए। जॉर्ज बर्नार्ड शॉ ने पहला काम पहले करने की पद्धति का कोई कठोर नियम नहीं बना रखा था। यदि यह ऐसा करते तो संभवत: एक लेखक की दृष्टि से असफल रहते और जीवन भर एक बैंक के कैशियर ही बने रहते। उन्होंने प्रतिदिन पाँच पृष्ठ लिखने का निश्चय कर रखा था। उनके उस निश्चय और दृढ़ता ने ही उन्हें जीवन में सफलता प्रदान की। वे अपने जीवन के नौ निराशाजनक वर्षों में भी पाँच पृष्ठ प्रतिदिन के हिसाब से लिखते रहे, यद्यपि उन नौ वर्षों में उन्होंने केवल तीस डालर ही कमाये। इस हिसाब से दैनिक आय एक पेनी के लगभग होती है।

यदि आपकी कोई समस्या हो और निर्णय करने के लिये आवश्यक तथ्य मौजूद हों तो तत्काल ही समस्या को हल कर लीजिए। उसे कल के लिये न छोड़िये।

मेरे एक भूतपूर्व विद्यार्थी स्वर्गीय एच.पी. हॉवैल ने बताया कि ‘जब वह यू.एस. स्टील के डायरेक्टर्स बोर्ड का सदस्य था, बोर्ड की बैठकें प्राय: लंबी हुआ करती थीं। कई समस्याओं पर विचार-विमर्श होता था किंतु फैसले बहुत कम किये जाते थे। परिणाम यह होता कि बोर्ड के प्रत्येक सदस्य को घर अध्ययन करने के लिए कागजातों का बड़ा पुलिंदा ले जाना पड़ता।

अंत में हॉवैल ने बोर्ड डायरेक्टर्स से एक बार में एक समस्या हाथ में लेकर उसको निबटाने का अनुरोध किया ताकि देर अथवा टालमटोल न हो, चाहे वह निर्णय अतिरिक्त जानकारी मालूम करने के लिए हो, चाहे कुछ करने या न करने के लिये हो, किंतु दूसरी अवस्था पर पहुँचने से पहले, पहले की समस्या पर निर्णय अवश्य ले लिया जाए। हॉवैल ने मुझे बताया कि इसका परिणाम अत्यंत आशाजनक एवं उत्साहवद्र्धक रहा। धीरे-धीरे सूची साफ हो गई और रोज के लिए कागजाता कम हो गये। अब सदस्यों को कागजातों के पुलिंदे घर नहीं ले जाने पड़ते और उनकी समस्याओं के लिए किसी प्रकार की चिंता नहीं रहती। यह नुस्खा यू.एस. स्टील के डायरेक्टरों की मंडली के लिये ही नहीं, बल्कि आपके और मेरे लिए भी उपयोगी है।

काम को व्यवस्थित कीजिये, उसका सम्यक् वितरण कीजिये तथा उसका निरीक्षण कीजिये।

बहुत से व्यवसायी असमय ही मृत्यु के ग्रास बन जाते हैं क्योंकि वे अपने काम और अपनी जिम्मेदारियों को बाँटना नहीं सीखते और हर काम को स्वयं करने पर जोर देते हैं। परिणाम यह होता है वे बारीकियों और उलझनों में फँस जाते हैं। वे उतावल, चिंता, शोक और तनाव की भावना से घिर जाते हैं। अपनी जिम्मेदारियों को बाँटना बड़ा कठिन काम है। मैं जानता हूँ, क्योंकि मेरे लिये यह कार्य अत्यंत कठिन था। अनुभव के आधार पर मैं जब भी जानता हूँ कि गलत आदमियों को कार्य सौंप देने से कितनी बरबादी हो सकती है। यद्यपि अपने काम को बाँटना कठिन है फिर भी अफसर को यदि चिंता, तनाव और थकान से दूर रहना है, तो उसे यह करना ही होगा।

जिस व्यवसायी को अपने व्यवसाय के कामों को बाँटना, उसका निरीक्षण करना तथा उन्हें व्यवस्थित करना नहीं आता, वह 50 अथवा 60 की अवस्था में ही हृदय रोग का शिकार बन जाता है। यह हृदय रोग चिंता और तनाव के कारण है। यदि आपको कोई प्रमाण चाहिये तो अपने स्थानीय अखबारों में मौत की खबरों में पढ़ लें।

❑

उकताहट को रचनात्मकता में बदलें

थकान के मुख्य कारणों में उकताहट या बोरियत एक है। उदाहरणार्थ एलिस ही की बात लीजिये। एलिस एक स्टेनोग्राफर है जो हमारे मुहल्ले में रहती है। एक रात वह नितांत थकी हुई घर लौटी। उसके व्यवहार में थकावट नजर आती थी। उसे थका दिया गया था। उसके सिर में दर्द था। वह इतनी थक गई थी कि खाने के पूर्व ही सो जाना चाहती थी। उसकी माँ ने बड़ी मिन्नत की, तब कहीं जाकर वह खाने के लिये बैठी। इतने में टेलीफोन की घंटी बजी। उसके मित्र का टेलिफोन था। उसने उसे नृत्य के लिए आमंत्रित किया था। एकाएक उसकी आँखें चमक उठीं और उसमें ताजगी आ गई। वह ऊपर भागी। अपना नीला गाउन पहना। सवेरे तीन बजे तक उसने नृत्य किया और जब वह घर लौटी तब उसमें थकावट लेशमात्र भी नहीं थी। वस्तुत: वह इतनी स्वस्थ एवं प्रसन्न थी कि सो भी नहीं सकी।

तो क्या एलिस आठ घंटे पूर्व इतनी थकी थी, जितनी कि अपने व्यवहार से लगती थी? हाँ, सचमुच वह थकी हुई थी। इसलिए कि वह अपने काम से ऊब गई थी और साथ ही अपने जीवन से भी। एलिस के समान ही और भी लाखों प्राणी हैं। हो सकता है कि आप भी उनमें से एक हों।

जब हम कोई रुचिकर एवं उत्साहवर्धक कार्य कर रहे होते हैं तो कदाचित् ही थकते हैं। उदाहरणार्थ हाल ही में मैं लुई झील के पास कैनेडियन रॉकीज नामक स्थान पर अपनी छुट्टियाँ बिताने गया था। वहाँ मैंने कई दिन बिताए। क्रीक के आसपास मैं मछलियाँ मारता था, सिर तक ऊँची-ऊँची घास में अपना रास्ता बनाते तथा रास्ते में पड़े लकड़ी के लट्ठों से टकराता चलता था। दिन के आठ घंटे इसी प्रकार बिता देता फिर भी मैं थकान का अनुभव नहीं करता था। क्यों? इसलिये कि मुझ में जोश था और खुशी थी। मुझ में एक उच्च सिद्धि की भावना थी; किंतु मान लीजिये मछलियाँ मारते मैं थक जाता! तो जानते हैं मुझे कैसा लगता? मुझे इतनी थकान लगती जितना कि सौ फुट की ऊँचाई पर चढ़ने का कठोर परिश्रम करके भी नहीं लगता।

पहाड़ की चढ़ाई करते-करते मनुष्य इसलिए थकता है कि वह चढ़ते-चढ़ते उकता जाता है। जितना वह उकताहट से थकता है उतना कठोर परिश्रम करके भी नहीं थकता।

आप दिमागी काम करके शायद ही कभी थकें। यह बात दूसरी है कि आप आवश्यक मात्रा में काम करने के पहले ही थक जाएँ। उदाहरणार्थ, गत सप्ताह के किसी दिन को याद कीजिये, जब आपके काम में निरंतर बाधा पड़ती रही हो, पत्रों का उत्तर न दिया जा सकता हो, लोगों से समय देकर भी न मिल सके हों, कुछ यहाँ अड़चन हो गई हो, कुछ वहाँ काम गड़बड़ा गया हो, या फिर बिना काम किये ही भिन्नाया सिर लिये थके-माँदे घर लौटे हों।

इसके बाद एक ऐसे दिन की याद कीजिये जब ऑफिस में जब काम ठीक-ठाक रहा हो, आपने पहले दिन से चालीस गुना अधिक काम किया हो और फिर भी आप तरो-ताजा घर लौटे हों। (मुझे भी ऐसे अनुभव हुए हैं।)

इस प्रकार आपको पता चलेगा कि थकान काम से नहीं होती, बल्कि चिंता, नैराश्य और रोष से होती है।

सोचिये कि आपकी अपने काम में रुचि है और इस प्रकार का विचार आपकी रुचि को वास्तविकता प्रदान कर देगा। उससे आपकी थकान, तनाव और चिंतायें कम हो जाएँगी।

कुछ वर्षों पूर्व हॉर्लन ए. हॉवर्ड ने एक ऐसा सिद्धांत निश्चित किया कि जिसने उसके जीवन को एकदम ही बदल दिया। उसने अरुचिकर काम को भी रुचिकर बनाने का निश्चय कर लिया। उसका काम सचमुच ही ऊबा देनेवाला था। जैसे बर्तन धोना, गल्ले की टेबल को साफ करना और हाईस्कूल के भोजन करने के कमरे में आइसक्रीम की प्यालियाँ जमाना - वह भी उस समय जबकि अन्य लड़के गेंद खेलते होते अथवा लड़कियों के

साथ दिल्लगी करते। हॉवर्ड को अपने कार्य से घृणा थी, किंतु उसे उस काम पर जमे रहना था और इसलिये उसने आइसक्रीम के विषय में अध्ययन करने का निश्चय किया। आइसक्रीम कैसे बनती है? क्या-क्या चीजें इसमें मिलाई जाती हैं? कुछ आइसक्रीम बढ़िया और कुछ घटिया किस्म की क्यों होती हैं? उसने आइसक्रीम की रासायनिकता का अध्ययन किया और भोजन आदि बनाने के काम में प्रवीण हो गया। वह व्यंजन तैयार करने में इतनी अधिक रुचि लेने लगा कि मेसाच्युसेट्स स्टेट कॉलेज में भर्ती हो गया और पाक-विज्ञान में शिक्षण प्राप्त किया। जब न्यूयॉर्क के 'कोको एक्सचेंज' ने कोको के प्रयोग पर उत्तम निबंध 'कोको और चॉकलेट' लिखने के लिये 100 डॉलर का इनाम कॉलेज के विद्यार्थियों के लिये घोषित किया, तब जानते हैं वह इनाम किसे मिला? हॉर्लन हॉवर्ड को।

जब उसे कहीं रोजगार पाना कठिन लगा तो उसने मेसाच्युसेट्स के अपने मकान के तहखाने में एक प्राइवेट प्रयोगशाला खोल दी। उसके कुछ ही दिनों बाद एक नया नियम बना कि कंपनियों को अपने यहाँ के दूध में कीटाणुओं की जाँच करानी होगी। हॉर्लन ए. हॉवर्ड को शीघ्र ही 14 कंपनियों से दूध में कीटाणु देखने का काम मिल गया और इस काम के लिये उसे दो सहायक भी रखने पड़े।

अब से 22 वर्ष बाद क्या होगा, कौन जानता है? जो लोग आज पाक-रसायन का कारोबार कर रहे हैं वे या तो तब तक अवकाश पा लेंगे या चल बसेंगे और उनका स्थान पहल और उत्साह की भावनाओं से भरे हुए नौजवान ले लेंगे। अब से 25 वर्ष बाद हॉर्लन ए. हॉवर्ड सभवत: अपने क्षेत्र में अगुआ बन जाएगा और उसके कुछ सहपाठी, जिन्हें वह गल्ले पर आइसक्रीम बेचा करता था; दु:खी, बेरोजगार रहकर सरकार को बुरा-भला कहते और उसकी शिकायतें करते नजर आयेंगे। वे कहेंगे कि उनको कोई मौका नहीं मिला। हॉर्लन ए. हॉवर्ड को भी यह मौका कदापि न मिलता यदि उसने अरुचिकर काम को रुचिकर बना लेने का निश्चय न कर लिया होता।

बहुत वर्ष बीते, एक युवक लेथ-मशीन पर खड़े बोल्ट बनाने का अरुचिकर काम करते-करते उकता गया था। उसका नाम सैम था। वह अपने इस धंधे को छोड़ना चाहता था किंतु उसे अंदेशा था कि कहीं दूसरी नौकरी न मिली तो? चूँकि उसे वह अरुचिकर काम भी करना ही था, उसने उसे रुचिकर बनाने का निश्चय कर लिया। उसने अपने पास ही मशीन पर काम करने वाले मैकेनिक के साथ स्पर्धा शुरू कर दी। उनमें से एक का काम मशीन पर, धातु के खुरदुरेपन को मिटाने का था और दूसरे का काम ठीक व्यास के बोल्ट बनाना। वे बीच-बीच में मशीन को बंद कर देते और देखते कि सबसे अधिक बोल्ट किसने बनाये हैं। कारखाने के फोरमेन ने काम करने की गति और लग्न से प्रभावित होकर सैम को अच्छा काम दे दिया और इस प्रकार उसकी तरक्की का श्रीगणेश हुआ। तीस वर्ष पश्चात् सैम, जिसका पूरा नाम सैम्युअल वॉकलैन था, वाल्डबिन लोकोमोटिव कारखाने का प्रधान बन गया। यदि उसने अरुचिकर कार्य को रुचिकर बनाने का निश्चय न किया होता तो वह जीवन पर्यन्त मैकेनिक ही बना रहता।

रेडियो समाचार के प्रसिद्ध समीक्षक एच.वी. कॉल्टेनबॉर्न ने मुझे बताया कि उसने अरुचिकर कार्य को रुचिकर किस प्रकार बनाया। जब वह 22 वर्ष का था उसने पशुओं की नाव (कैटल बोट) में अटलांटिक पार किया। वह साँड़ों को खिलाने-पिलाने का काम करता था। साइकल पर इंग्लैंड की यात्रा करने के पश्चात् जब वह पेरिस आया तो भूखा और थका हुआ था। उसने अपने कैमरे को पाँच रुपयों में गिरवी रखा और न्यूयॉर्क हेराल्ड के पेरिस प्रकाशन में नौकरी के लिये एक विज्ञापन प्रकाशित करवा दिया। उसे 'स्टीरियो-आप्टिकन' मशीनें बेचने का काम मिल गया। यदि आप 40 वर्ष के हैं तो आप पुराने फैशन के उन 'स्टीरियो-आप्टिकन' के बारे में जानते होंगे, जिन्हें हम अपनी आँखों के सामने दो तस्वीरों को ठीक एक जैसा देखने के लिये लगाते थे। जब हम उससे देखते तो अजीब करामात सी मालूम पड़ती। 'स्टीरियो-आप्टिकन' के दोनों सैल दोनों तस्वीरों के दृश्यों को एक बनाकर हमारे सामने प्रस्तुत कर देते और उसमें थ्री डाइमेंशन का प्रभाव नजर आता। हम उसमें गहराई देखते और उस दृश्य

को देखकर चकित रह जाते।

हाँ, तो मैं कह रहा था कि कॉल्टेनबॉर्न पैरिस में घर-घर जाकर उन मशीनों को बेचने लगा। यद्यपि वह फ्रैंच नहीं जानता था, तथापि उसने पहले साल के कमीशन से ही पाँच हजार डालर कमा लिये। वह उस वर्ष का सबसे सफल विक्रेता था। एच.वी. कॉल्टेनबॉर्न ने मुझे बताया कि उस अनुभव ने उसके अंदर सफलता के लिए आवश्यक गुणों का उतना ही विकास किया, जितना हॉर्वर्ड में एक साल अध्ययन करने के बाद किया जा सकता है। उसके आत्मविश्वास का तो कहना ही क्या था। उसने बताया कि उस अनुभव के बाद उसे महसूस हुआ कि काश! उसने फ्रांस की गृहिणियों को 'द कांग्रेशनल रिकॉर्ड' बेचे होते।

उस अनुभव ने उसे फ्रांस के लोगों के जीवन को समझने में वह निकटतम दृष्टि प्रदान की, जिसने उसे यूरोप के घटनाचक्र पर रेडियो समीक्षा प्रस्तुत करने में अमूल्य सहायता प्रदान की।

बिना फ्रैंच जाने ही वह एक कुशल विक्रेता कैसे बना? उसने अपने मालिक से बिक्री करने के लिये की जानेवाली आवश्यक बातचीत लिखवा ली और उसे कंठस्थ कर लिया। वह दरवाजे की घंटी बजाता। गृहिणी उसका उत्तर देती और कॉल्टेनबॉर्न अपनी रटी-रटाई बात को विचित्र ढंग से दुहराने लगता। वह उस गृहिणी को तस्वीरें बताता और जब वह प्रश्न पूछती तो वह अपने कंधे हिलाकर कह देता, 'मैं तो अमेरिकन हूँ अमेरिकन!' तदुपरांत वह अपनी हैट उतार लेता और उसमें से शुद्ध फ्रैंच में लिखी वार्त्ता की एक प्रति उन्हें दिताता और दोनों हँसने लगते। इस तरह वह उन्हें और अधिक तस्वीरें बताता। जब एच.वी. कॉल्टेनबॉर्न ने मुझे यह बात बताई तो उसने साफ स्वीकार किया कि उसका वह काम इतना आसान नहीं था। किंतु अपने काम को रुचिकर बनाने के निश्चय ने ही उसे सफलता दी थी। हर सवेरे अपने काम के लिये रवाना होने के पूर्व वह एक शीशे के सामने खड़ा हो जाता और अपने आपको संबोधित करके कहता, 'कॉल्टेनबॉर्न, यदि तुम्हें पेट भरना है तो यह काम करना ही होगा। और चूँकि तुम्हें यह काम करना ही है, इसे खुशी से क्यों न करो। दरवाजे की घंटी बजाने के पूर्व यही समझ लो कि तुम रंगमच के एक अभिनेता हो और दर्शक तुम्हें देख रहे हैं। क्योंकि जो काम तुम जिस ढंग से कर रहे हो, वह रंगमंच के अभिनय की ही तरह विचित्र है और इसलिये अपने काम में पूर्ण शक्ति और उत्साह क्यों न लाओ।'

कॉल्टेनबॉर्न ने बताया कि रोज के शक्तिवर्धक शब्दों से, वह अपने काम को, जिससे कि वह घृणा करता था और भय खाता था, एक अत्यंत लाभकारी और रुचिकर कार्य में परिणित कर सका।

जब मैंने कॉल्टेनबॉर्न को सफलता के लिये उत्सुक अमेरिकी युवकों के लिये कोई सलाह देने का अनुरोध किया तो उसने बताया कि हर रोज सवेरे अपने आप ही बातचीत करो। हममें से अधिकांश ऊँघते रहते हैं और उस ऊँघ को मिटाने तथा चेतना उत्पन्न करने के लिये शारीरिक व्यायाम के महत्त्व की बातें करते हैं, किंतु हमारे लिये हर सवेरे उस आध्यात्मिक और मानसिक व्यायाम की कहीं अधिक आवश्यकता है, जो हमें कार्य के लिये उत्साहित कर सके। हर सवेरे अपने आप को प्रेरक शब्दों द्वारा जागृत एवं क्रियाशील बनाइये।

क्या रोज अपने को उद्बोधन देना बचपना, बकवास या मूर्खता है? नहीं, इसके विपरीत यह एक ठोस मनोवैज्ञानिक सत्य है कि 'हमारा जीवन हमारे विचारों का प्रतिफल है'; ये शब्द आज भी उतके ही सत्य है जितने 18वीं सदी पूर्व थे, जबकि मारकस आरेलियस ने अपनी पुस्तक 'मेडिटेशन' में उन्हें पहली बार लिखा था। उन्होंने लिखा कि जैसे हमारे विचार होंगे, वैसा ही हमारा जीवन होगा। दिन में अपने आप से बातें करके, आप अपने को उत्साह, आनंद, शक्ति और शांति के विषय में सोचने के लिये प्रेरित कर सकते हैं। जिन बातों के लिये आपको दूसरों का आभार मानना चाहिये उनके विषय में अपने से बातें करके आप अपने मन को उच्चता और मधुरता की भावनाओं से भर सकते हैं।

शुद्‍ध विचारों से आप किसी काम के विषय में अपनी अरुचि कम कर सकते हैं। आपका मालिक चाहता है कि आप उसके काम में रुचि लें ताकि वह अधिक पैसा बना सके। किंतु जो कुछ आपका मालिक चाहे, उसे भूल जाइये। आप केवल इस बात को याद रखिये कि अपने काम में रुचि उत्पन्न करके आपको क्या लाभ हो सकता है। स्मरण रखिये कि इससे आपको जीवन में दुगुनी प्रसन्नता प्राप्त हो सकती है, क्योंकि यदि आप अपनी जाग्रत अवस्था में आधे समय तक भी काम करके खुशी हासिल नहीं कर सकते तो फिर वह खुशी आपको कहीं भी नहीं मिलेगी। याद रखिये कि काम में रुचि लेने से आपका दिमाग चिंताओं से हट जाएगा और अंतत: उससे आपकी तरक्की होगी और आपको अधिक चेतना मिलेगी। और यदि इतना नहीं भी हुआ तो भी उससे आपकी थकान तो कम हो ही सकती है और अवकाश के समय में आनंद लाभ करने में भी आपको सहायता मिल सकती है।

❑

प्रकृति चलते-फिरते सुला देगी

क्या नींद नहीं आने पर आपको चिंता होती है। यदि हाँ, तो आपको यह बात जानने में बड़ी दिलचस्पी होगी कि प्रसिद्ध अंतरराष्ट्रीय वकील सैम अंटरमेयर जीवन में कभी भी गहरी नींद नहीं सो सके।

जब सैम अंटरमेयर ने कॉलेज में प्रवेश किया तो वे दमा तथा अनिद्रा के रोग की चिंता से दु:खी थे। उन्होंने स्वस्थ होने की आशा छोड़ दी थी। अत: उन्होंने अपनी जागृत अवस्था से लाभ उठाने का निश्चय किया, क्योंकि इस उत्तम उपाय के सिवा उनके पास और कोई चारा ही नहीं था। इधर-उधर करवटें बदलने तथा चिंता करके टूटने के बजाय वे बिस्तर से उठ बैठते और अध्ययन करके लगते। नतीजा यह हुआ कि वे अपनी सभी कक्षाओं में सम्मानपूर्वक सफलता प्राप्त करते गये और न्यूयॉर्क शहर के कॉलेज के एक अपूर्व प्रतिभाशाली छात्र बन गये।

वकालत आरंभ कर देने पर भी उनको अनिद्रा से छुटकारा नहीं मिला। किंतु सैम अंटरमेयर ने चिंता नहीं की। वे कहते कि 'प्रकृति मेरी सँभाल स्वयं करेगी' और प्रकृति ने सँभाल की भी। निद्राहीनता के बाजवूद वे न्यूयॉर्क अदालत के किसी भी युवा वकील की तरह ही कठिन परिश्रम कर सकते थे और उनका स्वास्थ्य भी बना रहा। यहाँ तक कि अन्य वकीलों से वे अधिक परिश्रम करते थे, क्योंकि जब वे सोते थे, काम करते रहते थे।

इक्कीस वर्ष की आयु में ही सैम अंटरमेयर प्रतिवर्ष पचहत्तर हजार डॉलर कमाने लगे थे और अन्य युवा एटॉर्नी उनकी पद्धति का अध्ययन करने के लिए अदालतों में जमा होने लगे थे। 1931 तक उन्हें केवल एक मामले की पैरवी करने के लिये दस लाख डॉलर की अभूतपूर्व फीस नकद मिलने लगी।

फिर भी अनिद्रा-रोग ज्यों-का-त्यों बना रहा। वे आधी रात तक पढ़ते रहते और पुन: सवेरे पाँच बजे उठकर पत्र लिखवाना आरंभ कर देते। जिस समय अन्य व्यक्ति अपने काम का श्रीगणेश करते उनका दिन भर का काम लगभग पूरा हो जाता। उन्होंने शायद ही रात को गहरी नींद ली होगी, फिर भी इक्यासी वर्ष की अवस्था तक जीवित रहे। किंतु यदि वे अपनी अनिद्रा को लेकर चिंतित एवं क्षुब्ध रहते हो संभवत: अपने जीवन को नष्ट कर देते।

हम अपने जीवन का एक तिहाई समय सोने में गँवाते हैं। किंतु कोई भी यह नहीं कह सकता कि वास्तव में नींद किसे कहते हैं। हम केवल इतना जानते हैं कि यह एक आदत है तथा विश्राम की एक अवस्था है जिसमें प्रकृति हमें पुन: स्फूर्ति एवं ताजगी दे देती है। किंतु हम यह नहीं जानते कि हर व्यक्ति को कितने घंटों की नींद की आवश्यकता होती है? हम यह भी नहीं जानते कि क्या सोना जरूरी है ही?

एक विचित्र कथा! प्रथम महायुद्ध में हंगरी के एक सैनिक पॉल कर्न के सिर के अग्रभाग में गोली लग गई थी। उसका घाव तो ठीक हो गया किंतु विचित्र बात यह हुई कि उसके बाद से वह सो नहीं पाता था। डॉक्टरों ने कई उपाय किये। सभी प्रकार की नींद देने वाली दवाएँ दे दीं। यहाँ तक कि सम्मोहन क्रिया का प्रयोग भी करके देखा गया, किंतु पॉल कर्न को नींद आना तो दूर रहा, नींद की छाया भी पलकों पर नहीं आई। डॉक्टरों ने कहा कि वह अधिक दिन जीवित नहीं रह सकेगा। किंतु वे मुगालते में थे। उसने नौकरी कर ली और वर्षों तक स्वस्थ जीवन व्यतीत करता रहा। वह लेटकर आँखें बंद कर लेता और आराम करता किंतु उसे किसी भी तरह नींद नहीं आती थी। उसकी यह बात चिकित्सा विज्ञान के लिए रहस्य बन गई और उसने नींद के विषय में हमारे अनेक विश्वासों को झकझोर दिया।

कुछ लोगों को दूसरों की अपेक्षा अधिक नींद चाहिये। टोस केनिनी को केवल पाँच घंटे नींद चाहिये। थी। किंतु कैलविन कूलिज को उससे दुगुने समय के लिये नींद लेने की आवश्यकता रहती थी। कूलिज चौबीस घंटों में ग्यारह घंटे सोता था। दूसरे शब्दों में टोस केनिनी अपने जीवन का लगभग पाँचवाँ भाग सोने में बिताता था, किंतु कूलिज

आधा जीवन सोने ही में बिता देता था।

अनिद्रा के विषय में चिंता करना अनिद्रा के रोग से भी अधिक दु:खदायी है। उदाहरणार्थ, मेरे ही एक विद्यार्थी इरा सेंडनर को लीजिये। वह न्यू जर्सी के रोजफील्ड में रहता था और दीर्घ अनिद्रा रोग से पीड़ित रहने के कारण लगभग आत्महत्या करने पर उतारू हो गया था।

इरा सेंडनर ने मुझे बताया, ''मैंने तो सोचा था कि मैं सचमुच ही पागल होने जा रहा हूँ। मुश्किल यह थी कि पहले मैं खूब गहरी नींद सोता था। यहाँ तक कि अलार्म घड़ी के बजने पर भी मैं नहीं जागता था और फल यह होता कि मुझे सवेरे अपने काम में देर हो जाती। इससे मुझे बड़ी चिंता होती थी। मेरे अफसर ने मुझे समय की पाबंदी के लिये चेतावनी तक दे दी थी। मैं जानता था कि अधिक सोने के कारण मेरी नौकरी जा सकती है।

मैंने अपने मित्रों को यह कठिनाई बताई। उनमें से एक ने सोने के पूर्व अलार्म घड़ी पर अपना ध्यान केंद्रित करने का सुझाव दिया। उसके फलस्वरूप अनिद्रा रोग का श्रीगणेश हुआ। अलार्म घड़ी की वह कटु टिक-टिक मेरे लिये एक प्रकार का भय बन गई। उसके कारण मैं रात भर करवटें बदलता रहता। सवेरा होने पर मैं अपने को थकान और चिंता से अस्वस्थ पाता। यह स्थिति आठ सप्ताह तक चलती रही। जिस वेदना से मैं पीड़ित रहा, वह वर्णनातीत है। मुझे विश्वास हो गया था कि मैं पागल होने वाला हूँ। कभी-कभी तो मैं घंटों इधर-उधर टहलता रहता था और सचमुच ही खिड़की से बाहर कूदकर प्राण देने की बात सोचा करता।

अंत में मैं अपने एक पहचान के डॉक्टर के पास गया। उसने मुझे कहा, ''इरा, इसमें न मैं तुम्हारी कोई सहायता कर सकता हूँ, न कोई और ही। क्योंकि यह रोग तुमने स्वयं अपने आप पर लादा है। रात होने पर बिस्तर पर लेट जाओ और यदि नींद न भी आए तो चिंता ना करो। मन-ही-मन कहो, 'मैं नींद की कोई परवाह नहीं करता, नहीं आती तो न आए'। यदि सारी रात जागते ही बितानी पड़े तो भी कोई बात नहीं। अपनी आँखें मूँद कर कहो, 'जब तक मैं लेटा रहता हूँ और नींद की चिंता नहीं करता, तब तक ठीक है। आराम तो आखिर मिल ही जाता है'।''

''मैंने वैसा ही किया, जैसा डॉक्टर ने बताया था, और दो सप्ताह बाद ही मुझे नींद आने लगी। एक महीने के अंदर ही मैं हर रोज आठ घंटे सोने लगा, और मेरी अवस्था फिर से पूर्ववत् हो गई।''

आपने देखा होगा कि सेंडर को अनिद्रा नहीं, बल्कि अनिद्रा की चिंता दु:खी कर रही थी।

डॉक्टर नैथेनियल क्लेरमेन शिकागो विश्वविद्यालय में प्राध्यापक हैं। उन्होंने नींद पर सबसे अधिक गवेषणा की है। वे नींद के विषय में जानकारी रखने वाले प्रसिद्ध विशेषज्ञ हैं। उनका कहना है कि अब तक वे ऐसे किसी भी व्यक्ति को नहीं जानते जो अनिद्रा से मरा हो। हो सकता है कि अनिद्रा की चिंता करते-करते आदमी शक्तिहीन हो गया हो और रोग के कीटाणुओं ने उसे मृत्यु का ग्रास बना लिया हो। किंतु कुछ भी हो, उसे जो हानि हुई वह अनिद्रा की चिंता के कारण हुई, न कि अनिद्रा के रोग के कारण।

डॉक्टर क्लेरटमेन का कथन है कि अनिद्रा के रोग से पीड़ित व्यक्ति अपने अनुमान से भी कहीं अधिक सो लेते हैं। जो व्यक्ति यह कहता है कि गत रात मैंने आँख तक नहीं झपकाई, वह कई घंटे अनजाने ही सो चुका होता है। उदाहरणार्थ, उन्नीसवीं सदी के एक महान विचारक हर्बर्ट स्पेंसर ही को लीजिये। वे अविवाहित थे, बूढ़े थे और एक बोर्डिंग में रहते थे। अपनी अनिद्रा की बातें कर-करके वे सबको उकताते रहते थे। अपने को शांत रखने और शोर-गुल से बचाने के लिए उन्होंने अपने कानों में ढकने तक लगा लिये। नींद लेने के प्रयत्न में वे कभी-कभी अफीम तक ले लेते थे। एक रात वे ऑक्सफोर्ड के प्रोफेसर साएस के साथ होटल के एक ही कमरे में सोए थे। दूसरे दिन जागने पर स्पेंसर ने बताया कि रात को वे जरा भी नहीं सोए। किंतु बात कुछ उल्टी ही थी। वास्तव में यदि कोई सोया नहीं तो प्रोफेसर साएस। उनको सारी रात इसलिये नींद नहीं आई क्योंकि स्पेंसर खर्राटे मारते रहे।

गहरी नींद लेने के लिये पहली आवश्यकता है सुरक्षा की भावना। हमें सोचना चाहिये कि हमारे ऊपर एक ऐसी महान शक्ति भी है जो सवेरे तक हमारी रक्षा करेगी। इसी बात पर ग्रेट वेस्ट राइटिंग एसाइलम के डॉक्टर टाउस हेल्टप ने भी ब्रिटिश मेडिकल एसोसिएशन में भाषण करते समय बड़ा जोर दिया था। उन्होंने कहा कि 'वर्षों के चिकित्सा कार्य के अपने अनुभवों के फलस्वरूप मैं इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि नींद लाने वाला प्रमुख साधन प्रार्थना ही है। मैं यह बात एक चिकित्सक के दृष्टिकोण से ही कर रहा हूँ। जो लोग प्रार्थना के अभ्यस्त हैं उनके लिये, यह उनके मस्तिष्क एवं स्नायुओं को शांत रखने वाला अत्यंत सामान्य एवं योग्य साधन है इसलिये सबकुछ भगवान के हवाले कर दो और निश्चिंत हो जाओ।'

जीनेट मेकडोनल्ड ने मुझे बताया कि जब निराशा एवं चिंता की अवस्था में उसके लिये नींद लेना कठिन हो जाता था तब बाइबिल की प्रार्थना करने से उसे 'सुरक्षा की भावना' सदा उपलब्ध हो जाती थी। प्रार्थना यह थी, 'जब भगवान् स्वयं मेरा रखवाला है तो मुझे और क्या चाहिए। वही मुझे हरे-हरे खेतों में विश्राम देता है और शांत जल के किनारे से जाता है...।'

किंतु यदि आप धार्मिक श्रद्‌धा नहीं रखते और आपको कठोर परिश्रम करना पड़ता है, तो शारीरिक उपायों से विश्राम लेना सीखिये। अपनी पुस्तक 'रिलीज फ्रॉम द नर्वस टेंशन' में डॉ. डेविड हेरॉल्ड फिक ने कहा है कि मस्तिष्क एवं स्नायु को शांत करने का सबसे उत्तम उपाय यह है कि मनुष्य अपने शरीर से बातें करे। डॉ. फिक के शब्द सभी प्रकार की सम्मोहक क्रियाओं की कुंजी हैं। यदि आप लगातार नहीं सो पाते तो यह इसलिए कि आपने अनिद्रा की बात कह-कहकर अनिद्रा का रोग मोल ले लिया है। अपने रोग से छुटकारा पाने का यही उपाय है कि आप अपना वह सम्मोहन तोड़ दें और यह आप तभी कर सकते हैं, जब आप अपनी मांसपेशियों को ढीली हो जाने और आराम करने का निर्देश दें। यह तो हम जानते ही हैं कि मस्तिष्क और स्नायु तब तक विश्राम नहीं ले सकते जब तक कि मांसपेशियाँ तनी हुई हों। इसलिए यदि हम सोना चाहते हैं तो हमें मांसपेशियों से उसका आरंभ करना होगा। डॉ. फिक की व्यावहारिक सलाह यह है कि टाँगों के तनाव को दूर करने के लिये हमें अपने घुटनों के नीचे तकिया रखना चाहिये और बाँहों का तनाव कम करने के लिये उनके नीचे छोटे तकिये रखने चाहिये। और तब अपने जबड़ों, आँखों, बाँहों और टाँगों को विश्राम लेने का आदेश लेकर हम तुरंत निद्रामय हो सकते हैं। मैंने यह प्रयोग किया है इसलिये मैं जानता हूँ।

अनिद्रा का सर्वोत्तम उपचार तो यह है कि आप अपने को थका देने वाला कोई शारीरिक परिश्रम करें। बागवानी कीजिए, तैरिये, टेनिस अथवा गोल्फ खेलिये या फिर बर्फ पर फिसलिये। इस प्रकार अपने को थका दीजिये। थियोडोर ड्रेजर यही किया करते थे। जब वे जीवन में संघर्ष कर रहे थे और एक तरुण लेखक थे, प्राय: अनिद्रा से चिंतित रहते थे। अत: उन्होंने न्यूयॉर्क सेंट्रल रेलवे में पटरियाँ बिछाने का काम ले लिया। दिन भर पटरियाँ साफ करते-करते तथा कंकरीट बिछाते-बिछाते वे इतने थक जाते कि भोजन करने के लिए अधिक समय तक जागते रहना भी मुश्किल हो जाता। यदि हम पर्याप्त रूप से थक जाएँ तो प्रकृति हमें चलते-फिरते भी सुला देगी।

जब लोग पूर्णतया थक जाते हैं जो वे घड़घड़ाहट, आतंक और युद्‌ध के खतरे के बावजूद सो सकते हैं। प्रसिद्‌ध मनोरोग चिकित्सक डॉ. कैनेडी ने मुझे बताया कि '1918 के युद्‌ध में पाँचवीं ब्रिटिश रेजिमेंट के पलायन के समय सिपाही इतने थक गये थे कि वे जहाँ थे, वहीं जमीन पर पड़ गये और कुंभकर्ण की तरह सो गये। यहाँ तक कि हाथ से आँखें खोलने पर भी वे नहीं जागते थे, और उन्होंने देखा कि प्राय: सभी सिपाहियों की आँखों की पुतलियाँ नींद में ऊँची चढ़ी रहती थीं। उसके बाद मुझे जब कभी नींद में बाधा पड़ती, मैं अपनी पुतलियों को निद्रा की स्थिति में ऊँचा चढ़ाने का अभ्यास करता और इससे मैं कुछ ही पलों में ऊँघने और उबासी लेने लगता। यह एक सहज

प्रक्रिया थी जिस पर मेरा वश नहीं था।'

न सो सकने के कारण अब तक, किसी भी व्यक्ति ने आत्महत्या नहीं की है और न कोई करेगा ही। प्रकृति मनुष्य की समूची इच्छा-शक्ति के बावजूद उसे सोने के लिये विवश करेगी। प्रकृति हमें भोजन एवं पानी के बिना अधिक दिन रहने दे सकती है किंतु सोये बिना नहीं।

आत्महत्या के प्रसंग पर मुझे डॉ. हेनरी सी. लिंक की बात याद आ गई, जिसका उन्होंने अपनी पुस्तक 'रीडिस्कवरी ऑफ मैन' में जिक्र किया है। डॉ. लिंक 'द साइकोलॉजिकल कॉरपोरेशन के सह-प्रधान हैं और कई चिंतित एवं निराश व्यक्तियों से मिलते रहते हैं। उन्होंने अपने एक लेख, 'डर और चिंता को जीतना' में एक ऐसे रोगी के विषय में बताया है जो आत्महत्या करना चाहता था। डॉ. लिंक जानते थे कि उससे बहस करने से स्थिति और बिगड़ जाएगी इसलिये उन्होंने उस व्यक्ति से कहा, ''यदि तुम आत्महत्या करना ही चाहते हो तो कम-से-कम बहादुराना ढंग से करो। इस मकान के चारों ओर दौड़ लगाओ और जब तक मर न जाओ, दौड़ते रहो।''

उसने एक बार नहीं बल्कि कई बार यह प्रयास किया और हर बार उसके दिमाग को राहत महसूस होने लगी। भले ही उसकी मांसपेशियों को राहत न मिली हो। तीसरी रात तक उसने वही हासिल कर लिया जो डॉ. लिंक पहले करना चाहते थे। उस व्यक्ति को इतनी शारीरिक थकान (शारीरिक आराम) हुआ था कि वह खूब सोया। तदुपरांत उसने व्यायामशाला में प्रवेश किया और खेलों में होड़ लगाने लगा। वह शीघ्र ही इतना स्वस्थ हो गया कि उसमें अमर रहने की कामना जाग उठी।

❑

दूध बह गया, अब रोना बेकार

इस वक्त लिखते हुए मैं खिड़की के बाहर अपने उद्यान की सर्पाकार पटरियों को देख रहा हूँ। ये पटरियाँ सीपियों और कंकड़ों से बनी हुई हैं। मैंने इन्हें येल विश्वविद्यालय के 'पीबॉडी' म्युजियम से खरीदा था। मेरे पास म्युजियम के क्यूरेटर का एक पत्र है, जिसमें लिखा है कि वे पटरियाँ 18 करोड़ वर्ष पूर्व बनी थीं। कोई जड़ मूर्ख भी इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि ये पटरियाँ 18 करोड़ वर्ष पूर्व बन चुकी हैं और अब उसके अस्तित्व को बदला नहीं जा सकता। इतना ही क्यों बल्कि 1800 सेकंड पूर्व तक की घटित किसी घटना को भी नहीं बदला जा सकता और मजा तो यह है कि हममें से अधिकांश यही करते आए हैं। यह ठीक है कि कुछ क्षण पूर्व हुई किसी घटना के प्रभाव को हम कम कर दें, किंतु उसे सर्वथा बदल नहीं सकते।

भगवान की इस लीला भूमि पर भूत को सार्थक बनाकर लाभ उठाने का केवल यही तरीका है कि हम धैर्य के साथ अपनी बीती भूलों का विश्लेषण करें, उनसे लाभ उठाएँ और उन्हें भूल जाएँ।

बात ठीक है, पर आप सोचेंगे कि 'क्या इसके अनुसार आचरण करने का साहस और विवेक भी मुझ में है?' आपके इस प्रश्न के उत्तर में मैं आपको कई वर्ष पूर्व का अपना एक अनुभव सुनाऊँगा- ''एक बार मैंने बिना मुनाफा कमाए तीन लाख डॉलर की रकम को 'स्वाहा' कर दिया। बात यह थी कि मैंने प्रौढ़ शिक्षा के लिए एक बृहत् केंद्र की स्थापना की थी। विभिन्न नगरें में उसकी शाखाएँ खोली गईं और उसके प्रचार एवं ऊपरी व्यवस्था के लिये खुले हाथों धन खर्च किया गया। पढ़ाने में व्यस्त रहने के कारण अर्थव्यवस्था पर ध्यान देने के लिये मेरे पास समय ही नहीं था और न ऐसा करने की कोई इच्छा ही थी। इस बारे में मैं इतना लापरवाह रहा कि आय-व्यय का हिसाब रखने के लिये किसी कुशल मैनेजर की आवश्यकता भी महसूस नहीं की।

अंततः एक वर्ष के पश्चात मुझे एक गंभीर एवं दिल दहला देनेवाले तथ्य का भान हुआ। वह यह था कि बहुत आय होने पर भी लाभ के नाम पर एक कोड़ी भी हमारे पास नहीं रही। इस तथ्य का पता चल जाने पर मुझे दो बातें करनी चाहिए थीं- एक तो वह, जो वैज्ञानिक जॉर्ज वाशिंगटन कार्वर ने बैंक में चालीस हजार डालर गँवा देने पर की। जब उसे पूछा गया कि क्या आप को अपने दिवालिया हो जाने की बात मालूम है? तो उसने बड़े सहज भाव से उत्तर दिया, ''हाँ सुना तो है।'' यह कहकर वह फिर से अपने अध्यापन कार्य में लग गया। उसने उस हानि को सदा के लिए मन से निकाल दिया था।

दूसरी बात जो मुझे करनी चाहिए थी वह यह थी कि मुझे अपनी भूल का विश्लेषण कर उससे सदा के लिये शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए थी।

किंतु स्पष्ट बात यह है कि मैंने उन दोनों बातों में से एक भी नहीं की, बल्कि चिंता में गोते खाने लग गया और कई महीनों तब उलझन में पड़ा रहा। मेरा वजन कम हो गया और नींद हराम हो गई। इतनी बड़ी भूल से शिक्षा ग्रहण करने के बजाय मैं फिर उसी प्रकार लेकिन कुछ छोटे पैमाने पर भूल कर बैठा।

मुझे उस सारी मूर्खता पर सोचते हुए आज बड़ा क्लेश होता है। मैंने बहुत पहले ही समझ लिया था कि दूसरों को शिक्षा देना आसान है किंतु उसी शिक्षा के अनुरूप स्वयं आचरण करना अत्यंत कठिन है।

क्या ही अच्छा होता यदि मुझे भी न्यूयॉर्क के जॉर्ज वॉशिंगटन हाईस्कूल में अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त होता और वह भी श्री ब्रांडवाइन के विद्यार्थी के रूप में जिन्होंने न्यूयॉर्क के एलन सॉन्डर्स को शिक्षा दी थी।

श्री सॉन्डर्स ने मुझे बताया कि शरीर विज्ञान के अध्यापक श्री ब्रांडवाइन में उन्हें एक बार बहुत ही महत्त्वपूर्ण पाठ पढ़ाया था। उन्होंने कहा, ''उन दिनों मैं किशोरावस्था में था फिर भी चिंता का भूत मुझ पर सवार रहता था। मैं

अपनी भूलों को लेकर अशांत और क्षुब्ध रहा करता था। रात भर अपना परीक्षा पत्र उलटते-उलटते इसी चिंता में घुलता और जागता रहता कि मैं परीक्षा में सफल होऊँगा, या नहीं? मैं रोज अपने किए पर पछताता रहता और सोचता, क्या ही अच्छा होता यदि मैं उसे और ढंग से करता। फिर सोचता, अमुक बात को यों नहीं कह कर यो कहना चाहिए था।

तब, एक दिन सवेरे हमारी कक्षा के विद्यार्थी एक प्रयोगशाला में गए। वहाँ एक शिक्षक थे, जिनका नाम ब्रांडवाइन था। उन्होंने दूध की एक बोतल डेस्क के बिलकुल किनारे पर रख छोड़ी थी। हम सभी उस दूध की बोतल को देखते बैठे रहे। सोचने लगे, आखिर इसका हमारे शरीर विज्ञान के पाठ से क्या संबंध हो सकता है? तब एकाएक ब्रांडवाइन उठ खड़े हुए, टेबल हिली और बोतल गिरकर चूर-चूर हो गई। सब दूध बह निकला और वे चिल्ला उठे, 'दूध तो बह गया अब रोने से क्या।'

तब, उन्होंने हमें अपने पास बुलाकर उन टुकड़ों को दिखाया और कहा, 'इन्हें अच्छी तरह देख लो, मैं चाहता हूँ कि तुम इनसे शिक्षा लो और उसे जीवन पर्यंत याद रखो। तुम देख ही रहे हो कि दूध नाली में बह निकला है और अब यदि सारी दुनिया एक साथ उसके ऊपर बड़बड़ाने तथा बाल नोचने लगे तो भी दूध की एक बूँद भी हाथ नहीं लग सकती। उस समय थोड़ी सी भी सावधानी दूध को बचा सकती थी किंतु अब कुछ नहीं हो सकता। अब तो यही अच्छा है कि हम इस घटना को भूलकर दूसरे कार्य में लग जाएँ।' सॉन्डर्स ने कहा, 'उस सामान्य प्रदर्शन ने मुझे बहुत प्रभावित किया। आज मैं अपने ज्यामिति, लैटिन आदि विषय भूल चुका हूँ पर दूध फैलने की वह घटना आज भी मेरे दिमाग में ताजा है। मेरे विचार से उस प्रदर्शन से मुझे व्यावहारिक जीवन में जितनी महत्त्वपूर्ण शिक्षा मिली, उतनी उच्च विश्वविद्यालय के चार वर्षों के अध्ययन के दौरान किसी भी अन्य बात से नहीं मिली। उससे मुझे शिक्षा मिली कि यथासंभव हानि से सावधान रहा जाए किंतु इतने पर भी हानि हो ही जाए तो उसे सर्वथा भुला दिया जाए।

कुछ पाठक - 'अब पछताए होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गई खेत' - को घिसी हुई पुरानी कहावत कहकर अपनी चिढ़ व्यक्त करते हैं। मैं भी जानता हूँ कि यह कहावत घिसी हुई, नीरस और उच्छिष्ट लगती है। मैं यह भी जानता हूँ कि आप इसे हजारों बार चुन चुके हैं किंतु मैं आपसे यह भी कहना चाहूँगा कि इन्हीं घिसी-घिसाई पुरानी नीरस कहावतों में युगों का विशुद्ध ज्ञान अंतर्निहित है। इन कहावतों का उद्भव मानव जाति के कठोर अनुभवों से हुआ है तथा असंख्य पीढ़ियों में प्रयुक्त होती हुई ये हम तक पहुँची हैं। यदि आप महान विद्वानों द्वारा 'चिंता' पर लिखी गई सामग्री पढ़ें तो आपको पता चलेगा कि जितने अधिक सारभूत और गंभीर तथ्य आपने इन पुरानी कहावतों में पढ़े, उतने किसी अन्य सामग्री में नहीं। उदाहरणार्थ, ये कहावतें लीजिए - 'पुल आने के पहले ही उसे पार न करो' तथा ' अब पछताए होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गई खेत।' यदि हम इन दो कहावतों पर चिढ़ने के स्थान पर उनका जीवन में प्रयोग करने लगें तो हमें इस पुस्तक को पढ़ने तक की आवश्यकता नहीं रहे। वस्तुत: यदि हम अपनी इन कहावतों को जीवन में उतारने लगें तो हम सुखपूर्वक जी सकें। जो भी हो, ज्ञान की शक्ति तो उसकी व्यावहारिकता में ही है तथा इस पुस्तक का उद्देश्य आप को कोई नई बात बताना नहीं है। इस पुस्तक का एक उद्देश्य तो यह है कि आपको उन तथ्यों का स्मरण कराया जाए जिन्हें आप पहले से ही जानते हैं, दूसरा उद्देश्य यह भी है कि इसके द्वारा आपको उन तथ्यों को, जिन्हें आप पहले से ही जानते हैं, जीवन में उतारने की प्रेरणा मिले।

स्वर्गीय फ्रेड फुलर शेड जैसे व्यक्ति के प्रति मेरी बड़ी श्रद्धा है क्योंकि उनमें पुराने सत्यों को नवीन तथा आकर्षक ढंग से प्रकट करने की प्रतिभा थी। वे फिलाडेल्फिया बुलेटिन के संपादक थे। एक बार कॉलेज के भावी स्नातकों के सामने प्रवचन करते हुए उन्होंने प्रश्न किया कि आपमें से कितने ऐसे हैं जिन्होंने कभी लकड़ी चीरी है? जरा अपने हाथ उठा दें। उन्होंने देखा कि बहुतों ने लकड़ी चीरी थी। तब उन्होंने दूसरा प्रश्न किया, आपमें से कितने

ऐसे हैं जिन्होंने खेतों में धान की जगह धूल बोई है?

किसी ने हाँ नहीं की।

मि. शेड ने कहा, ''स्पष्ट है कि कोई खेतों में धूल नहीं बो सकता। वह तो पहले ही वे वहाँ मौजूद है। अतीत के साथ भी कुछ ऐसी ही बात है। जब आप गड़े मुर्दे उखाड़ने लगते हैं तो आप धूल बोने का प्रयास करते हैं।''

जब बेसबॉल के प्रसिद्ध खिलाडी वृद्ध कॉनीमैक इक्यासी वर्ष के थे, मैंने उनसे पूछा कि 'क्या आप कभी अपनी हार पर चिंता करते थे?'

''हाँ, करता था,'' कॉनीमक ने कहा, ''किंतु कई वर्ष हुए, मैं इस मूर्खता से मुक्त हो चुका हूँ। मैंने जान लिया कि चिंता से मेरी कोई प्रगति नहीं हो सकती। जो बीत चुका है, वह लौटकर नहीं आता।''

बीते को पुन: प्राप्त करने के व्यर्थ प्रयास में आप केवल अपने चेहरे पर झुर्रियाँ डाल सकते हैं तथा उदर व्रण के शिकार बन सकते हैं।

मैंने गत 'थैंक्सगिविंग' समारोह के अवसर पर जेक डेम्पसी के साथ भोजन किया था। भोजन करते समय उन्होंने मुझे उस घटना का वर्णन सुनाया जिसमें वे हैवीवेट चैंपियनशिप की स्पर्धा में टनी से मात खा गए थे। उनके अहम् को आघात पहुँचना स्वाभाविक ही था। उन्होंने मुझे बताया कि 'उस संघर्ष के दौरान मुझे एकाएक लगा कि मैं वृद्ध हो चला हूँ। दस बार कुश्ती हुई तब तक तो मैं टिका रहा किंतु उसके बाद टिक नहीं सका। मेरे चेहरे पर सूजन आ गयी थी और वह जगह-जगह से कट गया था। मेरी आँखें लगभग बंद हो चुकी थीं। मैंने देखा कि रेफरी ने जैक टनी का हाथ ऊपर उठाकर उसे विजयी घोषित कर दिया है। मैं विश्वचैंपियन नहीं रहा। बरसते पानी में भीड़ को चीरते हुए मैं अपने ड्रेसिंग रूम में चला गया। जब मैं भीड़ में से गुजर ररा था, कुछ लोगों ने मेरा हाथ थामकर सहानुभूति प्रदर्शित की, तो कुछ लोगों की आँखों में आँसू थे।

एक वर्ष पश्चात टनी से मैं फिर लड़ा किंतु व्यर्थ, मैं सदा के लिय हार चुका था। उस चिंता से मुक्त होना मेरे लिए कठिन हो गया। तब मैंने मन-ही-मन निश्चय किया, गड़े मुर्दे उखाड़ने से कोई लाभ नहीं। मैं बीती घटनाओं पर आँसू नहीं बहाऊँगा। पराभव के धक्के को मैं झेल लूँगा पर भूमिसात् कभी नहीं हूँगा'।

जेक डेम्पसी मन-ही-मन दुहराता नहीं रहा कि मैं गड़े मुर्दे नहीं उखाड़ूँगा। नहीं, ऐसा करने का परिणाम तो यह होता कि वह भूत की चिंता पर सोचने के लिए बाध्य हो जाता। किंतु उसने अपने पराभव को स्वीकार कर उसे भुला दिया और भावी के कार्यक्रम पर अपना ध्यान केंद्रित कर दिया। उसने ब्रोडवे पर जेक डेम्पसी रेस्तरां चलाया तथा ग्रेट नॉर्दर्न होटल खोली। उसने घूँसेबाजी के प्रदर्शन तथा कुश्तियों की स्पर्धा का प्रचार करने में अपने को लगा दिया। वह अपने रचनात्मक कार्यों में इतना व्यस्त रहने लगा कि उसे अतीत को याद करने तथा उस पर विचार करने का समय ही नहीं मिलता था।

जेक डेम्पसी ने कहा, ''गत चार वर्षों से मेरा जीवन चैंपियनशिप के जीवन से कहीं अधिक सुखी है।''

जब मैं इतिहास तथा आत्मकथाएँ पढ़ता हूँ तथा अत्यंत कठिन परिस्थितियों में लोगों को अपनी चिंताओं एवं विपदाओं को भुलाकर सुखी जीवन व्यतीत करते देखता हूँ तो हर बार चकित रह जाता हूँ तथा उनसे प्रेरणा प्राप्त करता हूँ।

एक बार मैं सिंगसिंग जेल गया और वहाँ देखा कि कैदी आम लोगों के समान ही सुखी हैं। इस बारे में मैंने सिंगसिंग के जेलर लेविस ई. लॉज से बातचीत की। उसने बताया कि जब ये अपराधी पहली बार जेल में आते हैं तो क्षुब्ध और दु:खी रहते हैं किंतु कुछ महीनों के पश्चात् उनमें से अधिकांश, जिनमें कुछ बुद्धि है, अपने दुर्भाग्य को भुला देते हैं, अपने को उस जीवन में ढाल लेते हैं और उसे स्वीकार कर लेते हैं। वे उसे सुखी बनाने का प्रयास

करते हैं। जेलर लॉज ने मुझे सिंगसिंग के एक कैदी का हाल बताया जो माली था और जेल में सब्जी तथा फूल उगाते समय गाता रहता था।

सिंगसिंग के उस कैदी में अन्य लोगों से अधिक विवेक था। वह जानता था कि विधाता लेख लिखता है और लिखता ही रहता है। आपकी समस्त पवित्रता एवं बुद्धि आधी पंक्ति मिटाने के लिए भी उसे ललचा नहीं सकती। विधाता के लिखे अंकों में से एक को भी आपके आँसू धो नहीं सकते। इसलिए व्यर्थ ही आँसू क्यों बहाए जाएँ। यह सच है कि हम बहुत सी भूलें और मूर्खताएँ करते हैं, यह हमारा दोष है। तो क्या हुआ? किसने यह सब नहीं किया? नेपोलियन जैसा व्यक्ति भी अपनी जीती हुई लड़ाइयों की एक तिहाई हार गया था। औसतन हमारे प्रयत्न नेपोलियन के प्रयत्नों से बुरे नहीं बैठते।

यह तो निर्विवाद है कि शक्तिशाली राजा भी टूटी को फिर से नहीं जोड़ सकता, चाहे वह अपनी पूरी ताकत ही क्यों न लगा दे।

❑

आत्मानंद के लिए उपकार

हाल ही में टैक्सॉस के एक व्यापारी से मैं मिला था। वह क्रोध से तिलमिला रहा था। उसने कहा कि पंद्रह मिनट के बाद मैं आपको अपने क्रोध का कारण बताऊँगा और उसने बताया भी। वह घटना ग्यारह महीने पूर्व घटी थी पर आज भी वह उसके कारण तिलमिला रहा था। दूसरी कोई बात वह करता ही नहीं था। उसने अपने चौंतीस कर्मचारियों को क्रिसमस के मौके पर दस हजार डॉलर बोनस के रूप में दिये थे। प्रत्येक को लगभग तीन सौ डॉलर मिले थे। पर किसी भी व्यक्ति ने उसे इस कृपा के लिए धन्यवाद नहीं दिया। उसने बड़ी कटुता से कहा, ''अब मैं उन्हें एक पाई भी नहीं दूँगा।''

कन्फ्यूशियस का कथन है कि क्रुद्ध व्यक्ति सदा विष से भरा रहता है। वह व्यक्ति भी विष से इतना भर गया था कि मुझे वस्तुत: उस पर दया आ गई। वह साठ वर्ष का बूढा था। मैंने सोचा कि जीवन बीमा कंपनियों द्वारा निर्धारित औसत आयु की दृष्टि से उस व्यक्ति की चौदह-पंद्रह वर्ष की आयु शेष है और वह भी यदि जब उसका भाग्य साथ दे तब। फिर भी आयु के इन शेष वर्षों में से एक वर्ष तो उसने बीती घटना पर दु:खी होकर ही नष्ट कर दिया।

उसे चाहिए था कि क्रोध एवं आत्मग्लानि में तड़पने के बजाय वह दूसरों की कृतघ्नता का कारण खोजता। संभव है उसने अपने कर्मचारियों से अधिक काम लिया हो और कम वेतन दिया हो। संभव है उन्होंने उस बोनस को उपहार और कृपा न मानकर अपना अधिकार माना हो। यह भी संभव है कि वह छिद्रान्वेषी रहा हो और उनकी पहुँच के इतना बाहर रहा हो कि उनकी उसे धन्यवाद देने जाने की हिम्मत ही न हुई हो। यह भी संभव है कि उन्होंने सोचा हो कि उसने बोनस इसलिए दिया है कि ऐसा न करने पर मुनाफे का अधिकांश कर चुकाने में चला जाता। खैर।

दूसरी ओर यह भी संभव है कि कर्मचारी स्वार्थी, असभ्य एवं ओछे हों। चाहे जो हो, इस बारे में मैं आपसे अधिक नहीं जानता किंतु डॉक्टर सेम्युअल के कथन के अनुसार इतना अवश्य जानता हूँ कि कृतज्ञता का गुण बड़े परिश्रम के बाद विकसित होता है। सर्वसाधारण में यह गुण नहीं मिल सकता।

कहने का अर्थ यह कि इस व्यापारी ने दूसरों से कृतज्ञता की आशा कर दु:खद भूल की, उसने मानव स्वभाव पर ध्यान नहीं दिया।

मान लीजिये आपने किसी व्यक्ति की जान बचाई तो क्या आप अपेक्षा रखेंगे कि वह आपके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करे? संभव है आप ऐसी आशा करें भी पर कई व्यक्ति ऐसे हैं जिन्हें कृतज्ञता नहीं मिली। सेम्युअल लिबोविट्ज ने, जो कि जज बनने के पूर्व एक प्रसिद्ध क्रिमिनल वकील थे, अठहत्तर अपराधियों को मृत्युदंड से बचाया था। किंतु उनमें से एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जो सेम्युअल लिबोविट्ज के प्रति आभार प्रदर्शित करने के लिए रुका हो अथवा क्रिसमस के अवसर पर उसे अभिनंदन पत्र भेजा हो।

ईसा ने एक बार दस कोढ़ियों के घाव भरे किंतु उनमें से केवल एक ने उनको धन्यवाद दिया और वह व्यक्ति था संत ल्यूक। जब ईसा ने शेष नौ व्यक्तियों के बारे में पूछा तो उन्हें बताया गया कि वे बिना आभार प्रदर्शित किये ही वहाँ से चले गये हैं। अब मैं आपसे एक प्रश्न पूछूँगा कि हमें क्या जरूरत है कि हम अपने छोटे-छोटे उपकारों के लिए धन्यवाद की आशा करें? और ईसा के प्रति प्रदर्शित आभार से भी अधिक आभार की इच्छा करें। और यदि वह आभार रुपयों-पैसों को लेकर हो तो और भी बुरा।

चार्ल्स श्वाब ने मुझे बताया था कि एक बार उन्होंने एक खजांची को, जिसने बैंक का रुपया सट्टे में खो दिया

था, जबरदस्त आपत्ति से बचाया था। श्वाब ने स्वयं बैंक में रकम जमा करा दी और उसे अपराधियों के लिये बने सुधारगृह में जाने से बचा लिया। क्या खजांची ने उसका उपकार माना? हाँ, कुछ समय तक के लिए। बाद में वह श्वाब के खिलाफ हो गया, उसे गालियाँ दी, उस पर दोष मढ़ा और वह सब उसने उस व्यक्ति के प्रति किया जिसने उसे जेल जाने से बचाया था। ऐसा था उसका व्यवहार।

मान लीजिए आप अपने किसी संबंधी को दस लाख रुपये दे, तो क्या आप आशा करेंगे कि वह आपका उपकार माने? एंड्रू कारनेगी ने यही किया, किंतु यदि एंड्रू कारनेगी कुछ दिनों बाद कब्र से उठकर आते तो उन्हें यह जानकर गहरा धक्का लगता कि वह संबंधी उन्हें कोस रहा है। इसलिए कि उस वृद्ध ने तीस हजार छह सौ पचास लाख डॉलर जन-कल्याण के लिए दान कर दिये और उसके लिए केवल दस लाख डॉलर ही रहने दिये।

ऐसा ही होता है, आखिर मनुष्य प्रकृति ही ऐसी है और वह जीवन पर्यन्त बदल नहीं सकती, इसलिए उसे स्वीकार ही क्यों न कर लिया जाए। हम भी रोमन साम्राज्य के अत्यंत बुद्धिमान नागरिक मार्कस ऑरेलियस की तरह यथार्थवादी क्यों न बनें। एक दिन उसने अपनी डायरी में लिखा कि ''मैं ऐसे व्यक्तियों से मिलूँगा जो बातूनी हैं, जो स्वार्थी, अहंवादी तथा कृतघ्न हैं। किंतु मुझे उनसे मिलकर कोई आश्चर्य तथा दु:ख नहीं होगा क्योंकि मैं कभी ऐसे संसार की कल्पना नहीं करता, जिसमें ऐसे व्यक्ति न हों।''

यह तो कुछ बुद्धिमानी की बात भी हुई। हुई न? यदि हम दूसरों की कृतघ्नता को लेकर बड़बड़ाते फिरें तो दोष किसका? क्या यह दोष मानव स्वभाव का है अथवा मानव स्वभाव के विषय में हमारे अज्ञान का? हमें दूसरों से कृतज्ञता की आशा करनी ही नहीं चाहिए। ऐसा दृष्टिकोण बना लेने के बाद यदा-कदा कृतज्ञता मिल भी जाए तो हमें आश्चर्य और प्रसन्नता ही होगी, न कि दु:ख।

इस परिच्छेद में मैं यह बताने का प्रयत्न कर रहा हूँ कि, ''उपकारों को भूलना मनुष्य का स्वभाव है, अत: यदि हम दूसरों से कृतज्ञता की आशा करेंगे तो हमें व्यर्थ ही सिरदर्द मोल लेना पड़ेगा।''

न्यूयॉर्क में एक महिला को मैं जानता हूँ जो सदैव अपने एकाकीपन की शिकायत करती रहती है। उसका कोई भी संबंधी उसके पास नहीं फटकता और इसमें आश्चर्य की बात नहीं क्योंकि यदि आप उसके पास जायें तो वह घंटों बैठी-बैठी अपनी भतीजियों पर बचपन में किये गये उपकारों का चिट्ठा आपको सुनाती रहेगी, ''मैंने चेचक, कंठमाला तथा खाँसी की बीमारियों में उनकी सेवा-शुश्रूषा की, वर्षों तक खिलाया-पिलाया, एक को व्यावसायिक स्कूल में शिक्षा दिलवाई और दूसरी के लिए विवाह होने तक घर की व्यवस्था कर दी।''

तो क्या कभी वे उससे मिलने नहीं आतीं? हाँ आती हैं पर कर्तव्य समझकर। किंतु उन्हें उसके पास जाने में डर लगता है क्योंकि वे जानती हैं कि उन्हें घंटों उल्टी-सीधी बातें सुननी पड़ेंगी और उनका सत्कार दु:खद उलाहनों तथा आत्मग्लानि की ठंडी श्वासों से किया जाएगा। अब यह महिला अपनी भतीजियों को अपने से मिलने-जुलने के लिए बाध्य नहीं कर सकती, डरा-धमका नहीं सकती, इसलिए अब वह हृदय रोग से पीड़ित होने का बहाना करती है, ताकि वे उसे मजबूरन मिलने आएँ।

तो क्या सचमुच ही उसे हृदय रोग है? हॉ, डॉक्टरों का कहना है कि उसका दिल कमजोर है और उसकी धड़कनें बढ़ जाती हैं, किंतु वे यह भी कहते हैं कि इससे उसको कोई खतरा नहीं है क्योंकि उसकी यह सारी बीमारी मानसिक है।

इस महिला को स्नेह तथा देखभाल की आवश्यकता है पर वह इसे कृतज्ञता के रूप में चाहती है; पर उसे वह कृतज्ञता और प्यार कभी भी प्राप्त नहीं होगा। क्योंकि वह उसे माँगती है और उसे अपने अधिकार की वस्तु समझती है।

उस महिला के समान ही अन्य हजारों महिलाएँ है जो कृतघ्नता, एकाकीपन एवं उपेक्षा के कारण दु:खी हैं। वे चाहती हैं कि उन्हें प्यार मिले, किंतु यह तभी संभव है जब वे उसकी माँग छोड़ दें और प्रत्युपकार की आशा न कर दूसरों के प्रति अपना प्यार उँड़लती रहें।

यह अव्यावहारिक, काल्पनिक और आदर्शवाद की बात नहीं। यह बड़े विवेक की बात है। यह हमारे लिए वांछित सुख प्राप्त करने का सहज उपाय है। मुझे इसका प्रत्यक्ष अनुभव है। मैंने अपने कुटुंब में ही इसका क्रियान्वय देखा है। स्वयं मेरे माता-पिता सुख के लिए दान देते थे। हम दीन थे, सदा ही ऋण के बोझ से दबे रहते थे। यद्यपि मेरे माता-पिता गरीब थे, तथापि वे क्रिश्चियन होम के अनाथों के लिए बराबर रुपये भेजा करते थे। उन्होंने उस अनाथालय को कभी नहीं देखा था। संभवत: किसी ने भी उस दान के लिए उन्हें धन्यवाद नहीं दिया, हालाँकि पत्र द्वारा धन्यवाद अवश्य प्राप्त हो जाता था। फिर भी बच्चों को सहायता करके जो सुख उन्हें मिलता था, वह उनके लिए अमूल्य था और वह सुख उन्हें बिना माँगे, बिना आशा किये मिल जाता था।

मेरे विचार से मेरे पिताजी अरस्तु के 'आदर्श पुरुष' की परिभाषा में खरे उतरते थे। अरस्तु का कहना था कि ''आदर्श पुरुष वह है जिसको दूसरों का उपकार करने में सुख मिले और जो दूसरों के उपकारों को ग्रहण करने में लज्जा का अनुभव करे क्योंकि दूसरों पर कृपा करना महानता का द्योतक है किंतु दूसरों की कृपा प्राप्त करना हीनता का परिचायक है।

इस परिच्छेद की दूसरी मुख्य बात यह है कि ''सुखी बनने के लिए कृतज्ञता और कृतज्ञता का झमेला छोडकर मनुष्य आत्मानंद के लिये दान करें।''

सदियों से माता-पिता संतान की कृतघ्नता को लेकर सिर धुनते आए हैं। यहाँ तक कि शेक्सपियर के नाटक का एक पात्र राजा लियर भी कहता है कि, ''कृतघ्न संतान बहुत दु:खदायी होती है। वह सर्प-दंश की पीड़ा से भी अधिक पीड़ादायक होती है।

किंतु बच्चे कृतज्ञ कैसे बनें, जब तक कि हम उन्हें सिखाएँ नहीं। कृतघ्नता घास की तरह नैसर्गिक है जबकि कृतज्ञता गुलाब की भाँति लौकिक। उसे पोषण चाहिए, पानी और देखरेख चाहिए, प्यार और संरक्षण चाहिए। यदि हमारी संतान कृतघ्न है तो दोष किसका? हमारा ही, यदि हमने उन्हें दूसरों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना सिखाया ही नहीं तो हम उनसे कृतज्ञता की आशा कैसे कर सकते हैं? मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ जिसको अपने सौतेले पुत्र की कृतघ्नता से शिकायत है। वह व्यक्ति एक बॉक्स फैक्टरी में नौकर था। उसने एक विधवा से विवाह किया था। विधवा ने उससे रुपया उधार निकलवा कर अपने दो लड़कों को कॉलेज भेजने के लिए राजी किया था। अपनी आय में से वह अपना कर्ज भी चुकाता और राशन, किराया, ईंधन, कपड़े आदि का खर्च भी चलाता। चार वर्ष तक वह कुली की तरह बिना शिकायत काम करता रहा।

पर क्या उसे यह सब करने के लिए कृतज्ञता प्राप्त हुई? नहीं। उसकी पत्नी और लड़के, जो कुछ वह करता था, उसे अपना अधिकार समझते थे। उन्होंने कभी कल्पना ही नहीं की कि वे अपने सौतेले पिता के आभारी हैं। उनके मन में कभी उसे धन्यवाद देन का विचार तक नहीं आया।

दोष किसका था? लड़कों का? हाँ, किंतु, माँ का दोष उनसे भी अधिक था। उसने छोटी आयु में लड़कों को कृतज्ञता की भावनाओं से लादना लज्जास्पद समझा। वह नहीं चाहती थी कि जीवन के आरंभ में ही वे कृतज्ञता के बोझ का अनुभव करने लगें। अत: उसने कभी यह कहने का कष्ट नहीं किया कि 'तुम्हारा सौतेला पिता कितना उदार है कि उसने तुम्हें कॉलेज में अध्ययन करने के लिए सहायता दी।' इसके विपरीत उसने ऐसा रुख अपनाया कि जो कुछ वह कर रहा है, थोड़ा है।

उसका खयाल था कि वह बच्चों का बचाव कर रही है, किंतु वस्तुत: वह बच्चों में ऐसे विचार भर रही थी जैसे वे सबकुछ संसार से माँगने के अधिकारी हों। यह एक खतरनाक विचार था, क्योंकि आखिर उन लड़कों में से एक ने अपने मालिक से रुपया उधार लेने का प्रयास किया और जेल गया।

हमें स्मरण रखना चाहिए कि हमारे बच्चे वैसे ही बनेंगे जैसे हम उन्हें बनाएँगे। उदाहरणार्थ, मेरी मौसी वियोला एलेक्जेंडर को लीजिए, जो मिनीपोलिस के मिनेता पार्कवे में रहती हैं। उनको अपने बच्चों की कृतज्ञता के विषय में कभी कोई शिकायत नहीं करनी पड़ी। जब मैं छोटा था, मौसी वियोला मेरी नानी को सेवा शुश्रूषा के लिए अपने घर ले गई। अपनी सास की भी उसने उसी प्रकार सेवा की थी। आज भी मैं आँखें बंद कर कल्पना करूँ तो वे दो वृद्ध महिलाएँ मौसी वियोला के खेत के मकान में अलाव तापती दिखाई देंगी। क्या कभी मौसी वियोला को उनके कारण कोई कष्ट होता था? हाँ, होता था। किंतु उनके रुख से कभी भी यह कष्ट प्रकट नहीं हुआ। वे उन वृद्धाओं को प्यार करती थीं, उनका मन रखती थीं, उन्हें सिर-आँखों पर बिठाती थीं। तथा उन्हें अपने घर जैसा अनुभव कराती थीं। उन वृद्धाओं के अलावा घर में मौसी वियोला के अपने छह बच्चे भी थे। उन्हें कभी विचार ही नहीं आया कि वे कोई विशेष एवं महान कार्य कर रही हैं या उन वृद्धाओं को अपने घर में आश्रय देने के कारण श्लाघा की पात्र हैं। उनके लिए वह कार्य स्वाभाविक, न्यायसंगत तथा अपनी रुचि के अनुकूल था।

आज मौसी वियोला कहाँ हैं? बीस वर्षों से वे विधवा का जीवन बिता रही हैं और उनकी संतान में से पाँच अब सयाने हो गये हैं। उन बच्चों की अपनी पाँच गृहस्थियाँ हैं और वे सभी मौसी को अपने-अपने घर में साथ रखने के लिए बड़े आतुर रहते हैं। वे बच्चे उनका बड़ा सम्मान करते हैं। वे मौसी के साथ रहने के लिए तरसते हैं। क्या वे उपकार की भावना से ऐसा करते हैं? नहीं। उनके हृदय में मौसी के प्रति असीम प्यार है। बचपन से ही वे सौहार्द एवं मानव करुणा की भावनाओं के वातावरण में पले थे, इसलिए अब वे मौसी को प्यार करें तो आश्चर्य ही क्या।
याद रखिये, अपनी संतान में कृतज्ञता की भावना का विकास करने के लिए आपको स्वयं कृतज्ञ बनना पड़ेगा। याद रखिये, छोटों के बड़े कान होते हैं। वे हमारी हर बात को ध्यान से सुनते हैं। बच्चों की उपस्थिति में कभी किसी के उपकार अथवा दया की उपेक्षा न कीजिए। कभी यह न कहिए, ''देखो न उसने क्रिसमस के उपहारस्वरूप यह कैसा रद्दी कपड़ा भेजा है, जैसे कोई झाड़न हो। उसने स्वयं इसे बुना है। एक पैसा भी तो उसे खर्च नहीं करना पडा।'' बल्कि यों कहिए, ''देखो मेरी भतीजी स्यू ने इसे बनाने में कितना समय लगाया होगा। कितनी अच्छी है वह। है न? आज ही हमें उसे धन्यवाद-पत्र लिख देना चाहिए।'' हमारे ऐसे व्यवहार को देखकर बच्चे सहज ही में प्रशंसा करने तथा दाद देने की आदत सीख लेंगे।

(1) कृतज्ञता से उत्पन्न चिंता को टालने के लिए यह तीसरा नियम बाद रखिए - कृतज्ञता के बारे में चिंता न कर हमें उसे स्वीकार कर लेना चाहिए। याद रखिए कि ईसा ने दस कोढ़ियों का उपचार किया था, किंतु केवल एक ने ही उनको धन्यवाद दिया। जितनी कृतज्ञता दूसरों से ईसा को मिली, उससे अधिक की आशा हम क्यों करें?

(ख) हमें स्मरण रखना चाहिए कि दूसरों से कृतज्ञता की आशा न कर केवल आत्मानंद के लिए दूसरों का उपकार करें, इससे सुख मिलता है।

(ग) ध्यान रखिए कि कृतज्ञता का गुण पैदा किया जाता है, इसलिए यदि हम अपनी संतान में कृतज्ञता का भाव भरना चाहें तो उन्हें इसके लिए शिक्षा देनी होगी।

❑

अनुचित आलोचना परोक्ष प्रशंसा

उन्नीस सौ उन्नीस में एक ऐसी घटना घटी कि जिसने शिक्षा-क्षेत्र में राष्ट्रव्यापी तहलका मचा दिया। सारे अमेरिका के विद्‌वान उस दृश्य को देखने शिकागो में जमा हुए थे। इस घटना के कुछ ही वर्ष पूर्व रॉबर्ट हचिन्स नामक युवक येल में कभी वेटर, कबाड़ी और कभी कपड़े सुखाने के लिए डोरियाँ बेचने का मामूली काम करता था। आठ वर्ष बाद वह अमेरिका के सबसे समृद्‌ध विश्वविद्यालयों में चौथी श्रेणी के शिकागो विश्वविद्यालय का प्रेसिडेंट बन गया। उस समय उसकी आयु तीस वर्ष की थी। यह एक अपूर्व घटना थी। वृद्‌ध शिक्षा-शास्त्रियों ने शंका से सिर हिला दिये। उस विचित्र युवक पर निंदा एवं अलोचना की बौछारें होने लगीं। लोग कहते, यह ऐसा है, वैसा है, अनुभवहीन है, शिक्षा संबंधी उसके विचार बेढंगे हैं। यहाँ तक कि समाचार पत्रों ने भी आक्षेप करने शुरू कर दिये।

जिस दिन हचिन्स प्रेसिडेंट बननेवाला था, उसके पिता रॉबर्ट मैनार्ड को एक मित्र ने जाकर कहा कि 'आज एक समाचार पत्र में तुम्हारे पुत्र की आलोचना संपादकीय में पढ़कर मैं हतप्रभ कर गया।'

''हाँ,'' वृद्‌ध हचिन्स ने उत्तर दिया, ''आक्षेप कटु था, किंतु याद रखो कि मृत कुत्ते को कोई भी लात नहीं मारता। और हाँ, कुत्ता जितना ही अधिक महत्त्वपूर्ण होगा, उतना ही अधिक संतोष औरों को उसे लात मारकर होगा।''

प्रिंस ऑफ वेल्स, जो बाद में एडवर्ड अष्टम कहलाए और अब डयूक ऑफ विंडसर कहलाते हैं, इस कथन के स्पष्ट प्रमाण हैं। डयूक ऑफ विंडसर उन दिनों डेवॉनशायर के डार्टमाउथ कॉलेज में शिक्षा ले रहे थे। उनकी अवस्था चौदह वर्ष की थी। जिस कॉलेज में वे शिक्षा ले रहे थे वह अन्नापॉलिस में नौसैनिक अकादमी से जुड़ा है। एक दिन एक नौसेना अधिकारी ने उन्हें रोते देखा और रोने का कारण पूछा। पहले तो उन्होंने कारण बताने से इनकार कर दिया किंतु बाद में सब सच-सच बता दिया कि नौसेना के कैडेट उन्हें लातें मारते हैं। कॉलेज के कमांडर ने उन लड़कों को बुलाया और उन्हें समझाया कि यद्यपि राजकुमार ने कोई शिकायत नहीं की है किंतु मैं जानना चाहता हूँ कि इस धृष्ट व्यवहार के लिए अकेले राजकुमार को ही क्यों चुना गया है? बहुत हाँ-ना और झिझक के बाद अंतत: उन लड़कों ने बताया कि वे ये चाहते हैं कि बड़े होकर शाही नौसेना के कैप्टन अथवा कमांडर बनकर वे यह कह सकें कि उन्होंने बादशाह के भी लातें जमाई हैं।

अत: जब कभी आप पर लातें पड़ें या आप पर आक्षेप किया जाए तो सदा याद रखिए कि लात मारने वाला अथवा आक्षेप करने वाला आपको महत्त्व देने के लिए ही ऐसा करता है। इसका अर्थ प्राय: यह होता है कि आप कुछ ऐसा काम कर रहे हैं जिसकी ओर लोगों का ध्यान खिंचता है। अपने से अधिक पढ़े-लिखे अथवा सफल व्यक्तियों की आलोचना करके कई व्यक्तियों को पाशविक संतोष मिलता है। उदाहरणार्थ, इन्हीं दिनों मुझे एक महिला का पत्र मिला है, जिसमें उसने साल्वेशन आर्मी (मुक्ति सेना) के जन्मदाता जनरल बूथ की आलोचना की है।

मैंने जनरल बूथ की प्रशंसा में एक रेडियो वक्तव्य दिया था। उसी के उत्तर में उसने लिखा था कि जनरल बूथ ने गरीब लोगों की सहायता के लिए जमा की गई आठ करोड़ डॉलर की रकम हजम कर ली है। यह आक्षेप सचमुच ही बेहूदा था। इस महिला को सच्चाई की उतनी परवाह नहीं थी जितनी की अपनी कलुषित भावना को तृप्त करने की। यह तृप्ति उसने अपने से कोसों दूर बैठे व्यक्ति की निंदा करके की। मैंने उसके उन कटु पत्रों को रद्‌दी की टोकरी में फेंक दिया और प्रभु को धन्यवाद दिया कि वह मेरी पत्नी न हुई। उस पत्र में, जनरल बूथ के विषय में और कुछ नहीं लिखा था किंतु उस पत्र द्‌वारा उस महिला के बारे में मैं बहुत कुछ जान गया। शॉपनहॉवर सदियों पहले कह गए हैं कि ''निकम्मे लोग बड़े लोगों की भूलों और दोषों से बहुत खुश होते हैं।''

शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो येल के प्रेसिडेंट को अशिष्ट समझे। फिर भी येल विश्वविद्यालय के भूतपूर्व प्रेसिडेंट टिमोथी ड्वाइट ऐसे व्यक्ति थे जिन्हें अमेरिकी प्रेसिडेंट पद के लिए खड़े होने वाले उम्मीदवार की भर्त्सना करने से बड़ा आनंद आता था। उन्होंने जनता को आगाह किया कि यह उम्मीदवार यदि प्रेसिडेंट चुन लिया गया तो हमारी पत्नियाँ एवं पुत्रियाँ वैध वेश्यावृत्ति की शिकार बन जाएँगी। चाहे संयत रूप से ही हो, पर अपमानित होंगी, भ्रष्ट हो जाएँगी, शील और सौजन्य से दूर जा पड़ेंगी तथा ईश्वर और पुरुष से घृणा करने लग जाएँगी।

लगता है, ये शब्द हिटलर के लिए कहे गए हों, किंतु यह भर्त्सना थॉमस जेफरसन की थी। उस अमर जेफरसन की जो 'डिक्लेरेशन ऑफ इन्डिपेंडेंस' का लेखक था, प्रजातंत्र का पुजारी और एक संत था।

क्या आप किसी ऐसे अमेरिकन की कल्पना कर सकते हैं जिसे धूर्त, धोखेबाज और प्राय: हत्यारा कहा गया हो? एक समाचार पत्र में उसका व्यंग्यचित्र प्रकाशित हुआ जिसमें उस व्यक्ति को गिलोटिन (जहाँ मृत्युदंड के लिए आदमी को खड़ा किया जाता है) के ऊपर खड़ा किया गया था और उसका सिर उड़ाने के लिए एक बड़ा खंजर बनाया गया। जब वह रास्ते से गुजरता तो लोग उस पर व्यंग्य कसते और अपनी घृणा का प्रदर्शन करते और वह व्यक्ति था जॉर्ज वाशिंगटन।

एक दूसरी घटना लीजिए। एक अरसा हुआ इसे घटे। संभव है मानव प्रकृति में अब कुछ सुधार हो गया हो। तो आइए, एडमिरल पियरी का उदाहरण देखिए। इस अन्वेषक ने 6 अप्रैल, 1909 को कुत्तों द्वारा खींची जाने वाली गाड़ी में बैठकर, उत्तरी ध्रुव पहुँचकर, संसार को चकित एवं रोमांचित कर दिया। इस सिद्धिलाभ के लिए सदियों से कई वीर कष्ट झेलते आए हैं और अपने प्राणों की आहुति दे दी है। पियरी भी सर्दी और भूख से मृतप्राय: हो चुका था और उसके पैरों की आठ उँगलियाँ बर्फ के कारण इतनी फट गई थीं कि उन्हें काट देना पड़ा। अपने दुर्भाग्य से वह इतना विह्वल हो उठा था कि उसे पागल हो जाने की आशंका रहने लगी। इधर वॉशिंगटन में नौसेना के अधिकारी उसकी ख्याति एवं चर्चा को लेकर जल-भुनकर खाक हो रहे थे। ईर्ष्या से जलकर उन्होंने उस पर आरोप लगाया कि वैज्ञानिक अन्वेषण के नाम पर धन जमा कर वह उत्तरी ध्रुव प्रदेश में कहीं भटककर समय काट रहा है। और शायद उनका मन भी यही था क्योंकि जिस बात को मानने का मन हो उस पर अविश्वास करना असंभव हो जाता है। पियरी को नीचा दिखाने तथा उसकी प्रगति रोकने का, उनका संकल्प इतना उग्र था कि प्रेसिडेंट मेक्किनले को उसे उत्तरी ध्रुव में अपनी खोज जारी रखने के लिए नौसेना विभाग की जानकारी के बिना सीधी आज्ञा भेजनी पड़ी और इस प्रकार वह अपना काम जारी रख सका।

यदि पियरी नौसेना विभाग में ही बैठे-बैठे काम करता रहता तो क्या कोई उसकी इतनी आलोचना करता? नहीं, क्योंकि तब वह इतना महत्त्वपूर्ण नहीं होता कि दूसरों में ईर्ष्या जाग जाए।

जनरल ग्रांट का अनुभव तो पियरी के अनुभव से भी कटु था। 1862 में जनरल ग्रांट ने पहला महान निर्णायक युद्ध जीता था। उत्तरी अमेरिका की यह पहली विजय थी। यह विजय दोपहर को मिली थी। उस विजय ने देखते-देखते ग्रांट को राष्ट्रनायक बना दिया था। यहाँ तक कि सुदूर पूर्व में भी उसका गहरा प्रतिघात हुआ था। उस विजय के कारण चर्च के घंटे बज उठे। 'मैन' नदी से मिसिसिपी तक के दोनों किनारों पर बसी बस्तियों में हर्ष और उल्लास की लहर थिरक उठी। किंतु उस महान विजय का महान विजेता, उत्तर का वीर, ग्रांट छह सप्ताह बाद ही बंदी बना लिया गया। उसके कमांड से सेना हटा ली गई। नैराश्य एवं अपमान से भरकर वह खूब रोया।

विजय के चरम उत्कर्ष के समय ही जनरल यू.एस. ग्रांट को बंदी क्यों बना लिया गया? मुख्यतया इसलिए कि उसने अपने हठधर्मी अधिकारियों के हृदय में ईर्ष्या एव स्पर्धा की ज्वाला भड़का दी थी। यदि आप अनुचित आलोचना से चिंतित हो जाने के आदी हों तो वह तीसरा नियम ध्यान में रखें, अनुचित आलोचना परोक्ष रूप में

आपकी प्रशंसा ही है। स्मरण रखिए कोई भी व्यक्ति मृत कुत्ते को लात नहीं मारता।

❑

प्रेरक कहानियाँ :

चिंताओं से संघर्ष करने का सुयोग

सन् 1943 के ग्रीष्म की बात है, मुझे लगा जैसे समूचे संसार की चिंताएँ मुझ पर आ पड़ी हैं। चालीस वर्ष से भी अधिक समय मैंने सामान्य, निश्चिंत जीवन बिताया है। यदि कठिनाइयाँ थीं, तो यही सामान्य जो किसी भी गृहस्थ अथवा व्यापारी के साथ होती हैं। मैं आमतौर पर उन मुश्किलात का आसानी से सामना कर लेता। किंतु यकायक धड़ाधड़ छह महान विपत्तियाँ एक साथ आ धमकीं, इसलिए मैं रात भर बिस्तर पर इधर-उधर करवटें लेता रहता तथा दिन निकलता देखकर भयभीत हो उठता, क्योंकि मेरे, सामने छह बड़ी चिंताएँ मुँह फैलाए मुझे निगलने खड़ी थीं।

(1) चूँकि सभी विद्यार्थी युद्ध में जाने लगे थे, मेरे 'बिजनेस-कॉलेज' की नींव वित्तीय कठिनाइयों के कारण हिल गई थी। अधिकांश लड़कियाँ प्रशिक्षण प्राप्त किये बिना ही युद्ध संबंधी कारोबार में काम करके, प्रशिक्षित विद्यार्थियों से भी अधिक पैसा कमा लेती थीं।

(2) मेरा बड़ा लड़का लड़ाई में था इसलिए मेरा हृदय चिंता से उतना ही व्यग्र था जितना कि किसी भी सामान्य पिता का होता है, जब उसके बच्चे युद्ध में गए हों।

(3) ओल्काहोमा शहर के अधिकारियों ने विमान-स्थल हेतु बहुत बड़े भू-भाग पर कब्जा करने की काररवाई शुरू कर दी थी। मेरा घर जो मेरी पैतृक संपत्ति था, उसी भू-भाग के मध्य में स्थित था। मैं जानता था कि मुझे उसके मूल्य का केवल दसवाँ भाग ही मिलेगा, किंतु दुर्भाग्यपूर्ण बात यह थी कि मुझे अपने घर से हाथ धोने पड़ते। आवास की तंगी के कारण यह भी आशंका भी कि अपने छह व्यक्तियों के परिवार को सिर छिपाने के लिए कोई दूसरा घर शायद ही मिले। मुझे भय था कि कहीं तंबू में न रहना पड़े। मुझे यहाँ तक चिंता थी कि मैं कोई तंबू भी खरीद सकूँगा या नहीं।

(4) मेरे घर के पास नहर खोदी गई थी। फलस्वरूप मेरी जमीन पर जो कुआँ था, वह सूख गया था। नया कुआँ खोदने का अर्थ था पाँच सौ डॉलर का खून, क्योंकि वह जमीन मेरे कब्जे से जाने वाली थी। दो माह तक हर सवेरे अपने पशुओं के लिए बाल्टियों में पानी लाना पड़ा था और मुझे आशंका थी कि जब तक लड़ाई चलेगी, मुझे उस काम से छुटकारा नहीं मिलेगा।

(5) मैं अपने बिजनेस-स्कूल से दस मील के फासले पर रहता था और मेरे पास बी श्रेणी का पेट्रोल कार्ड था इसलिए स्पष्ट था कि मुझे नए टायर नहीं मिलेंगे। और मुझे यह भी चिंता रहती थी कि अपनी पुरानी फोर्ड गाड़ी के पुराने और घिसे टायरों के जवाब दे देने पर अपने काम पर कैसे जाऊँगा।

(6) मेरी सबसे बड़ी बेटी समय से एक वर्ष पूर्व ही हाई स्कूल का अध्ययन समाप्त कर चुकी थी। उसकी कॉलेज जाने की इच्छा थी किंतु मेरे पास कॉलेज भेजने के लिए पैसा नहीं था। मैं जानता था कि कॉलेज नहीं जा पाने पर उसका दिल टूट जाएगा। पर क्या करता।

एक दिन दोपहर को जब मैं अपनी चिंताओं में डूबा हुआ था, मैंने उन्हें एक कागज पर उतार लेने का निश्चय किया। मैं समझता था कि दुनिया में मुझ से अधिक चिंताएँ किसी को भी नहीं होंगी। मैं ऐसी चिंताओं से कभी नहीं डरता, जिनका हल निकालने के लिए मुझे संघर्ष करने का सुयोग मिलता हो। किंतु मेरी वे सभी चिंताएँ मेरे वश से सर्वथा परे थीं। मैं उनको सुलझाने के लिए कुछ नहीं कर सका और इसलिए अपनी मुसीबतों की सूची टाइप कर

ली। उस बात को हुए कई महीने बीत गए। मैं भूल ही गया कि मैंने कोई सूची भी तैयार की थी। अठारह महीनों के बाद अपनी फाइलों को उलटते समय मुझे उन छह बड़ी समस्याओं की सूची मिली, जो कभी मेरे स्वास्थ्य के लिए खतरा बन गई थीं। मैंने बड़े चाव से उन्हें पढ़ा और तब कहीं जाकर मुझे अपनी उन समस्याओं के खोखलेपन का भान हुआ। उन समस्याओं का क्या हुआ सो देखिये-

(1) मेरे बिजनेस-कॉलेज के बंद हो जाने की जो आशंका थी वह निर्मूल सिद्ध हुई क्योंकि सरकार ने भूतपूर्व सैनिकों को प्रशिक्षण देने के लिए बिजनेस कॉलेज को सहायता देना आरंभ किया और मेरा कॉलेज प्रशिक्षणार्थियों से खचाखच भर गया।

(2) अपने बेटे के संबंध में मेरी जो चिंताएँ थीं वे भी निर्मूल सिद्ध हुईं क्योंकि उसका युद्ध में बाल भी बाँका नहीं हुआ था।

(3) विमान-स्थल के प्रयोग के लिए मेरी जायदाद पर सरकारी कब्जा हो जाने की चिंता भी व्यर्थ रही, क्योंकि मेरे फार्म से एक मील के फासले पर ही तेल निकल आया था और उसकी कीमत इतनी बढ़ गई थी कि विमान-स्थल के लिए उसे खरीदना एक महँगा सौदा था।

(4) अपने पशुओं को पिलाने के लिए कुएँ से आवश्यक पानी नहीं रहा था, इसकी भी मुझे चिंता थी। किंतु जब मुझे विश्वास हो गया कि फार्म पर सरकारी अधिकार अब नहीं होगा, तो मैंने उचित रकम खर्च कर एक गहरा कुआँ खुदवा लिया, जिससे खूब पानी मिलने लगा।

(5) गाड़ी के टायरों के विषय में मेरी चिंता भी बेकार रही क्योंकि मरम्मत करने तथा सावधानी से गाड़ी चलाने के कारण किसी तरह टायर चल निकले।

(6) अपनी बेटी की शिक्षा के विषय में जो चिंता थी वह भी बेकार रही क्योंकि कॉलेज खुलने के साठ दिन पूर्व एक चमत्कार की तरह मुझे हिसाब ऑडिट करने का काम मिल गया था जिसे मैं स्कूल से बाहर अतिरिक्त समय में कर सकता था और उस आय से मेरे लिए अपनी बेटी को समय पर कॉलेज भेजना संभव हो गया।

मैंने कई बार लोगों को यह कहते सुना था कि जिन बातों को लेकर हम चिंतित, क्षुब्ध एवं क्रुद्ध रहते हैं, उनमें से 90 प्रतिशित कभी नहीं होतीं; किंतु इस मान्यता के महत्त्व को मैं तभी समझा, जब मैंने अठारह महीने पूर्व टाइप की गई चिंताओं की सूची को देखा।

मैं भगवान को धन्यवाद देता हूँ कि मुझे, चाहे व्यर्थ ही क्यों न हो, उन छह भयानक चिंताओं से संघर्ष करने का सुयोग मिला। उन अनुभवों ने मुझे जो सीख दी उसे मैं कभी नहीं भूलूँगा। उससे मुझे उन घटनाओं के विषय में, जो न कभी घटीं न घटने वाली हैं और जो हमारे नियंत्रण के परे हैं, दुखी एवं क्रुद्ध होने की मूर्खता का भान हो आया। स्मरण रखिये, 'आज' वही 'कल' है जिसकी आपने 'कल' चिंता की थी। मन-ही-मन सोचिए ''मैं कैसे कह सकता हूँ कि जिस बात के लिए मैं चिंतित हूँ वह सचमुच होगी ही?'' (सी. आई. ब्लैकवुड)

❑

हीनभावना से छुटकारा

अपनी पंद्रह वर्ष की अवस्था में मैं निरंतर भय, चिंता एवं संकोच से आक्रांत रहता था। अवस्था की दृष्टि से मैं अत्यंत लंबा था और छड़ी की भाँति पतला भी। लंबाई छह फीट दो इंच थी किंतु वजन केवल एक सौ अठारह पौंड ही था। अपनी लंबाई के बावजूद मैं कमजोर था तथा अपने सहपाठियों के साथ बेसबॉल तथा अन्य भाग-दौड़ के खेलों में बराबरी नहीं कर पाता था। वे मेरी खिल्ली उड़ाते और मुझे हेचेटफेस कहते। इससे मैं इतना चिंतित एवं संकोची बन गया कि किसी व्यक्ति से मिलने मात्र से घबराने लगता। यों भी मैं कमी किसी से नहीं मिलता था क्योंकि हमारा घर मुख्य सड़क से हटकर कुछ दूरी पर स्थिति था और चारों ओर से घने जंगली वृक्षों से आच्छादित था। इसलिए सारा हफ्ता प्राय: बिना किसी दूसरे व्यक्ति को देखे ही निकल जाता था। अपने आसपास माता-पिता और भाई-बहनों के सिवा अन्य किसी को भी नहीं देखता था।

यदि मैंने भय एवं चिंताओं को अपने पर हावी होने दिया होता तो मुझे जीवन में कभी भी सफलता नहीं मिलती। हर दिन हर घड़ी मैं अपने लंबे, पतले तथा कमजोर शरीर पर विचार करता रहता और किसी अन्य बात पर मुश्किल से सोच पाता। मेरा क्लेश एवं भय उतना गंभीर हो उठा कि क्या बताऊँ। माँ मेरी स्थिति को अच्छी तरह समझनी थी क्योंकि वह शिक्षिका रह चुकी थी, इसलिए उसने एक दिन कहा, ''बेटे, तुम्हें पढ़ना-लिखना होगा और अपने दिमाग के बल पर ही कमाकर खाना होगा, क्योंकि तुम्हारा शरीर सदैव तुम्हारी राह में रोड़ा बना रहेगा।''

चूँकि मैं जानता था कि मेरे माता-पिता की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि वे मुझे कॉलेज में भेजें, मैंने अपना रास्ता आप बनाने का निश्चय किया और सरदी के मौसम में मैंने ऑपासम, स्कंक, मिंक, रैकून आदि कई पशुओं को फंदे में फाँस लिया और वसंत तक उनकी खालों को चार डॉलर में बेच दिया। उस रकम से मैंने दो छोटे सूअर खरीद लिए। उन सूअरों को खूब खिलाया-पिलाया और बाद में चालीस डॉलर में बेच दिया। उन पैसों को लेकर मैं इंडियाना के सेंट्रल नॉर्मल कॉलेज में चला गया। वहाँ मैं प्रति सप्ताह एक डॉलर और चालीस सेंट भोजन के देता और पचास सेंट कमरे के किराये के। वहाँ मैं माँ की बनाई हुर्ठ मटमैली कमीज पहना करता था। उसने मटमैले रंग की कमीज इसलिए बनाई थी कि वह जल्दी मैली न हो। पिताजी के पुराने सूट भी मैं पहनता था, पर वे कपड़े मुझे ठीक बैठते नहीं थे। उनके वे पुराने जूते, जिनके दोनों ओर इलास्टिक लगे हुए थे, इतने ढीले थे कि चलते समय पैर उनमें से निकल जाते थे। इससे मुझे अन्य लड़कों से मिलते-जुलने में भी शर्म आती थी, इसलिए मैं अपने कमरे में अकेला बैठा अध्ययन करता रहता। मेरी उत्कट अभिलाषा थी कि कुछ अच्छे कपड़े खरीद लूँ जो मुझे ठीक बैठें तथा जिनके पहनते से मुझे शर्मिंदा न होना पड़े। पर कुछ ही दिनों बाद चार ऐसी घटनाएँ घटीं, जिनकी वजह से मुझे अपने हीन-भाव एवं चिंताओं पर काबू पाने में बहुत सहायता मिली। उन घटनाओं में से एक ने मुझमें अपूर्व साहस, आशा और विश्वास का भाव भर दिया तथा मेरे शेष जीवन को बिल्कुल ही बदल दिया। उन घटनाओं का मैं यहाँ संक्षेप में उल्लेख कर देना चाहूँगा-

(1) आठ हफ्ते उस नॉर्मल स्कूल में बिताने के पश्चात् मैंने परीक्षा दी और मुझे देहात के सार्वजनिक स्कूल में पढ़ाने के लिए तीसरी श्रेणी का प्रमाणपत्र मिल गया। वास्तव में यह प्रमाणपत्र केवल छह माह के लिए ही वैध था और यह इस बात का भी प्रमाण था कि दूसरे लोग भी इस दुनिया में है जो मुझमें अपनी आस्था रखते हैं। माँ को छोड़कर किसी अन्य से आस्था प्राप्त करने का यह पहला अवसर था।

(2) हैप्पी हॉलो के एक देहाती स्कूल बोर्ड ने मुझे दो डॉलर प्रतिदिन पर नौकरी दे दी। मुझे वहाँ महीने में चालीस डॉलर मिलने लगे। (छुट्टियों के अलावा) यह, मुझमें दूसरों की आस्था का एक और प्रमाण था।

(3) जैसे ही मुझे पहला चेक मिला, मैंने ढंग के कपड़े खरीदे ताकि उन्हें पहनने से शर्मिंदा न होना पड़े। उस सूट को पाकर जितना आनंद मुझे उस समय हुआ, उतना शायद अब दस लाख डॉलर पाकर भी नहीं हो सकता।

(4) हीनभाव और संकट से संघर्ष करने में पहली महत्त्वपूर्ण सफलता मुझे बेनब्रिज इंडियाना में होने वाले वार्षिक पुटनैम काउंटी फेयर में मिली थी और तब मेरे जीवन ने सचमुच ही करवट बदली थी। मेले में होने वाली सार्वजनिक भाषण प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए मेरी माँ ने आग्रह किया। मेरे लिए तो यह सब सोचना ही हिमाकत करने के समान था। सभा में बात करना तो दूर रहा, मुझमें तो किसी अकेले व्यक्ति से बात करने का साहस भी नहीं था। किंतु मेरी माँ का मुझमें पूरा-पूरा विश्वास था। वह मेरे भविष्य के विषय में बड़े-बड़े सपने देखा करती थी। वह केवल मेरे लिए ही जी रही थी। उसकी आस्था से ही मुझे प्रतियोगिता में भाग लेने की प्रेरणा मिली थी। मेरे भाषण का विषय था - अमेरिका की ललित एवं मुक्त कलाएँ। इस विषय पर बोलने की मुझमें जरा भी योग्यता नहीं थी।

स्पष्ट बात तो यह थी कि जब मैं भाषण तैयार करने लगा, मुझे यह भी पता नहीं था कि मुक्त कलाएँ कहते किसे हैं! किंतु, श्रोतागण स्वयं भी वह अर्थ नहीं समझते थे, मुझे विशेष कठिनाई नहीं हुई। मैंने अपने लच्छेदार भाषण को कंठस्थ कर लिया और सैकड़ों बार तोते के समान उसे दुहराया और उसका अभ्यास किया। अपनी माँ को प्रसन्न करने के लिए मैं इतना आतुर था कि भावातिरेक में धड़ल्ले से सबकुछ बोल गया और मुझे जैसे-तैसे प्रथम पुरस्कार मिल गया। जो कुछ हुआ उसे देखकर मैं चकित रह गया। भीड़ में तालियों की गड़गड़ाहट गूँज उठी। वही लड़के जो कभी मेरी खिल्ली उड़ाया करते थे, और मुझे 'हेचेटफेस' कहकर चिढ़ाया करते थे, आकर मेरी पीठ थपथपाने लगे और कहने लगे, ''हम जानते थे एल्सर, तुम जरूर सफल होगे। मेरी माँ मुझसे लिपटकर सिसकियाँ भरने लगी। आज जब मैं अतीत में झाँकता हूँ तो महसूस करता हूँ कि वह सफलता मेरे जीवन की जबरदस्त करवट थी। स्थानीय पत्रों ने मुखपृष्ठ पर मेरे विषय में लेख छापे और मेरे भविष्य के बारे में बड़ी-बड़ी बातें कहीं। उस सफलता के कारण स्थानीय लोग मुझे जानने लगे और मेरा सम्मान बढ़ गया। सबसे महत्त्वपूर्ण बात जो हुई वह यह थी कि मेरा कलेजा गज भर का हो गया। आज मैं महसूस करता हूँ कि यदि मैं वह प्रतियोगिता न जीतता तो कदाचित् अमेरिका की सीनेट का सदस्य न बन पाता। उस सफलता से मेरी दृष्टि पैनी और दृष्टिकोण विस्तृत हो गया। मैं जान गया कि मुझमें भी वे गुण हैं, जिनके बारे में मैंने कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था। सबसे प्रधान बात यह हुई कि जो इनाम मुझे प्रतियोगिता में मिला था, वह सेंट्रल नॉर्मल कॉलेज में एक वर्ष की छात्रवृत्ति के रूप में था।

इससे मेरी आगे पढ़ने की लालसा उत्कट हो उठी। सन् 1896 से 1900 तक की अवधि को मैंने अध्ययन के लिए निश्चित कर लिया। डे पॉ विश्वविद्यालय के खर्च को पूरा करने के लिए मैं वेटर का काम करता, भट्ठियाँ सँभालता, दूब काटता, पुस्तकों की देखभाल करता, गरमी के दिनों में गेहूँ और धान के खेतों में काम करता तथा जहाँ सड़कें बनती, वहाँ कंकरीट बिछाता।

सन् 1896 में मैं उन्नीस वर्ष का था। मैंने विलियम जेनिंग्स ब्रायन को प्रेसिडेंट बनाने के लिए चुनाव आंदोलन में 28 भाषण दिए। ब्रायन के पक्ष में बोलने के उत्साह के कारण मुझमें राजनीति में प्रवेश करने की इच्छा तीव्र हो उठी, इसलिए मैंने डे पॉ विश्वविद्यालय में कानून और पब्लिक स्पीकिंग का अध्ययन शुरू कर दिया और 1899 में इंडियाना पोलीस में होनवाली वाद-विवाद प्रतियोगिता में बटलर कॉलेज के विरुद्ध अपने कॉलेज का प्रतिनिधित्व किया। वाद-विवाद का विषय यह था कि अमेरिकन सीनेट के सदस्य सीधे जनता द्वारा चुने जाने चाहिए। मैं इस प्रतियोगिता में जीत गया। उसके अलावा भी मैंने कई अन्य भाषण प्रतियोगिताएँ जीतीं और कुछ ही दिनों कॉलेज की

'द मिराज' तथा विश्वविद्यालय की 'द पैलेडियम' पत्रिका का प्रधान संपादक बन गया।

डे पॉ से ए.बी. की डिग्री हासिल कर लेने के बाद मैं होरेस ग्रीले की सलाह पर नये प्रदेश ओक्लाहोमा में गया। जब किओवा, कोमांशे और अपाचे इंडियन रिजर्वेशन की स्थापना हुई तब मैंने एक दावा पेश किया और ओक्लाहोमा के लॉटन नगर में एक लॉ ऑफिस खोल दिया। मैं तेरह वर्ष तक ओक्लाहोमा राज्य की सीनेट का और चार वर्ष तक हाउस ऑफ कांग्रेस का सदस्य रहा। पचास वर्ष की अवस्था में मेरी जीवन भर की अभिलाषा पूरी हुई और मैं ओक्लाहोमा से अमेरिकी सीनेट का सदस्य चुन लिया गया। इस पद पर मैं 4 मार्च, 1927 से बना हुआ हूँ। 16 नवंबर, 1907 से जबसे ओक्लाहोमा और इंडियन टेरिटरीज, ओक्लाहोमा राज्य के अंग बने हैं, तब से मैं बराबर पार्टी द्वारा राज्य सीनेट, कांग्रेस तथा अमेरिकी सीनेट के लिए नामांकित किया जाता रहा हूँ।

यह कहानी मैंने अपने मुँह मियाँ बनने की इच्छा से नहीं कही है, क्योंकि मैं जानता हूँ कि मेरी सफलताओं में किसी अन्य को क्या रुचि हो सकती है। इस कहानी के कहने में मेरा वस्तुत: यह आशय है कि इससे किसी गरीब लड़के को, जो संकोचशील हो तथा जो हीन-भाव का शिकार हो, नवीन साहस, प्रेरणा एवं विश्वास प्राप्त हो सके। (एल्मर थॉमस, अमेरिकी सीनेट में ओक्लाहोमा के प्रतिनिधि)

संपादकीय टिप्पणी : मजे की बात तो यह है कि युवावस्था में बेढंगे कपड़े पहननेवाले एल्मर थॉमस बाद में अमेरिकी सीनेट के सदस्यों में सबसे अच्छी पोशाक पहननेवाले व्यक्ति माने गये।

❑

व्यापक दृष्टिकोण

मैं गरीबी और बीमारी की गहराइयों से गुजर चुकी हूँ। जब लोग पूछते हैं कि मैं संकटों से किस प्रकार पार पा सकी? तो मैं यही उत्तर देती हूँ कि मैंने कल भी मुसीबतों का मुकाबला किया है और आज भी कर सकती हूँ। कल क्या होगा, इस चिंता में मैं अपने को कभी नहीं झोंकूँगी।

मैं अभाव, संघर्ष, दुश्चिंता तथा नैराश्य से भलीभाँति परिचित हूँ। मुझे सदैव अपनी शक्ति के बाहर काम करना पड़ा है। जब मैं अपने अतीत को देखती हूँ तो मुझे वह एक युद्धक्षेत्र सा नजर आता है, जिसमें टूटे स्वप्न, टूटी आशाएँ और टूटे सम्मोहन के टुकड़े बिखरे पड़े मिलते हैं। मैं सदैव से उन परिस्थितियों से लड़ती रही हूँ जो भयंकर रूप से मेरे विरुद्ध थीं और जिनके कारण आज मैं समय से पहले ही वृद्ध हो गई हूँ। उन परिस्थितियों ने मुझे विकलांग और घायल कर दिया था। उन घावों के चि आज भी मेरे साथ हैं।

फिर भी मुझे अपने पर दु:ख नहीं होता, अतीत के संकट पर मैं आँसू नहीं बहाती और न उन स्त्रियों से कोई ईर्ष्या ही करती हूँ जिन्हें विपत्तियों का सामना नहीं करना पड़ा, क्योंकि मैं संघर्ष करके जिंदा रही हूँ; जबकि वे बिना संघर्ष किए केवल जी रही हैं। मैंने जीवन के जाम की आखिरी बूँद तक पी डाली है, जबकि उन्होंने केवल ऊपरी स्वाद ही चखा है। मैं ऐसी बातें जानती हूँ, जिन्हें वे कभी नहीं जानेंगी। मैं उन वस्तुओं को देख सकती हूँ जिन्हें वे कभी नहीं देख सकतीं। केवल वे ही स्त्रियाँ व्यापक दृष्टिकोण पा सकती हैं, जिनकी दृष्टि आँसुओं से धुलकर साफ हो गई हों और वह व्यापक दृष्टिकोण ही उन्हें संसार में प्रिय बना सकता है।

मैंने कठोर आघातों के विश्वविद्यालय से एक दर्शन हासिल किया है, वह यह कि सहज जीवन बिताने वाली स्त्री कुछ नहीं कर सकती। मैंने आज को उसके उसी रूप में स्वीकार करना सीखा है। 'कल' से भयभीत होकर मैं कोई संकट उधार नहीं लेती। भविष्य की चिंता ही हमको डरपोक बना देती है। मैं उस भय को अपने से दूर रखती हूँ, क्योंकि अनुभव ने मुझे सिखाया है कि भय का कारण उपस्थित होने पर उससे लोहा लेने के लिए बुद्धि एवं शक्ति मुझे अपने आप मिल जाएगी। छोटी-छोटी झुँझलाहटों का मुझ पर कोई असर नहीं होता। जब आपके सुख का साम्राज्य ही ढहकर आपके चारों ओर बिखर गया हो, ऐसी स्थिति में नौकर द्वारा पानी के प्याले के नीचे कपड़ा न रखना अथवा रसोइये का सूप छलका कर गिरा देना क्या अर्थ रखता है?

लोगों से अधिक आशा नहीं रखती चाहिये, यह बात मैंने सीख ली है और इसलिये मैं आज उस मित्र और परिचत से भी, जो मेरे प्रति जरा भी वफादार नहीं होता और बातें बनाता रहता है, सुख प्राप्त कर लेती हूँ। सबसे बड़ी बात तो यह है कि मैंने अपने को विनोदी बना लिया है क्योंकि मेरे जीवन की बातें ही ऐसी थीं कि या तो मैं उन पर रोती या फिर हँसती। जो स्त्री संकटों को लेकर उन्मादग्रस्त होने के बजाय हँस सकती है, वह किसी भी बात से दु:खी नहीं हो सकती। मैं अपने संकटों के कारण कभी दु:खी नहीं होती, क्योंकि उन संकटों द्वारा ही मैं अब तक जीवन के हर पहलू से परिचत हो सकी हूँ और जो मूल्य मैंने उनके लिये चुकाया, वह वाजिब ही था। (डोरोथी डिक्स)

संपादकीय टिप्पणी : डोरोथी डिक्स ने 'आज की परिधि में' रह कर अपनी चिंता पर विजय पाई थी। वह कहती थी, यदि मैं कल मुसीबतों के सामने डटी रही तो आज भी रह सकती हूँ।

❑

भगवान तुम्हारी सुन लेगा

(14 अप्रैल, 1902 को एक युवक ने केमरर, व्योमिंग में पाँच सौ डॉलर की नकद रकम और बाद में दस लाख डॉलर और लगाने के निश्चय से एक स्टोर खोला जहाँ ड्राई गुड्स (सूखी सामग्री) बेची जाती थी। व्योमिंग एक छोटा सा खनिक कस्बा था, जहाँ हजार के करीब लोग रहते थे। यह युवक एव उसकी पत्नी स्टोर के ऊपर ही बनी मंजिल में रहते थे। वे अपने माल की खाली पेटियों को टेबल तथा कुर्सियों की तरह काम में लाते थे। युवा पत्नी अपने बच्चे को कंबल में लपेटकर काउंटर के नीचे सुला देती और उसके पास ही खड़ी होकर अपने पति की मदद करती। मैंने हाल ही मैं श्री पेनी के साथ भोजन किया था और उसी दौरान उन्होंने मुझे अपने जीवन की यह अत्यंत नाटकीय घटना सुनाई)—

''कई वर्षों पहले की बात है, मैं बड़ी कठिनाइयों से गुजर रहा था। मैं चिंतित और निराश हो चुका था। मेरी चिंताएँ जे.सी. पेनी कंपनी के विषय में नहीं थीं। वह कारोबार तो ठोस था और फल-फूल रहा था। किंतु मैंने निजी तौर पर 1929 की मंदी के पूर्व कुछ मूर्खतापूर्ण वादे कर लिये थे। जैसा कि कई व्यक्तियों के साथ होता है, मुझे भी उन परिस्थितियों के बारे में दोषी ठहराया गया, जिनके लिए मैं कतई जिम्मेदार नहीं था। मैं चिंताओं में इतना घिर गया कि अपनी नींद तक खो बैठा और अत्यधिक कष्टदायक चर्म-रोग का शिकार हो गया। मेरी सारी देह पर लाल-लाल फोड़े निकल आए थे। मैंने उन्हें एक डाक्टर को दिखाया। मिसूरी अंतर्गत हेमिल्टन हाई स्कूल में मैं और वे डॉक्टर साथ-साथ पढ़ते थे। वे डॉक्टर थे एल्मर एगल्स्टन जो मिशिगन के केलॉग सेनिटोरियम में स्टाफ फिजीशियन थे। डॉक्टर ने मुझे बिस्तर पर लिटा दिया और कहा कि मेरी हालत चिंताजनक है। बड़ा नियमित इलाज बताया गया पर कुछ फायद नहीं हुआ। दिन-दिन मैं कमजोर होता गया। शरीर ने जवाब दे दिया और स्नायु विघटन हो गया। मैं निराशा से भर गया। आशा की हल्की सी किरण भी कहीं नजर नहीं आती थी। फिर किस के लिए जीता? मुझे ज्ञात हुआ कि इस संसार में मेरा कोई नहीं है, कोई भी मित्र नहीं है और परिवार के लोग भी खिलाफ हो गए हैं। एक रात डॉक्टर एगल्स्टन ने स्नायु शांत करने की दवा दी, किंतु शीघ्र ही उसका प्रभाव खत्म हो गया और उस दिन सुबह उठते ही मुझे पूरा विश्वास हो गया कि वह रात मेरी अंतिम रात होगी। बिस्तर से उठकर मैंने अपनी पत्नी और पुत्र को विदाई पत्र लिखे और उन्हें बताया कि मैं सवेर तक जिंदा नहीं रहूँगा।

ल्ह्यकिन जब दूसरे दिन सवेरे मैं जगा तो अपने को जीवित पाकर आश्चर्यचकित रह गया। सीढ़ियाँ उतरते हुए मैंने एक गिरजाघर में प्रार्थना होते सुनी। वहाँ सवेरे रोज ही प्रार्थना होती थी। आज भी मुझे वह प्रार्थना याद है। वे लोग गा रहे थे, ''भगवान तुम्हारी सुन लेगा।'' गिरजाघर में जाकर मैंने भारी मन से प्रार्थना, उपदेश-पाठ और गीत सुने। यकायक कुछ हुआ, जिसे मैं समझ नहीं सका। मैं उसे केवल चमत्कार कह सकता हूँ। मुझे लगा कि मैं एकदम घोर अंधकार में से हटाया जाकर एक उष्ण एवं जगमागते प्रकाश में लाया गया हूँ। मुझे लगा, जैसे मैं नर्क से स्वर्ग में उतर आया हूँ। उस समय मुझे जिस दिव्य शक्ति का भान हुआ, वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। तब मैंने महसूस किया कि अपने सारे संकटों के लिए मैं ही उत्तरदायी हूँ। मुझे ज्ञात हुआ कि ईश्वर अपने स्नेह से मेरी सहायता करने के लिये विद्यमान है। तब से मेरा जीवन बराबर चिंतारहित रहा है। आज मैं 70 वर्ष का हूँ। मेरे जीवन के अत्यंत नाटकीय एवं गौरवपूर्ण क्षण मेरे वे बीस मिनिट थे, जिन्हें मैंने उस गिरजाघर में बिताये थे, जहाँ सवेरे 'भगवान तुम्हारी सुध लेगा' - प्रार्थना हो रही थी। (जे.सी. पेनी)

❑

ठहाका मारकर हँसना

मैं किसी भी जीवित, मृत अथवा अर्धमृत व्यक्ति की वनिस्पत अधिक बार विभिन्न बीमारियों से मरणासन्न हो चुका हूँ। मैं उन्माद का दयनीय रोगी था। मेरे पिता का दवाइयों का अपना स्टोर था और मैं वस्तुत: उसी में पला था। वहाँ मैं रोज डाक्टरों तथा नर्सों से बातें करता था इसलिए औसत व्यक्ति की वनिस्पत भयंकर बीमारियों के लक्षण और नाम अधिक जानता था। मेरा उन्माद असाधारण था। मुझमें उसके सभी लक्षण मौजूद थे। मैं एक ही बीमारी को लेकर घंटों तक सोचता रहता और अपने में वस्तुत: वे सभी लक्षण देखता तो उस बीमारी के रोगी में होते हैं। मुझे स्मरण है कि एक बार मेसाचुसेट्स में, जहाँ मैं रहता था, डिप्थीरिया का भीषण रोग फैल गया था। अपने पिता के स्टोर में मैं रोज रोगियों को दवाइयाँ बेचता था। जिस विपत्ति की मुझे आशंका थी, वही मुझ पर आ टूटी। मुझे भी डिप्थीरिया हो गया है, इसका मुझे निश्चय हो गया। मैं बिस्तर पर लेट गया और प्रमुख प्रमाणित लक्षणों के बारे में चिंता करने लगा। मैंने डॉक्टर को बुलाया। उसने मुझे देखा और कहा-''हाँ पर्सी, तुम्हें यह बीमारी है।'' उससे मेरी दुविधा दूर हो गई। क्योंकि जब भी मुझे बीमारी का निश्चय हो जाता मेरा डर भाग जाता। मैं करवट बदलकर आराम से सो गया। आश्चर्य की बात यह हुई कि दूसरे ही दिन मैं पूर्णरूप से स्वस्थ हो गया।

वर्षों तक असामान्य और विचित्र बीमारियों से गुजरने के कारण मुझे काफी सहानुभूति और सद्भावनाएँ मिली हैं और मैंने काफी नाम कमाया है। मैं कई बार जबड़े और हाइड्रोफोबिया के रोग से मरणसन्न हो चुका हूँ। इसके अलावा भी मुझे एक-के-बाद एक कोई-न-कोई बीमारी होती ही रही, मगर कैंसर तथा क्षय रोग मेरी विशेषता थे।

आज मैं उन बातों पर हँसता हूँ किंतु उन दिनों बड़ा क्लेश होता था। मैं वर्षों तक डरता रहा कि कब्र के कगारे पर चल रहा हूँ। जब वसंत के महीनों में सूट खरीदने की बात आती तो मैं सोचता, क्यों अपना पैसा सूट पर बरबाद करूँ, क्योंकि सूट फटने तक तो मैं जिंदा रहूँगा नहीं।

अब मुझे अपनी तरक्की के विषय में बताते हुए प्रसन्नता होती है कि मैं दस वर्षों में एक बार भी नहीं मरा।

मैंने यह मरना कैसे बंद किया? मैंने हास्यास्पद कल्पना करना छोड़ दिया। हर बार जब मैं कोई उग्र लक्षण देखता, अपने आप हँसता और कहता, देखो व्हाइटिंग, तुम बीस वर्ष से बराबर एक-न-एक घातक बीमारी से मरते आ रहे हो, फिर भी आज तुम भले-चंगे हो, हाल ही में बीमा कंपनी ने अधिक पॉलिसी के लिए तुम्हें स्वीकार कर लिया है; व्हाइटिंग, क्या अब भी तुम्हें चिंता करने की बेवकूफी पर ठहाका मारकर हँसना नहीं आता? मैंने शीघ्र ही जान दिया कि अपने पर हँसने और अपने विषय में चिंतित होने के ये दो काम मैं एक साथ नहीं कर सकता इसलिए तब से मैं अपने पर हँसता ही रहा हूँ।

इसका मतलब यह है कि अपने पर अत्यधिक भरोसा मत कीजिए। अपनी मूर्खतापूर्ण चिंताओं पर हँसने का प्रयास कीजिये और तब आप देखेंगे कि आपने उन्हें हँसकर मिटा दिया है। (पर्सी एच. व्हाइटिंग)

❑

ठहाका मारकर हँसना

मैंने अपने जीवन के चालीस वर्ष भारत में मिशनरी काम करते-करते बिता दिए। आरंभ में भीषण गरमी तथा अपने सामने फैले हुए भारी काम के दबाव को सहना मेरे लिए कठिन हो गया। आठ वर्ष के अंदर ही मैं दिमागी तथा स्नायु थकान के कारण इतना दु:खी हो गया था कि कई बार तो अचेत भी हो जाता। मुझे एक वर्ष तक अमेरिका में आराम करने की आज्ञा मिली। अमेरिका लौटते समय रविवार को सवेरे की प्रार्थना में प्रवचन करते-करते मैं फिर अचेत हो गया और शेष यात्रा के लिए जहाज के डॉक्टर ने मुझे बिस्तर पर पड़े रहने की सलाह दी।

अमेरिका में एक वर्ष की छुट्टी बिताकर मैं भारत रवाना हुआ, किंतु मार्ग में मनीला विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों में धर्म प्रचार संबंधी सभाएँ करने के लिए रुक जाना पड़ा। उन सभाओं में हुई थकान के कारण मैं कई बार फिर अचेत हो गया। डॉक्टरों ने मुझे आगाह कर दिया था कि यदि मैं भारत लौटा तो मर जाऊँगा। उनकी चेतावनी के बावजूद मैंने भारत के लिए अपनी यात्रा जारी रखी। किंतु वहाँ मैं अपने पर बढ़ते संकटों का बोझा लेकर पहुँचा। बंबई पहुँचते-पहुँचते मैं इतना थक चुका था कि सीधा वहाँ से पहाड़ी स्थान पर चला गया और कई महीनों तक विश्राम किया। उस विश्राम के बाद फिर मैं पहाड़ी स्थान से लौट आया और अपना काम करने लगा। किंतु व्यर्थ। मैं फिर अचेत होने लगा और एक लंबे विश्राम के लिए पुन: पहाड़ी स्थान पर जाने के लिए मजबूर हो गया। थोड़े दिन बाद फिर लौट आया, पर मुझे यह जानकर बड़ा धक्का लगा कि मैं अपना काम करने में असमर्थ हूँ। मेरा दिमाग, शरीर और स्नायु थक चुके थे। मेरी शक्ति पूर्णतया जवाब दे चुकी थी। मुझे भय था कि शारीरिक दृष्टि से मैं जीवन भर बेकार रहूँगा।

यदि मुझे कहीं से मदद न मिली तो अपने मिशनरी जीवन को तिलांजलि देकर अमेरिका लौट जाना पड़ेगा तथा स्वास्थ्य को पुन: प्राप्त करने के प्रयास में किसी खेत पर काम करना होगा। वह मेरे जीवन का अत्यंत अंधकारमय समय था। उन दिनों मैं लखनऊ में कई सभाओं का आयोजन कर रहा था। एक रात प्रार्थना करते समय एक ऐसी घटना घटी जिसने मेरे जीवन को पूर्णतया बदल दिया। प्रार्थना करते समय मैं अपने बारे में बिल्कुल नहीं सोच रहा था, एकाएक सुनाई पड़ा, ''क्या तुम वह काम करने के लिए तैयार हो जिसके लिए मैंने तुम्हें बुलाया है?''

मैंने उत्तर दिया ''नहीं भगवन्, मैं थक चुका हूँ। मेरी शक्ति जवाब दे चुकी है।'' उत्तर में सुनाई पड़ा, ''यदि तुम वह सब मुझ पर छोड़ दो और उसकी चिंता न करो तो मैं सब सँभाल लूँगा।''

मैंने शीघ्र ही उत्तर दिया-''भगवन्! जैसी आपकी इच्छा।''

मेरे मन को बड़ी शांति मिली और वह मेरे अंग-अंग में व्याप्त हो गई। मैं जानता था कि मैंने बाजी जीत ली है। मुझमें अपार शक्ति आ गई। मैं खुशी से फूला नहीं समाया। जब मैं रात को अपने स्थान पर लौटा तो मेरे पाँव जमीन पर नहीं पड़ते थे। धरती पवित्र बन गई थी। उस घटना के कई दिनों बाद तक मुझे भान ही न रहा कि मेरे भी शरीर है। कई दिनों तक मैं दिन भर काम करने के बावजूद रात को देर तक काम करता रहता। और जब बिस्तर पर आता तो सोचता कि आखिर सोने की जरूरत ही क्या है, जबकि मुझ में थकान लेशमात्र भी नहीं है। मैं स्वयं ईसा के अधीन था तथा मेरा जीवन शांति एवं विश्राम से सराबोर था।

मेरे सामने प्रश्न उठा कि क्या यह घटना मुझे लोगों को बतानी चाहिए? मुझे कुछ संकोच हुआ, किंतु मैंने महसूस किया कि मुझे कह देना चाहिए और मैंने कह दी। तब से जीवन के बीस से भी अधिक परिश्रमपूर्ण वर्ष बीत गये हैं किंतु अब तक पुराने संकट ने फिर से सिर नहीं उठाया। केवल शारीरिक लाभ ही हुआ हो ऐसी बात नहीं है। मुझे लगा, जैसे कि शरीर में नया जीवन, नया मस्तिष्क एवं नई आत्मा प्रवेश कर गई हो। मैंने भी और कुछ नहीं किया,

बस उसे स्वीकार कर लिया।

तब से जितने भी वर्ष बीते हैं मैं संसार में चारों ओर घूमता रहा हूँ और दिन मैं तीन-तीन बार भाषण करता रहा हूँ। इस पर भी मुझे 'द काइस्ट ऑफ द इंडियन रोड' तथा अन्य ग्यारह पुस्तकें लिखने का समय मिल गया है। मैंने अपने कार्यक्रम में कभी चूक नहीं की, और न कही विलंब किया। मेरी चिंताएँ कभी की विलीन हो चुकी हैं। आज मैं दूसरों के लिए जीकर, उनकी सेवा में आनंद का अनुभव करता हूँ। (ई. स्टेनली जोन्स, मिशनरी)

❑

चिंता को मुक्का

कुश्ती के अपनी जीवन में मैंने चिंता को किसी भी मुक्केबाज की तुलना में अधिक प्रबल पाया है। मैंने सोच लिया था कि चिंता को रोकने का प्रयत्न करना चाहिये, नहीं तो चिंता शक्ति का हास कर देगी और सफलता में बाधक बन जाएगी। अत: धीरे-धीरे मैंने स्वयं एक उपाय खोज निकाला जो निम्नलिखित है-

(1) कुश्ती के समय अपने आपको हिम्मत बँधाने के लिए मैं मन-ही-मन बातें करता। उदाहरणार्थ, जब मैं फपी से लड़ रहा था, मन-ही-मन दुहराता रहा, 'मुझे कोई नहीं हरा सकता। वह मुझे चोट नहीं पहुँचा सकता, मैं उसके घूसों की परवाह नहीं करूँगा। मुझे चोट नहीं लगेगी। कुछ भी हो, मैं अड़ा रहूँगा।' इस प्रकार के प्रेरक विचारों से मुझे पर्याप्त सहायता मिली। उन्होंने मेरे दिमाग को इतना व्यस्त रखा कि मुझे घूँसों के प्रहार का पता ही न चला। कुश्ती के जीवन में कई बार मेरे होंठ कट गए थे और आँखों पर चोट आ गई थी। पसलियाँ भी तड़क गई थीं। फपी ने एक बार मुझे अखाड़े से बाहर उठा फेंका। मैं एक संवाददाता के टाइपराइटर पर जा गिरा और उसे तोड़ बैठा, किंतु फपी के एक भी घूँसे की चोट मैंने महसूस नहीं की। केवल एक बार मुझे घूँसे की चोट जरूर महसूस हुई जब लेस्टर जॉनसन ने मेरी तीन पसलियाँ तोड़ दी थीं। उस चोट की मैंने परवाह नहीं की, किंतु उससे मुझे साँस लेने में कठिनाई होने लगी थी। मैं ईमानदारी से कहता हूँ कि उस घूँसे के अलावा मैंने कभी किसी घूँसे की परवाह नहीं की।

(2) दूसरा उपाय यह था कि मैं चिंतित रहने की मूर्खता का अपने आपको स्मरण दिलाता रहता। मुझे अधिकांश चिंता उस समय होती, जब बड़ी कुश्ती के पहले मैं उसके लिए तैयारी करता। प्राय: कई रात मैं करवटें बदलता रहता। चिंता के कारण नींद नहीं आती, मुझे भय रहता कि कहीं मेरा हाथ न टूट जाए, कहीं मेरे टखनों में मोच न आ जाए, कहीं आँखों पर चोट न लगे। इस चिंता के कारण कुश्ती के पहले दौर में मैं अपने घूँसे ठीक ढंग से नहीं जमा पाता था। जब में हिम्मत हार जाता तो बिस्तर से उठकर शीशे के सामने जा खड़ा होता और मन-ही-मन कहता, 'तुम कितने मूर्ख हो, जो घात कभी हुई ही नहीं और न कभी होगी, उसकी चिंता कर रहे हो। जिंदगी छोटी है, कुछ वर्ष ही तो जीने को मिलता है, फिर आनंद से क्यों न जिया जाए?' मैं मन-ही-मन कहता, 'स्वास्थ्य से बढ़कर कोई भी वस्तु महत्त्वपूर्ण नहीं है।' मैं अपने को स्मरण दिलाता कि अनिद्रा और चिंता में स्वास्थ्य गिर जाएगा। इस प्रकार वर्षों तक लगातार अपने आपको प्रेरणा देने का फल यह हुआ कि मुझ पर अपने ही शब्दों का प्रभाव पड़ने लगा और मैंने अपनी चिंताएँ छोड़ दीं।

(3) तीसरा तथा सर्वोत्तम उपाय जो मैंने किया वह यह था कि कुश्ती के पहले मैं प्रार्थना करता था। कुश्ती के लिए तैयारी करने समय भी मैं दिन में कई बार प्रार्थना करता। अखाड़े में भी कुश्ती की घंटी बजने के पूर्व प्रार्थना करता। उसके फलस्वरूप मैं साहस और विश्वास के साथ लड़ पाता। अब भी रात को सोने के पूर्व मैं सदा प्रार्थना कर लेता हूँ। ईश्वर को धन्यवाद दिये बिना मैं कभी भोजन नहीं करता। भगवान ने भी हजारों बार मेरी प्रार्थना सुनी है।

(जैक डेम्पसी, मुक्केबाज)

❑

एकदम व्यस्त

1943 की बात है, मैं न्यू मेक्सिको में अल्बुकर्क के वेटरन्स हॉस्पिटल में भर्ती हुआ। मेरी तीन पसलियाँ टूट गई थीं और फेफड़े में छेद हो गया था। यह चोट मुझे उस समय लगी जब हम हवाई में सैनिक अभ्यास कर रहे थे। मैं नाव से तट पर कूदने की तैयारी कर रहा था कि इतने में एक जोर की लहर आनी जिससे जॉर्ज उठ गया और अपने आपको सँभाल नहीं सकने के कारण मैं तट पर आ गिरा। मैं इतने जोर से गिरा कि मेरी एक पसली टूट कर मेरे दाहिने फेफड़े में जा घुसी।

अस्पताल में तीन महीने बिताने के बाद मुझे अपने जीवन का सबसे गहरा घक्का लगा। डाक्टर ने मुझे बताया कि मेरी स्थिति में बिल्कुल सुधार नहीं हो रहा है। कुछ सोच-विचार के बाद मैंने महसूस किया कि चिंता के कारण ही मैं ठीक नहीं हो पा रहा हूँ। मैं अपनी जिंदगी में बड़ा व्यस्त रहता आया था किंतु उन तीन महीनों मे मैं चौबीसों घंटे बिस्तर पर पड़ा सोचने के सिवा कोई काम नहीं करता था। जितना सोचता, उतनी ही अधिक चिंता होती। मुझे चिंता थी कि मैं इस दुनिया में फिर से अपनी पूर्व दशा को प्राप्त कर सकूँगा या नहीं, कहीं जिंदगी भर विकलांग ही तो नहीं रहूँगा? मुझे यह भी चिंता थी कि विवाह करके सामान्य जीवन व्यतीत कर सकूँगा या नहीं?

मैंने डॉक्टरों से कंट्रीकल्ब नामक वॉर्ड में ले जाने की प्रार्थना की, क्यो कि वहाँ मरीजों को अपनी इच्छानुसार काम दिया जाता था।

इस कंट्री क्लब वॉर्ड में मेरी 'कॉन्ट्रैक्ट ब्रिज' में रुचि बढ़ी। मैंने छह सप्ताह इस खेल को सीखने, साथियों के साथ खेलने और इस विषय पर लिखी गई किताबें पढ़ने से बिता दिये। साथ ही मैंने तैल-चित्र बनाने में रुचि लेना आरंभ किया। एक शिक्षक से प्रति दिन दोपहर को तीन से पाँच बजे तक यह कला सीखता था। मेरे कुछ चित्र तो अभिव्यक्ति की दृष्टि से बहुत ही स्पष्ट और सुंदर थे। मैंने लकड़ी पर खुदाई की बहुत सी पुस्तकें पढ़ीं और उनमें बड़ा आकर्षण पाया। मैंने अपने आपको इतना व्यस्त बना लिया कि अपनी शारीरिक दया के संबंध में चिंतित होने का मुझे समय ही नहीं मिलता था। मैंने रेडक्रॉस से दी गई मनोविज्ञान संबंधी पुस्तकें पढ़ीं। तीन महीनों के बाद डॉक्टर मेरे पास आए और उस आश्चर्यजनक प्रगति पर मुझे बधाई दी। उनके वैसे मधुर शब्द मैंने जीवन में पहली बार सुने थे। मैं खुशी के मारे नाचना चाहता था।

कहने का अर्थ यह है कि जब तक मैं बिस्तर पर पड़ा भविष्य की चिंता में घुलता रहा, अपने स्वास्थ्य में मैंने कोई प्रगति नहीं की। चिंता का विष मेरे शरीर से घुलता जा रहा था। यहाँ तक कि टूटी पसलियाँ भी ठीक नहीं हो पायीं, किंतु जैसे ही मैंने स्वयं को व्यस्त किया, मैं पूरी तरह स्वस्थ हो गया। बर्नार्ड शॉ की बात याद रखिए, 'अपने सुख-दु:ख के विषय में चिंता करने का समय मिलना ही आपके दु:ख का कारण है इसलिए अपने आपको व्यस्त रखिये, एकदम व्यस्त।' (डेल ह्यूज)

❑

होनी होकर रहेगी

बहुत वर्षों की बात है, मैं एक मुकदमे में गवाह था और उसके लिए मुझे बहुत भारी मानसिक बोझ और चिंता का सामना करना पड़ा। जब मुकदमा खत्म हो गया और मैं गाड़ी में बैठकर घर लौट रहा था, मुझे यकायक शारीरिक मूर्छा ने घेर लिया। दिल की बीमारी थी। मेरे लिए साँस लेना तक असंभव हो गया। जब मैं घर पहुँचा तो डॉक्टर ने मुझे इंजेक्शन दिया। जब मुझे होश आया तो मैंने देखा कि अंतिम धार्मिक संस्कार के लिए पादरी वहाँ मौजूद थे।

मैंने अपने परिवार के लोगों के चेहरों पर भयंकर विषाद देखा। मैंने जान लिया था कि मेरी नाव डगमगा रही है। बाद में मुझे पता चला कि डॉक्टर ने मेरी पत्नी को कह दिया था कि आध घंटे के अंदर शायद मेरी जीवनलीला समाप्त हो जाए। मेरा दिल इतना कमजोर हो गया था कि मुझे हिलने, डुलने और बोलने की मनाही कर दी गई थी। यद्यपि मैं कोई संत नहीं हूँ, फिर भी मैंने एक बात सीखी है कि ईश्वर से विवाद नहीं करना। इसलिए मैंने अपनी आँखें बंद करके प्रार्थना की, ''होई है सोई जो राम रचि राखा'' होनी होकर ही रहेगी। हे राम, होगा वही जो तुझे मंजूर होगा।

जैसे ही मैंने इस विचार को अपनाया, मुझे राहत मिली। मेरा भय विलिन हो गया। मैंने मन-ही-मन सोचा, अनिष्ट क्या हो सकता है? सिवाय इसके कि रोग तीव्र पीड़ा के साथ फिर से लौट आए और जीवन-नौका डूब जाए। अच्छा है, मैं जल्दी ही अपने परमपिता से मिलकर शांति प्राप्त कर लूँगा।

एक घंटे तक मैंने कुर्सी पर बैठे दर्द के दौरे की प्रतीक्षा की। अंत में मैंने अपने आपसे प्रश्न किया, यदि मैं मर नहीं सका तो आगे क्या करूँगा। मैंने निश्चय कर लिया कि अब मैं स्वास्थ्य लाभ करने का भरसक प्रयत्न करूँगा। तनाव और चिंता की स्थिति में अपने आपको कोसना छोड़कर अपनी शक्ति का पुन: निर्माण करूँगा।

यह चार वर्ष पूर्व की बात है। तबसे मैंने अपनी शक्ति को इतना बढ़ा लिया है कि डॉक्टर को भी उस पर आश्चर्य होता है। मैं अब चिंता नहीं करता और मुझमें जीने के लिए नया उत्साह है। किंतु ईमानदारी की बात यह है कि यदि मैंने अनिष्ट का, जो मृत्यु के रूप में मेरे सामने था, सामना न किया होता और उसे सुधारा न होता तो मेरा विश्वास है कि मैं आज तक जिंदा नहीं रहता। यदि मैंने अनिष्ट को स्वीकार नहीं किया होता तो अपने ही भय और आतंक से मैं मर गया होता। (जोसेफ एल. र्यान)

❑

दिव्य संकेत

मैंने युवावस्था और उसके पहले का सारा जीवन निरंतर चिंता करके नष्ट कर दिया। चिंता करना मेरा पेशा बन गया था। मेरी कई चिंताएँ थीं और उनके कई रूप थे। उनमें से कुछ वास्तविक थीं बाकी सब काल्पनिक। मेरे जीवन में ऐसे अवसर बहुत ही कम आते थे जब मुझे चिंता नहीं होती थी। जब चिंता न होती तो लगता, कहीं कोई लापरवाही तो नहीं कर रहा हूँ। किंतु गत दो साल से एक दूसरे ही ढंग से जीवन बिताने लगा हूँ। मैंने अपनी भूलों तथा अवगुणों का विश्लेषण करना आरंभ कर दिया है। यह मेरा अपना निर्भीक और नैतिक आविष्कार था। इससे मुझे अपनी चिंता का कारण स्पष्ट होने लगा।

अब तक मैं अपने जीवनक्रम को व्यवस्थित एवं सीमित नहीं कर पाया था। कल की गलतियों पर मुझे क्रोध आता था और भविष्य के बारे में भय लगा रहता था। मुझे बार-बार बताया गया कि 'आज' यही 'कल' है जिसकी चिंता मैंने 'कल' की थी। किंतु उसका मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। मुझे केवल चौबीस घंटों के कार्यक्रम को लेकर जीने की सलाह भी दी गयी। मुझे यह भी कहा गया था कि 'आज' के जीवन पर ही हमारा अधिकार है और हमें रोज अपने सुयोगों का पूर्ण दोहन करना चाहिए। मुझे कहा गया था कि यदि मैंने यह किया तो काम की व्यस्तता के कारण भूत या भविष्य के बारे में चिंता करने का मेरे पास समय ही नहीं रहेगा। वह सलाह तर्क-संगत एव विवेकपूर्ण थी किंतु मुझे उन युक्तियों का प्रयोग करने में बड़ी कठिनाई महसूस हुई।

तब यकायक जैसे अंधे के हाथ बटेर लगी हो, मुझे अपनी कठिनाइयों का हल मिल गया। 31 मई, 1945 का दिन, शाम के सात बजे थे। हम कुछ मित्रों के साथ गाड़ी में जा रहे थे। उन्हें विदाई देनी थी। वे द सिटी ऑफ लॉस एंजेल्स नामक जहाज से छुट्टियाँ बिताकर काम पर लौट रहे थे। युद्ध चल रहा था। भीड़ काफी थी। रेलवे स्टेशन पर अपनी पत्नी के साथ गाड़ी में चढ़ने के बजाय मैं गाड़ी के सामने की पटरियों पर उतर आया। मैं एक मिनट तक चमकीले इंजन की तरफ देखता रहा। यकायक मैंने एक बहुत बड़ा सिग्नल यंत्र देखा। एक पीली रोशनी नजर आ रही थी। तत्काल ही वह रोशनी हरी बन गयी। उसी समय गार्ड ने सीटी बजाई। सब ट्रेन में चले गये। कुछ ही पलों में वह अपनी 2300 मील की यात्रा के लिए रवाना हो गई।

मेरा दिमाग चक्कर खाने लगा। कोई बात मुझे रह-रहकर सचेत कर रही थी। मुझे किसी चमत्कार का अनुभव होने लगा। एकाएक ज्ञात हुआ कि गार्ड ने मुझे अपनी समस्याओं का हल बता दिया है। वह हरी रोशनी के सहारे अपनी लंबी यात्रा के लिए रवाना हो रहा था। यदि उसकी जगह मैं होता तो अपनी यात्रा की सभी कठिनाइयों के बारे में एक साथ सोचता और सुरक्षा के लिए चिंतित रहता, क्योंकि अपने जीवन में अब तक कुछ ऐसा ही व्यवहार करता आ रहा हूँ। स्टेशन पर बैठे-बैठे भी मैं भविष्य की चिंता करके घबरा रहा था।

अब मैं सोचने लगा, उस गार्ड ने अपनी यात्रा के मार्ग में आनेवाली सभी कठिनाइयों की चिंता एक साथ नहीं की, क्योंकि उसकी ट्रेन का पथ-प्रदर्शन करने के लिए सिग्नल लगे हुए थे। उनके संकेत पर वह ट्रेन की गति को कम-ज्यादा कर सकता था। सिग्नल की पीली रोशनी गति कम करने का संकेत देती है। लाल रोशनी आगे के खतरे के कारण रुक जाने का संकेत देती है। इस प्रकार ट्रेन की यात्रा सुरक्षित हो जाती है।

मैंने भी मन-ही-मन प्रश्न किया कि मैं भी अपनी जीवन-यात्रा के लिए एक उत्तम सिग्नल पद्धति को क्यों न अपनाऊँ। मुझे अपने आप ही इसका उत्तर मिल गया कि मेरे पास भी ऐसी भी एक सिग्नल-पद्धति है, जो भगवान ने मुझे दी है, वही उसका संचालन भी करते हैं। वह अचूक है। मैंने उस हरी रोशनी की खोज की। पर वह मिलंगी कहाँ? मैंने सोचा भगवान ने ही इन हरी रोशनियों को बनाया है फिर उसी से उनके लिए क्यों न पूछा जाए? मैंने वही

किया।

अब मैं जब सवेरे की प्रार्थना करता हूँ, मुझे दिन भर के काम के लिए हरी रोशनी का संकेत मिल जाता है। मुझे कभी-कभी पीली रोशनी भी दिखाई देती है, जो मेरी गति धीमी कर देती है। कभी-कभी मैं लाल रोशनी भी देखता हूँ जो मुझे खतरे की ओर बढ़ने से रोक लेती है।

जब से मैंने यह खोज की है, मुझे कभी कोई चिंता नहीं हुई। गत दो वर्षों में लगभग सात सौ हरी रोशनियाँ मुझे दिखीं और जीवन की यात्रा बिना किसी खतरे की चिंता के सुगम हो गई। अब मैं हर रंग की रोशनी का संकेत समझकर उसके अनुसार चलना सीख गया हूँ। पहले मैं शनैः शनैः आत्म-हनन कर रहा था क्योंकि मुझे आराम करना नहीं आता था। (जोसेफ एम. कॉटर)

❑

परिस्थितियों का सामना

चिंता ने मुझे पूर्णतया हरा दिया था। चिंता के कारण मेरा मस्तिष्क इतना उलझ गया था कि जीवन में कोई आनंद दिखाई नहीं दे रहा था। मेरी शिराओं पर इतना बोझ पड़ गया था कि न तो मैं रात को सो सकती थी और न दिन को विश्राम कर सकती थी। मेरे तीन बच्चे मुझसे बहुत दूर रिश्तेदारों के पास रहते थे, मेरे पति जो हाल ही में सैनिक सेवा से लौटे थे, एक दूसरे शहर में रहकर वकालत जमाने का प्रयत्न कर रहे थे। युद्ध के बाद मुझे जीवन में सुरक्षा और स्थिरता का अभाव महसूस होने लगा।

मुझे भय था कि मेरे पति का क्या होगा? मुझे अपने बच्चों के सुख और सामान्य घरेलू जीवन के लिए आवश्यक धन की चिंता थी। मुझे स्वयं अपना भी भय था। मेरे पति को कहीं मकान नहीं मिल रहा था और नया मकान बनाना ही एकमात्र उपाय रह गया था। यह सबकुछ मेरी अच्छी अवस्था पर निर्भर था। ज्यों-ज्यों मुझे ये बातें अधिक घेरती गईं, मैं उनके लिए अधिक प्रयत्न करती गई और साथ-ही-साथ मेरी असफलता का भय भी अधिक-से-अधिक बढ़ता गया। मुझे किसी भी काम की योजना बनाने में भय लगने लगा और महसूस होने लगा कि मेरा आत्मविश्वास जाता रहा है और मैं जीवन में पूर्णतया असफल रही हूँ।

जब चारों ओर अंधकार छा गया और कहीं से भी सहायता की आशा न रही तो मेरी माँ ने मेरे लिए एक उपाय किया, जिसके लिए मैं उसकी सदा आभारी रहूँगी। उसने मुझे फिर से संघर्ष करने की प्रेरणा दी। उसने मुझे हार मानने तथा अपने स्नायु और मस्तिष्क पर से नियंत्रण खोने से रोक दिया। उसने मुझे बिस्तर छोड़कर अपनी कठिनाई से लड़ने के लिये प्रोत्साहित किया। वह कहती, ''तुम परिस्थितियों के सामने घुटने टेक रही हो, उनका सामना करने के बजाय उनसे डर रही हो और जीने के बजाय जिंदगी से दूर भाग रही हो।''

इसलिए उस दिन से मैंने अपनी परिस्थितियों से संघर्ष करना शुरू किया। उसी सप्ताह मैंने अपने माता-पिता को घर लौट जाने को कह दिया, क्योंकि मैं सब काम अपने हाथ में लेनेवाली थी। जो पहले असंभव मालूम होता था, मैंने कर डाला। मैं अकेली अपने दो छोटे बच्चों की देखरेख करने लगी। मैं अच्छी तरह सोने और खाने-पीने लगी और मेरा उत्साह बढ़ने लगा। एक सप्ताह बाद जब वे मेरे पास वापस आए तो उन्होंने देखा कि मैं इस्तरी करते-करते गा रही हूँ। मुझे अपने भले का विवेक हो आया था, क्योंकि मैंने संघर्ष करना शुरू कर दिया था और उसमें मेरी विजय हो रही थी। मैं इस सीख को कभी नहीं भूलूँगी कि यदि कोई परिस्थिति अजेय मालूम हो तो भी उसका सामना करो। उसके विरुद्ध संघर्ष शुरू कर दो, उसके सामने घुटने मत टेको।

मैंने अपने आपको काम में जुटा दिया। मैंने अपने सब बच्चों को अपने पास बुला लिया और नये मकान में पति के साथ रहने लगी। मैंने यह निश्चय कर लिया कि मैं अपने अच्छे परिवार के लिए एक शक्तिशाली और स्वस्थ माँ के रूप में रहूँगी। मैं अपने घर, अपने बच्चों, अपने पति और अपने अन्य कुटुंबियों के लिए योजनाएँ बनाने में व्यस्त रहने लगी। अपने बारे में सोचने का मेरे पास समय ही नहीं था। इस प्रकार वह चमत्कारी घटना घटित हुई।

मैं दिनोदिन शक्तिशाली बनती गई। मैं रोज अपने कुटुंब की भलाई करने, आनेवाले दिनों के लिए आयोजन गढ़ने तथा जीवन के आनंद के साथ जागती। यद्यपि बाद में भी यदा-कदा निराशा के दिन आए थे, विशेषकर जबकि मैं थक जाती थी, तथापि अब मैं अपने उन दिनों के संबंध में कभी विचार अथवा मनन करने का प्रयास नहीं करती। धीरे-धीरे कठिनाइयों के विचार कम होते गये और अंत में अपने आप विलीन हो गये।

तब से, एक साल बीत गया है, मेरे पति सुखी और सफल व्यक्ति हैं मेरा एक सुंदर घर है। मैं दिन में सोलह घंटे काम करती हूँ। मेरे तीन स्वस्थ और प्रसन्नचित्त बच्चे हैं और मेरा जीवन शांतिमय एवं सुखी है। (श्रीमती जॉन

बर्जर)

❑

सार-संक्षेप

यदि आप चिंता से दूर रहना चाहते हैं तो वही कीजिये जो सर विलियम ऑसलर ने किया था अर्थात् 'आज की परिधि में रहिये।' भविष्य की चिंता मत कीजिये। रोज नई जिंदगी का श्रीगणेश कीजिये।

यदि चिंता आपको लाचार करे तो विलियम एच. कैरियर के सूत्र का प्रयोग कीजिए-

(क) मन-ही -मन प्रश्न कीजिये कि समस्या का समाधान न मिलने से क्या अनिष्ट हो सकता है।

(ख) यदि आवश्यक हो तो मन में अनिष्ट को स्वीकार कर लीजिये।

(ग) शांत चित्त से मन-ही-मन स्वीकृत उस अनिष्ट को सुधारने का प्रयास कीजिये।

चिंता के कारण स्वास्थ्य के रूप में जो भारी मूल्य आपको चुकाना पड़े, उसका खयाल रखिये। जो व्यवसायी चिंता से लड़ना नहीं जानते उन्हें अकाल मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है।

चिंता पर विजय पाने के सिद्धांतों पर प्रभुत्व पाने के लिए अपने में एक गहन प्रेरक शक्ति का विकास कीजिये।

अपने मस्तिष्क में शांति, स्वास्थ्य और आशा के विचार रखिए। हमारा जीवन वैसा ही होता है, जैसा हमारे विचार उसे बनाते हैं।

जैसे के साथ तैसा करके हानि मत उठाइए। इससे आप अपना ही अहित करेंगे, अपने शत्रुओं का नहीं। जनरल आइजनहॉवर की तरह आचरण कीजिए और जो अवज्ञा के पात्र हैं, उनके संबंध से विचार करने में एक क्षण भी नष्ट न कीजिए।

दूसरों की कृतज्ञता को लेकर दु:खी न होकर उसकी उपेक्षा कर दीजिए। स्मरण रखिए कि ईसा ने एक दिन में दस कोढ़ियों का उपचार किया था, किंतु केवल एक कोढ़ी ने ही उन्हें धन्यवाद दिया। जितनी कृतज्ञता ईसा के सामने प्रकट की गई, उससे अधिक की आशा हम क्यों करें?

स्मरण रखिए, उपकार से मिलने वाले आनंद के लिए उपकार कीजिए। दूसरों से कृतज्ञता पाने की चिंता न कीजिए। सुख प्राप्ति का यही एक उपाय है।

कृतज्ञता का भाव अभ्यास से विकसित होता है, इसलिए यदि आप चाहें कि आपके बच्चे कृतज्ञता का भाव अपनाएँ तो आप उन्हें कृतज्ञता प्रकट करने के लिए शिक्षित कीजिए।

अपनी नियामतों को याद रखिये, दु:खों को नहीं।

दूसरों की नकल मत कीजिए। अपने आपको पहचानिए और जो आप हैं, वही बने रहिए, क्योंकि स्पर्धा का दूसरा नाम अज्ञान है और नकल का आत्महत्या।

यदि भाग्य में खटास मिले तो उसे मिठास में बदल लीजिए।

दूसरों को सुख देने का प्रयास करके अपना दु:ख भूल जाइए। दूसरों के प्रति भले बनकर ही आप अपने प्रति श्रेष्ठ बन सकते हैं।

व्यस्त रहकर चिंताओं के जमघट को दिमाग से बाहर रखिये। खूब काम कीजिए। घुल-घुलकर जीनेवालों के लिए यह सर्वोत्तम औषधि है।

तुच्छ बातों पर सिर मत धुनिये। तुच्छ बातें जीवन की दीमक हैं। उनको लेकर जीवन का सुख नष्ट मत कीजिए।

औसत नियम का प्रयोग कीजिए, चिंताओं को भगाइये। मन ही मन सोचिये, यदि कुछ हुआ तो क्या विपत्ति आ सकती है?

होनी के साथ सहयोग कीजिये। यदि आप परिस्थितियों को बदल नहीं सकते, उनमें संशोधन नहीं कर सकते तो

कहिये - ठीक है - है सो है, बदला नहीं जा सकता।

अपनी चिंताओं को सीमित कीजिए। उनका मूल्य निश्चित कीजिए, अधिक मूल्य न दीजिये। बीती ताहि बिसारि दे, आगे की सुध लेय।

❑❑❑